श्रीकुरुगंटि श्रीरामशास्त्रिविरचितम्

पारिभाषिक पदार्थ-संग्रहः

डॉ० विजय शर्मा

पारिभाषिक

...र्थ-संग्रहः

भारतीय विद्या संस्थान

श्रीकुरुगंटि श्रीरामशास्त्रिविरचितम्

पारिभाषिक पदार्थ-संग्रहः

सम्पादकः भूमिकालेखकश्च

डॉ० विजय शर्मा

एम०ए० (संस्कृत), आचार्य (मीमांसा), पी-एच० डी०
प्रवक्ता
श्री वेङ्कटेश पराङ्कुश संस्कृत महाविद्यालय
अस्सी, वाराणसी-५ (उ०प्र०)

प्रकाशक

भारतीय विद्या संस्थान

जगतगञ्ज, वाराणसी

प्रकाशक : **भारतीय विद्या संस्थान**
(प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता)
सी. २७/५९ जगतगंज, वाराणसी-२२१००२ (उ.प्र.) भारत

ISBN : 81-87415-57-6
सन् : २००४
मूल्य : रु.१००

अक्षर संयोजक :
वेङ्कटेश कम्प्यूटर कॉम्प्लेक्स
जानकीबाग कालोनी, लंका, वाराणसी-५
दूरभाष : ०५४२-२३६८६८७

भूमिका

अन्नंभट्ट द्वारा रचित तर्कसंग्रह न्याय और वैशेषिक दर्शनों का एक प्रकरण ग्रन्थ है। तर्कसंग्रहसर्वस्वम् के लेखक दर्शन, धर्मशास्त्र, व्याकरण, साहित्य आदि के प्रकाण्ड विद्वान् पं० श्रीरामशास्त्री कुरुंगटि हैं। इनकी प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं— १. दीपिकासर्वस्वम्, २. पञ्चलक्षणीसर्वस्वम्, ३. मुक्तावलीसर्वस्वम्, ४. तर्कसंग्रहसर्वस्वम् आदि ।

इसमें न्याय दर्शन और वैशेषिक दर्शन के पदार्थों में से ग्रन्थकार को जो वैशेषिक दर्शन के पदार्थ अधिक तर्कसंगत हुए वे उन्हें और जो पदार्थ न्याय दर्शन के अधिक तर्कसंगत हुए, उन्हें एक साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ— पदार्थों की संख्या एकविध पदार्थ, द्विविध पदार्थ, त्रिविध पदार्थ, चतुर्विध पदार्थ, पञ्चविध पदार्थ, नवविध पदार्थ, षोडशविध पदार्थ, एकविंशतिविध पदार्थ, चतुर्विंशतिविध पदार्थ, एवं अनन्त पदार्थ स्वीकृत हैं, जिसका प्रतिपादन ग्रन्थकार ने वैशेषिक दर्शन के अनुसार किये हैं। यद्यपि ग्रन्थकार ने सरल एवं सुगम दृष्टि से इस दर्शन का प्रतिपादन करना अभीष्ट माना है, जैसा कि कार्यभेद से समवायि, असमवायि तथा निमित्तकारण का निरुपण किया है। जो द्रष्टव्य है।

	समवायि	**असमवायि**	**निमित्तकारण**
घट के प्रति	कपाल	कपालद्वयसंयोग	दण्डचक्रतीव्र-सलिलकुलालादय:
पट के प्रति	तन्तु	तन्तुसंयोग	तुरीयवेमादि
घटरूप के प्रति	घट:	कपालरूप	कालेश्वरादिदृष्टि
पटरूप के प्रति	पट:	तन्तुरूप	,, ,,
ज्ञानमात्र प्रति	आत्मा	आत्ममनस्संयोग	मनप्रभृति
शब्दजशब्द प्रति	गगन, पूर्वपूर्व शब्द	—	पवन प्रभृति इत्यादि।

इसी प्रकार फल के भेद से व्यापारकरण का भी निरूपण सरलरूपेण प्रस्तुत किया गया है—

फल	**व्यापार**	**करण**
प्रत्यक्ष	इन्द्रियार्थसन्निकर्ष	षड्विध इन्द्रियाँ
चाक्षुष प्रत्यक्ष	चक्षुविषय संयोग	चक्षुरिन्द्रिय

त्वाच प्रत्यक्ष	त्वगिन्द्रिय विषय संयोग	त्वगिन्द्रिय
रासन प्रत्यक्ष	रसनमनसंयोग	रसनेन्द्रिय
घ्राणज प्रत्यक्ष	घ्राणमन संयोग	घ्राणेन्द्रिय
श्रावण प्रत्यक्ष	श्रोत्रमन संयोग	श्रोत्रेन्द्रिय
मानस प्रत्यक्ष	आत्ममन संयोग	मनेन्द्रिय
अनुमिति	परामर्श	व्याप्तिज्ञान
उपमिति	अतिदेशवाक्यार्थ स्मरण	अतिवाक्यार्थज्ञान
शाब्दबोध	पदार्थ उपस्थिति	वृत्तिज्ञान सह पदार्थज्ञान
घट	भ्रमण	दण्ड
पट	कपालद्वय संयोग	कपाल
स्मृति	भावनाख्य संस्कार	अनुभव:

इत्यादि विस्तृत रूप से निरूपण किया गया है। और उनके विभाजन वैशेषिक दर्शन के अनुसार किये गये हैं। इसमें भी सात पदार्थ माने गये हैं। जिनमें द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय— ये छ: भावात्मक हैं और सातवाँ अभाव स्वरूप है; किन्तु प्रमाणों का प्रमाण के विषय में ग्रन्थकार ने न्याय दर्शन के मत को प्रस्तुत किया है जिसके अनुसार प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द— ये चार प्रमाण हैं। वैशेषिक दर्शन के अनुसार तो केवल दो ही प्रमाण प्रारम्भ में मान्य थे— १. प्रत्यक्ष और २. अनुमान।

यद्यपि प्रमाणों की संख्या के विषय में विद्वानों में मत वैभिन्य है। चार्वाक केवल प्रत्यक्ष को प्रमाण मानते हैं। प्रत्यक्ष और अनुमान दो प्रमाण कणाद मानते हैं। सांख्य दर्शन- प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द आदि तीन प्रमाण स्वीकार करते है। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान शब्द चर प्रमाण न्याय दर्शन में स्वीकृत है। मीमांसा दर्शन में छ प्रमाण- प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान शब्द, अर्थापत्ति, अनुपलब्धि मानते हैं। पौराणिक-सम्भव और ऐतिह्य को लेकर आठ प्रमाण मानते हैं। भरत-सम्भव ऐतिह्य और चेष्टा के साथ नव प्रमाण स्वीकार करते हैं। परन्तु यहाँ चतुर्विध प्रमाण ही द्रष्टव्य है।

शाब्दबोध प्रक्रिया में विभक्तियों का भी समुचित प्रयोग समुपलब्ध है। यथा– द्वितीया विभक्ति अर्थ विचार, तृतीया विभक्ति अर्थ विचार, चतुर्थी विभक्ति अर्थ विचार, पञ्चमी विभक्ति अर्थ विचार, षष्ठ विभक्ति अर्थ विचार, सप्तम विभक्ति अर्थ विचार, अव्यय अर्थ विचार।

परवर्ती वैशेषिकों ने शब्द को ही प्रमाण मान लिया, किन्तु उपमान को स्वतंत्र प्रमाण की मान्यता वैशेषिक दर्शन में कभी नहीं दी गयी। इस प्रकार स्पष्ट है कि ग्रन्थकार को जिस पदार्थ के बारे में उक्त दोनों दर्शनों में से जिसका मत उत्कष्ट प्रतीत हुआ; उसको ही तर्कसंग्रह में प्रस्तुत किया गया।

न्याय और वैशेषिक दर्शन पर अनेक प्रकरण ग्रन्थ लिखे गये। कुछ ऐसे प्रकरण ग्रन्थ हैं; जिनमें केवल न्याय दर्शन को मान्यता दी गयी है। कुछ ऐसे प्रकरण ग्रन्थ हैं; जिनमें केवल वैशेषिक मत का ही संक्षेप में वर्णन किया गया है। इनसे भिन्न कुछ तीसरे प्रकार के प्रकरण ग्रन्थ हैं, जिनमें दोनों दर्शनों के अधिक तर्कसंगत विषयों को मिलाकर विवेचन किया गया। तीसरे वर्ग के प्रकरण ग्रन्थ के भी दो प्रकार हैं— १. न्यायदर्शनप्रधान और २. वैशेषिक दर्शनप्रधान। उदाहरणार्थ— केशवमिश्र की तर्कभाषा को लिया जा सकता है। इसमें प्रधानता न्याय दर्शन को दी गयी है, किन्तु अर्थ नामक प्रमेय के अन्तर्गत वैशेषिक को उपर्युक्त छ: भाव पदार्थों का भी विवेचन उपलब्ध है। तर्कसंग्रह तर्कभाषा से भिन्न वैशेषिक दर्शन प्रधान प्रकरण ग्रन्थ है, क्योंकि आदि से अन्त तक इसका अध्ययन करने पर यह स्पष्ट रूप से प्रतीत हो जाता है कि इसमें वैशेषिक दर्शनों को प्रधानता दी गयी है।

सभी प्रकार के न्याय-वैशेषिकसम्बद्ध प्रकरण ग्रन्थों में तर्कसंग्रह चिरकाल से विद्वत् समाज में सर्वाधिक प्रतिष्ठित रहा है। इसलिए इसके ऊपर अनेक विद्वानों ने अपनी-अपनी टीकायें लिखीं। एक तर्कदीपिका नाम की टीका तो स्वयं ग्रन्थकार ने लिखी है। जो तर्कसंग्रह पर उपलब्ध कुछ प्रतिष्ठित टीकाओं में अन्यतम है, पश्चात् गोवर्द्धन नाम के विद्वान् ने एक न्यायबोधिनी नाम की टीका लिखी। इसकी शैली नव्य-न्याय वाली है। यह टीका भी पण्डित समाज द्वारा बहुत समादृत है। इनके अतिरिक्त भी नीलकण्ठ आदि की टीकायें मुद्रित और प्रकाशित हैं। इस छोटे से प्रकरण ग्रन्थ पर इतने प्रतिष्ठित विद्वानों द्वारा चिरकाल से अनेक टीकाओं की रचना से यह प्रमाणित है कि न्याय-वैशेषिक दर्शन के अनेक प्रकरण ग्रन्थों में तर्कसंग्रह का महत्त्व सर्वाधिक है।

प्रस्तुत तर्कसंग्रहसर्वस्व पण्डित श्रीरामशास्त्रि कुरुगंटि की रचना है। यह कहने के लिए तो तर्कसंग्रह की टीका है, जैसा ग्रन्थकार ने भी प्रारम्भ में कहा है, किन्तु यह तर्कसंग्रह की पंक्तियों की अक्षरानुसारी टीका नहीं है। अपितु तर्कसंग्रह में प्रयुक्त जो पदार्थ हैं, उनका इसमें (तर्कसंग्रह में) उद्देश किया गया है। उन पदार्थों और उनके साथ संबद्ध अन्य पदार्थों के स्वरूप का न्याय शास्त्र की मान्यता के अनुसार विवरण और विश्लेषण किया गया है। शैली आवश्यकतानुसार सरल भी है और नव्य न्याय की शैली का भी पूर्ण उपयोग किया गया है। यद्यपि ग्रन्थकार इसे जिज्ञासुओं के लिए सुबोध कहते हैं, किन्तु समग्र गन्थ के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता। अधिकतर पदार्थों का विवेचन नव्य-न्याय की जटिल शैली में किया गया है जो वर्तमान शैली में प्रचलित ह्रासोन्मुख अध्यापन के अनुसार कथमपि सुबोध नहीं है। विशेषत: सामान्य कोटि के छात्रों के लिए कुछ विषय तो ऐसे हैं जिनका न्यायशास्त्र से सम्बन्ध होने पर भी तर्कसंग्रह जैसे सरल ग्रन्थ के साथ उन्हें संयोजित करना मूल ग्रन्थ के साथ और इसके अध्येताओं के साथ भी औचित्यपूर्ण नहीं माना जा सकता,

किन्तु जिन पारिभाषिक विषयों का इस तर्कसंग्रहसर्वस्व में विवेचन किया गया है वे सब शास्त्रीय और न्याय-वैशेषिक दर्शन के अन्तर्गत है।

प्रसंगवशात् स्थान-स्थान पर दूसरे शास्त्रों के मतों को भी प्रस्तुत किया गया है। ज्ञानों की दृष्टि से इनकी आलोचना नहीं की जा सकती, किन्तु प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करने वाले तर्कसंग्रह के अध्येताओं के लिए इन विषयों के विवेचन की कितनी उपयोगिता है। यह स्वयं विद्वान् पाठक निर्णय करेंगे। इसके अन्त में कुछ धर्मशास्त्र सम्बन्धी चर्चा भी है जिसका तर्कसंग्रह के साथ कोई साक्षात् सम्बन्ध नहीं, किन्तु इसके अन्त में चूँकि प्रथम संस्करण में वह भी संलग्न था इसलिए इस संस्करण में भी उसे यथापूर्व रख दिया।

जिन विद्वानों का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से ग्रन्थ में उपयोग किया गया है, उन्हें सप्रेम अभिवन्दन तथा त्रुटियों को अवगत कराने की कृपाकांक्षी। अन्त में भारतीय संस्कृति के संवाहक सहृदयग्राही प्रकाशक श्री कुलदीप जी जैन को सस्नेह साधुवाद।

विश्वास है कि इस दुर्लभ कृति के प्रकाशन से न्याय-वैशेषिक और अन्य दर्शन के अध्येताओं का यथासंभव उपकार होगा और वे इस प्रकाशन को प्रसन्नता के साथ स्वीकार करेंगे। मनुरागगत स्वाभाविक दोष के कारण अनेक दोष हो सकते हैं जो विद्वान प्रमाण करेंगें।

गच्छतस्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः॥

विजयादशमी,
वि०सं० २०६१

—विदुषाञ्चरणचञ्चरीकः
विजय शर्मा

विषयानुक्रमणिका

विषयः	पृष्ठ संख्या
पर्यायशब्दाः	१
द्रव्यभेदेन गुणविभागः	४
द्रव्यभेदेन विशेषगुणविभागः	४
द्रव्यभेदेन सामान्यगुणविभागः	५
मूर्तवृत्तिगुणनिरूपणम्	५
अमूर्तवृत्तिगुणनिरूपणम्	५
उभयवृत्ति गुणनिरूपणम्	६
द्वीन्द्रियग्राह्य गुणनिरूपणम्	६
ब्राह्यैकैकेन्द्रियग्राह्य गुणनिरूपणम्	६
अतीन्द्रिय गुणनिरूपणम्	६
अनेकाश्रित गुणनिरूपणम्	६
एकैकद्रव्यवृत्ति गुणनिरूपणम्	६
कारणगुणोत्पन्न गुणनिरूपणम्	६
अकारणोगुणोत्पन्न गुणनिरूपणम्	६
समवायिकारण निरूपणम्	६
असमवायिकारण निरूपणम्	७
निमित्तकारण निरूपणम्	७
असमवायिनिमित्तकारणता द्वयविशिष्टवस्तुनिरूपणम्	७
अवच्छेदकतया	७
धर्मावच्छिन्नपदार्थ निरूपणम्	८
सम्बन्धावच्छिन्नपदार्थ निरूपणम्	८
सम्बन्धानवच्छिन्नपदार्थ निरूपणम्	८
केवलान्वयिपदार्थ निरूपणम्	८
व्यतिरेकिपदार्थ निरूपणम्	८
व्याप्यवृत्तिपदार्थ निरूपणम्	८

विषयः	पृष्ठ संख्या
अव्याप्यवृत्तिपदार्थ निरूपणम्	९
नित्यपदार्थ निरूपणम्	९
कार्यभेदेन समवाय्यसमवायिनिमित्तकारण निरूपणम्	९
फलभेदेन व्यापारकरणनिरूपणम्	१०
मतभेदेन प्रमाणनिरूपणम्	११
अस्मिन्मतेप्रमाणचतुष्टयावश्यकतानिरूपणम्	११
व्याप्यव्यापकनिरूपणम्	१२
पक्षसाध्यहेतुनिरुपणम्	१२
प्रकारविशेष्यनिरूपणम्	१२
कार्यतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्	१३
कारणतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्	१३
लक्ष्यतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्	१३
साध्यसाधनतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्	१४
व्याप्यव्यापकतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्	१४
आधेयतावच्छेदक सम्बन्धनिरूपणम्	१४
प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्धनिरूपणम्	१४
साध्यतावच्छेदक सम्बन्धनिरूपणम्	१५
एकविधपदार्थनिरूपणम्	१५
द्विविधपदार्थनिरूपणम्	१५
त्रिविधिवस्तुनिरूपणम्	१९
चतुर्विधपदार्थ निरूपणम्	२१
पञ्चविधपदार्थनिरूपणम्	२२
षड्विधपदार्थ निरूपणम्	२२
जातिवाधकषट्कम्	२२
सप्तविधपदार्थ निरूपणम्	२२
नवविधपदार्थ निरूपणम्	२२
षोडशपदार्थ निरूपणम्	२३
एकविंशतिविध पदार्थनिरूपणम्	२३
चतुर्विंशतिविधपदार्थनिरूपणम्	२३

विषयः	पृष्ठ संख्या
अनन्तपदार्थनिरूपणम्	२३
परिष्कार	२४
चक्षुर्ग्राह्यपदार्थ निरूपणम्	२८
त्वगिन्द्रियग्राह्य पदार्थ निरूपणम्	२८
रसनेन्द्रियग्राह्यपदार्थनिरूपणम्	२९
घ्राणेन्द्रियग्राह्यपदार्थनिरूपणम्	२९
श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यपदार्थनिरूपणम्	२९
मनोग्राह्यपदार्थनिरूपणम्	२९
अभावनिरूपणम्	३०
वृत्तिनियामकसम्बन्ध निरूपणम्	३०
वृत्त्यनियामकसम्बन्धनिरूपणम्	३१
लक्षणदोषनिरूपणम्	३१
हेतुदोषनिरूपणम्	३२
सर्वेषां च पदार्थानां क्लृप्तपदार्थेष्वन्तर्भावप्रकार:	३३
भावरूपाभावनिरूपणम्	३३
ज्ञायमानस्य कारणत्वप्रतिबन्धकत्वनिरास:	३४
कार्यकारणभाव विचार:	३६
प्रतिबध्यप्रतिबन्धकभावविचार:	३९
विषयताविचार:	४०
क्रमेण प्रत्यक्षादिप्रमाणचतुष्टयनिरूपणम् संगतिनिरूपणम्	४१
शाब्दबोधविचार:	४३
अवच्छिन्ननिरवच्छिन्नविषयताविचार:	४३
विभक्त्यर्थ विचार:	४४
द्वितीयाविभक्त्यर्थविचार:	४४
तृतीयाविभक्त्यर्थविचार:	४५
चतुर्थीविभक्त्यर्थविचार:	४६
एवमन्यत्रापि चतुर्थ्यर्थोज्ञेय:	४६
पञ्चमीविभक्त्यर्थविचार:	४७
एवमन्यत्रापि पञ्चम्यर्था विज्ञेया:	४७

विषयः	पृष्ठ संख्या
षष्टीविभक्त्यर्थविचारः	४७
सप्तमविभक्त्यर्थविचारः	४८
एवमेवान्यत्रापि सन्दर्भभेदेन सप्तम्यर्था निर्नेयाः	४९
अव्ययार्थविचारः	४९
क्रियाविशेषणस्थले शाब्दबोधविचारः	५१
जगदाविर्भावविषये मतभेदाः	५१
प्रत्यक्षादिप्रमाणैः पदार्थसिद्धिविचारः	५१
अथजातिसिद्धिर्निरूप्यते	५९
एवकारविचारः	६७
परिशिष्ट–	
(अन्यः)एवकारविचार	६९

।। श्रीशिवाय गुरुवे नमः ।।

पारिभाषिकपदार्थसंग्रहः

श्रीन्यायाम्बुधि मन्थनोत्थित महाविज्ञानधारासुधा
धाराधारतयाऽतिधीर हृदय स्याद्वैतविद्याम्बुधेः।
वेमूर्यन्वय वार्धि पूर्णशशिनस्सौजन्यवारान्निधेः
रामब्रह्मसुधीन्द्र देशिकमणेः पादाब्जसेवारतः।।
श्रीराम शास्त्री कुरुगंटि वंश्यः श्रीसूर्यनारायण सूरि सूनुः।
ग्रन्थस्य निर्विघ्नसमाप्तयेऽस्य भजत्यजस्रं गिरीशं गणेशम्।।

तत्र पर्यायशब्दाः

पदार्था अभिधेयाः प्रमेयाः ज्ञेयाः इत्यादयः पर्यायशब्दाः। द्रव्यं गुणी गुणवान् कर्मवान् क्रियावान् इत्यादयः। कर्म क्रिया चलनं स्पंदनं स्पंदः इत्यादयः। जाति सामान्यं इत्यादयः। प्रध्वंसाभावः ध्वंसः नाशः विनाशः निवृत्तिः इत्यादयः। अत्यन्ताभावः रहितत्वं शून्यत्वं इत्यादयः। अन्योन्याभावः भेदः भिन्नत्वं अन्यत्वं इतरत्वं भेदवत्वं इत्यादयः। ज्ञानं बुद्धिः बोधः संवित् धीः ग्रहः प्रत्ययः प्रतीतिः इत्यादयः। भ्रमः अयथार्थानुभवः अप्रमा इत्यादयः। स्वरूपसम्बन्धः दैशिकविशेषणतासम्बन्धः इत्यादयः। कालिकसम्बन्धः कालिकविशेषणतासम्बन्धः इत्यादयः। दैशिकसम्बन्धः दिक्कृतविशेषणतासम्बन्धः इत्यादयः। कालिकसम्बन्ध दैशिकसम्बन्धरूप सम्बन्धद्वयमपि सर्वाधारताप्रयोजकसम्बन्धत्वेन व्यवह्रियते। अनुमानं व्याप्तिज्ञानं इत्यादयः। प्रत्यक्षं प्रत्यक्षप्रमाणं इन्द्रियं इत्यादयः। पदं शब्दः इति। निश्चितहेतुसाध्यवान् दृष्टान्तः अन्वय दृष्टान्तः अयमेवान्यय्युदाहरणमिति चोच्यते, अनुमेव साध्यनिश्चयास्पदत्यमात्रमुपादायापि क्वचित्सपक्षत्वेन व्यवहरन्ति। निश्चितसाध्याभावहेत्वभाववान् दृष्टान्तः व्यतिरेकदृष्टान्तः, अयमेय व्यतिरेक्युदाहरणमित्युच्यते। अस्यैव साध्याभावनिश्चयगोचरत्वमात्रमप्युपादाय क्वचिद्विपक्षत्वव्यबहारः। साधनं साधकं लिङ्गं हेतुः इत्यादयः। आधारत्वं आधारता आश्रयत्वं आश्रयता अधिकरणत्वं अधिकरणता

ष्ठत्वं तद्वर्तमानत्वं तद्विद्यमानत्वं तदधिकरणकत्वं तदधिकरणताकत्वं तन्निष्ठाधि-करणतानिरूपकत्वं तदाश्रयकत्वं तदाधारकत्वं इत्यादयः। तद्विषयकत्वं तद्विषय-ताकत्वं तन्निष्ठविषयतानिरूपकत्वं तद्विषयित्वं तन्निष्ठविषयतानिरूपित विषयित्वं तद्विषयताशालित्वं तद्वगाहित्वं तद्गोचरत्वं इत्यादयः। तद्विशेष्यकत्वं तद्विशेष्यताकत्वं तन्निष्ठविशेष्यतानिरूपकत्वं तद्विशषयित्वं तन्निष्ठविशेष्यतानिरूपितविष्यित्वं तद्विशे-षयताशालित्वं इत्यादयः। तत्प्रकारकत्वं तन्निष्ठप्रकारताकत्वं तन्निष्ठप्रकारतानि रूपकत्वं तत्प्रकारित्वं तन्निष्ठप्रकारतानिरूपितप्रकारित्वं तन्निष्ठप्रकारताशालित्वं इत्या-दयः। तत्संसर्गकत्वं तन्निष्ठसंसर्गताकत्वं तन्निष्ठसंसर्गतानिरूपकत्वं तत्संसर्गित्वं तन्निष्ठसंसर्गतानिरूपितसंसर्गित्वं तन्निष्ठसंसर्गताशालित्वं इत्यादयः। तत्प्रतियोगिकत्वं तत्प्रतियोगिताकत्वं तन्निष्ठप्रतियोगितानिरूपकत्वं तदनुयोगिकत्वं तदनुयोगिताकत्वं तन्निष्ठानुयोगितानिरूपकत्वं इति। कार्यत्वं जन्यत्वं हेतुमत्वं प्रयोज्यत्वम् इति। परन्तु व्यवहितकार्ये प्रयोज्यता व्यवहार्या। कारणत्य जनकत्वं हेतुत्वं प्रयोजकत्वं इत्यादयः। परन्तु व्यवहित कारणे प्रयोजकता व्यवहार्या । तद्ग्राहकत्वं तत्प्रत्यक्ष जनकत्वं तदुपलम्भकत्वं इत्यादयः। तत्प्रत्यक्षत्वं तत्साक्षात्कृतत्वं तद्ग्राह्यत्वं तज्जन्यप्रत्यक्षविषयत्वं तदुपलब्धत्वं इत्यादयः। अनुमितत्वं अनुमितिविषयत्वं इत्यादयः। चाक्षुपत्यं चक्षुरिन्द्रियजन्यप्रत्यक्षविषयत्वं चक्षुर्ग्राह्यत्वं इत्यादयः। श्रावण-त्वं श्रवर्णेद्रियजन्य प्रत्यक्षविषयत्वं श्रोत्र्यग्राह्यत्वं इत्यादयः। एवं रासनत्वादिकं ग्राह्यम्, एवं चाक्षुषादि शब्दानां चक्षुरिन्द्रियादिजन्य प्रत्यक्षवोधकत्वमपि बोध्यम् । समवेतत्वं समवायसम्बन्धावच्छिन्न वृत्तित्वं इत्यादयः। ईश्वरीयज्ञानं ईश्वरवृत्तिज्ञान-मित्यादयः। प्रकृत्यर्थे प्रकारीभूतधर्मो भावप्रत्ययार्थ इतिन्यायेन तद्वत्वं तद्विशिष्टत्वं तद्युक्तत्वंच तदेव यथागन्धवत्वं गन्धविशिष्ठत्वं गन्धयुक्तत्वं च गन्ध एव। सामानाधिकरण्य ऐकाधिकरण्य एकाधिकरण वृत्तित्व समानाधिकरणत्वंचेति। असामानाधिकरण्यं वैयधिकरण्यं विरोधः विरुद्धत्व एकाधिकरणवृत्तित्वाभावः एकाधिकरणावृत्तित्व व्यधिकरणत्व भिन्नाधिकरण कत्वप्रभृतयः। नियतत्व व्याप-कत्व। घटाभावः घटत्वावच्छिन्नप्रतियागितानिरूपकाभावः घटप्रतियोगिकाभावः। समवायसम्बन्धेनघटाभावः समवायसम्बन्धावाचिछन्नघटत्वावच्छिन्नप्रतियोगितानि-रूपकाभावः इति। घटसामान्याभावः घटत्वातिरिक्तधर्मानवच्छिन्नप्रतियोगितानि-रूपकाभावः इति। घटाधिकरण घटवत् घटत्वावच्छिन्नाधेयता निरूपिताधिकरणता-वत् इति। संयोगसम्बन्धेन घटाधिकरणं संयोगसम्बन्धेनघटवत् संयोगसम्बन्धा-वच्छिन्नघटत्वावच्छिन्नाधेयतानिरूपिताधिऽकरणतावदिति । वाच्यत्वं अभिधेयत्वं-

चेति। सव्यभिचारः अनैकान्तिकः व्यभिचारीति। कालात्ययापदिष्टः बाधितः इति। आश्रयासिद्धिः पक्षाप्रसिद्धिः इति। तादात्म्यसम्बन्ध अभेदसम्बन्धः इति। तदवच्छेद्यत्वं तदवच्छिन्नत्वं तन्निष्ठावच्छेदकताकत्वं तन्निष्ठावच्छेदकतानिरूपकत्वंचेति। निरूप्यत्वं निरूपितत्वमिति। अतीन्द्रियत्वं इन्द्रियाग्राह्यत्वं इन्द्रियजन्यप्रत्यक्षाविषयत्वमिति। वारणं निवारणमिति। नाम वस्तुप्रतिपादकशब्द इति। ईश्वरसंकेतः ईश्वरेच्छा शक्ति अभिधा इति। लक्षणा शक्यसम्बन्ध इति। इष्टं इच्छाविषयः। द्विष्टं द्वेषविषयः! कार्यकारणभावः जन्यजनकभावः हेतुहेतुमद्भावः साध्यसाधन भावः इति। असद्धेतुः दुष्टहेतुः हेत्वाभासः इति। उपादानं समवायिकारणं इति।

घटावच्छिन्नभेदः घटवद्भेदः घटवान्नेतिप्रतीतिसिद्धभेदः घटत्वावच्छिन्ना-वच्छेदकताकप्रतियोगिताकभेदः इति। तुरीयविषयता चतुर्थविषयता चेति। प्रतियोगित्वं अभावाभावत्वमिति। प्रत्यक्षं अपरोक्षं साक्षात्कारः उपलब्धि अध्यक्षं उपलम्भः इति। अनुमान अनुमितिरिति। उपमा उपमितिरिति। शाब्दबोधः शाब्दज्ञानं शाब्द बुद्धिः अन्वयबोधः वाक्यार्थ बोधः वाक्यार्थज्ञानमित्यादयः। व्यवहारः शब्दप्रयोगः इति। स्मृतिः स्मरणमिति। निर्णयः निश्चय इति। प्रत्यक्षः प्रत्यक्षज्ञानविषयः अपरोक्ष-ज्ञानविषयः साक्षात्कृतः साक्षात्कारविषयः उपलब्धः उपलब्धि विषय इति। अभा-वीयत्वं अभावनिरूपितत्वं इति। ज्ञानीयत्वं ज्ञाननिरूपितत्वमिति। संयोगसम्बन्धेन घटवान्नेतिप्रतीतिसिद्धभेदः संयोगसम्बन्धावच्छिन्न घटत्वावच्छिन्नावच्छेदकताक प्रति-योगिताकभेदः इति। घटसम्बन्धिघटत्वावच्छिन्न संबद्धतानिरूपित सम्बन्धिताव-दिति। संयोगसम्बन्धेन घटसम्बन्धि संयोगसम्बन्धावच्छिन्न घटत्वावच्छिन्न सम्ब-द्धतानिरूपितसम्बन्धितावदिति। संसर्गः सम्बन्ध इति। प्रतिपाद्यः प्रतीतिविषयः गम्य इति। घटसाधारणकारणं घटत्वावच्छिन्नकार्यतानिरूपितकारणताबदिति। घटा-नधिकरणत्वं घटाधिकरणत्वाभावः घटाधिकरणभिन्नत्वमिति। भूतलावृत्तित्वं भूतलनिरूपितवृत्तित्वाभाव इति! व्यतिरेकः अभाव इति। परजातिः व्यापकजाति रिति। सादित्वं कार्यत्वं उत्पत्तिमत्वं प्रागभावप्रतियोगित्वमिति। अनादित्वं उत्पत्तिश् न्यत्वं प्रागभावाप्रतियोगित्वमिति। सांतत्वं नाशवत्वं ध्वंसवत्वं ध्वंसप्रतियोगित्वं नाशप्रतियोगित्वमिति। अनन्तत्वं ध्वंसशून्यत्वं नाशशून्यत्वं ध्वंसाप्रतियोगित्वमिति। नित्यत्वं ध्यंसाप्रतियोगित्वे सति प्रागभावाप्रतियोगित्वमिति। साध्यवद्व्यावृत्तः साध्यवद्वृत्तिः साध्यवन्निरूपितवृत्तित्वाभाववानिति। कार्यं फलमिति। द्वारं व्यापार इति। फलितं पर्यवसन्नमिति। असाधारणधर्मः लक्षणमिति। संडप्रत्यः अवांतरप्रत्य इति। पीलबः परमाणव इति। निष्कर्षः परिष्कार इति। परमात्मा ईश्वर इति।

रूपं वर्णं इति। मानं परिमाणमिति। सुखं आनन्द इति। इच्छा काम इति। क्रोधः द्वेष इति। कृतिः प्रयत्नः कर्तृत्वमिति। पाकः विजातीयतेजस्संयोग इति। उष्णत्वं उष्णस्पर्श इति। शीतत्वं शीतस्पर्श इति। सहचारग्रहः सामानाधिकरण्यज्ञानमिति। प्रत्यासत्तिः सन्निकर्ष इति। संदेहः संशयः शंका इति।

****

द्रव्यभेदेन गुणविभागः

अधिकरणद्रव्याणि।	**आधेयगुणाः।**
पृथिवी-	क्रमेण रूपादिद्रवत्वांनां वेगश्चेति चतुर्दशगुणाः।
जलं-	मध्ये गन्धं विहाय रूपादिद्रवत्वांता द्वादश स्नेहवेगौचेति। चतुर्दशगुणाः।
तेजः-	स्पर्शाद्यपरत्वांता अष्टौ रूपवेगद्रवत्वानीत्येकादशगुणाः।
वायुः-	स्पर्शाद्यपरत्वांता अष्टौ वेगश्चेति नवगुणाः।
आकाशं-	संख्यादि विभागांतपञ्चकं शब्दश्चेति षड्गुणाः।
कालः-	संख्यादि विभागांताः पञ्च गुणाः।
दिक्-	संख्यादि विभागांताः पञ्च गुणाः।
जीवात्मा-	संख्यादिपञ्चकं बुद्ध्यादिसंस्कारांता नवेति चतुर्दश गुणाः।
परमात्मा-	संख्यादि पञ्चकं ज्ञानेच्छा कृतयश्चेत्यष्टौ गुणाः।
मनः-	संख्याद्यपरत्वांतास्सप्त वेगश्चेत्यष्टौ गुणाः।

अमुमेवार्धं बोधयन् श्लोकश्च दृश्यते।।

वायोर्नवैकादश तेजसो गुणाः जलक्षितिप्राणभृतां चतुर्दश।
दिक्कालयोः पञ्च षडेवचाम्बरे महेश्वरेष्टौ मनसस्तथैवच।। इति।

गुणसामान्यलक्षणन्तु द्रव्यकर्मभिन्नत्वेसति सामान्यवत्वं गुणत्वजातिमत्वंवा बोध्यम्।

द्रव्यभेदेन विशेषगुणविभागः

रूपं गन्धो रसस्स्पर्शः स्नेहान्सांसिद्धिको द्रवः।
बुद्ध्यादिभावनांताश्च शब्दोवैशेषिका गुणाः। इति।

एते षोडश विशेषगुणाः।।

अधिकरणद्रव्याणि।	**आधेयविशेषगुणाः।**
पृथिवी-	रूपरसगन्धस्पर्शाश्चत्वारो विशेषगुणाः।
जलं-	रूपरसस्पर्शस्नेह सांसिद्धिकद्रवत्वानि पञ्च।
तेजः-	रूपस्पर्शौ द्वौ।
वायुः-	स्पर्श एक एव।
आकाशः-	शब्द एक एव।
जीवात्मा-	बुद्ध्यादिभावनांता नव गुणाः।
परमात्मा-	ज्ञानेच्छाकृतित्रयं ईश्वरे नित्यसुखांगीकारे चत्वारो गुणाः।

कालदिङ्मनस्तु विशेषगुणाः कोऽपि नसंतीति ज्ञेयम्

द्रव्यभेदेन सामान्यगुणविभागः।

संख्यादिरपरत्वांतो द्रवोऽसांसिद्धिकस्तथा।
गुरुत्ववेगौ सामान्य गुणा एते प्रकीर्तिताः।

एते दश सामान्यगुणाः।

अधिकरणद्रव्याणि	**आधेयसामान्यगुणाः**
पृथिवी-	निरुक्तश्लोकोक्ता दश गुणाः।
जलं-	असांसिद्धिकद्रवत्वं विहाय निरुक्तश्लोकोक्ता नव गुणाः।
तेजः-	गुरुत्वं वर्जयित्वा निरुक्तश्लोकोक्तानव गुणाः।
वायुः-	गुरुत्वासांसिद्धिकद्रवत्वे वर्जयित्वा पूर्वोक्ताष्टगुणाः।
आकाशः-	संख्यादिविभागांता पञ्च गुणाः।
कालः-	संख्यादिविभागांता पञ्च गुणाः।
दिक्-	संख्यादिविभागांता पञ्च गुणाः।
आत्मा-	संख्यादिविभागांताः पञ्च गुणाः।
मनः-	संख्यादिविभागांता पञ्च वेगश्चेति अष्टगुणाः।

मूर्तवृत्तिगुणनिरूपणम्

मूर्तगुणाः अमूर्तद्रव्यावृत्तिगुणा इत्यर्थः। मूर्तत्वञ्च क्रियाश्रयत्वं पृथिव्यप्तेजो वायुमनांसि मूर्तद्रव्याणि। रूपादिचतुष्टयं परत्वादिपञ्चकं स्थितस्थापकवेगो चेत्येकादश गुणामूर्तगुणाः।

अमूर्तवृत्तिगुणनिरूपणम्

अमूर्तगुणाः मूर्तवृत्तिगुणा इत्यर्थः। तेच शब्दादि भावनांता दश गुणाः।

उभयवृत्ति गुणनिरूपणम्

उभयगुणाः मूर्तामूर्तोभयगुणा इत्यर्थः संख्यादिविभागांताः पञ्च गुणाः।

द्वीन्द्रियग्राह्य गुणनिरूपणम्

द्वीन्द्रियग्राह्याः त्वचा चक्षुषाच ग्राह्याइत्यर्थः गुरुत्वमेकं च जीयित्वा संख्यादिस्नेहान्ता नवगुणाः।

ब्राह्यैकैकेन्द्रियग्राह्य गुणनिरूपणम्

शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः पञ्चगुणा ब्राह्यैकैकेन्द्रियग्राह्या एव भवन्ति नतु द्वीन्द्रियग्राह्या भवन्ति।

अतीन्द्रिय गुणनिरूपणम्

गुरुत्वादृष्टभावना अतींयगुणाः अत्रभावनापदम् वेगभिन्न संस्कारपरम् तथा-चातीन्द्रियगुणाः पञ्चेतिसिद्धम्।

अनेकाश्रित गुणनिरूपणम्

संयोगविभागौ द्वित्वत्रित्वादिसंख्याः द्विपृथक्त्व त्रिपृथक्त्वादय श्चानेकाश्रित गुणाः।

एकैकद्रव्यवृत्ति गुणनिरूपणम्

रूपादिचतुष्टयमेकत्वैकपृथक्त्वपरिमाणानि परत्वादिभावनान्ता गुणा एकैकद्रव्यवृत्तयः।

कारणगुणोत्पन्न गुणनिरूपणम्

अपाकजरूपादिचतुष्टयं अपाकजम्, द्रवत्वं स्नेहवेगगुरुत्वैकपृथक्त्वपरिमाण स्थितस्थापकसंस्काराः कारणगुणोत्पन्ना गुणाः।

कारणगुणोत्पन्नत्वंच स्वाश्रयसमवायिकारण वृत्तिगुणजन्यगुणत्वं यथाश्रुते बोध्यम्।

अकारणोगुणोत्पन्न गुणनिरूपणम्

शब्दादिभावनान्ता विभुविशेषगुणा अकारणगुणोत्पन्ना गुणाः अकारणगुणोत्पन्नत्वञ्चं यथाश्रुत स्वाश्रयसमवायिकारणवृत्तिगुणाजन्यगुणत्वं बोध्यम्।

समवायिकारण निरूपणम्

अबयविनं प्रत्यवयवाः स्वसम्वेतजन्यगुणं स्वसमवेतक्रियां प्रति च स्वयमेवसमवायिकारणं अतो जन्यभावमात्रे द्रव्यमेव समवायिकारणं नान्यदिति-सिद्धान्तः। मात्रपदेन ध्वन्सम्प्रतिसमवाय्य समवायिकारणे न स्त इतिध्येयम्।

असमवायिकारण निरूपणम्

रूपादिचतुष्टयैकत्व संख्यापरिमाणैकपृथक्त्वस्थितस्थापकसंस्कारस्नेहशब्दे-प्वसमवायिकारणत्वमिष्यते

निमित्तकारण निरूपणम्

बुद्धयादिभावनान्तगुणेषु सामान्यादिचतुष्टये च निमित्तकारणत्वमेव वर्तते नान्यदिति सिद्धान्तः।

असमवायिनिमित्तकारणता द्वयविशिष्टवस्तुनिरूपणम्

उष्णस्पर्श संयोग विभाग गुरुत्व द्रवत्व वेगेषु कर्मणिचासमवायिकारणत्वं निमित्तकारणत्वं च वर्तते। कालेश्वरयोस्वगत संयोगादिकं प्रति समवायिकारणत्वं कार्यमात्रं प्रति निमित्तकारणत्वं च वर्तते इति द्रव्यगुणकर्मसु समवायिकारणत्वं निमित्तकारणत्वं च तत्तत्कार्यभेदेन सम्भवति। अतः द्रव्य एव समवायिकारणत्वं गुणकर्मणोरेवासमवायिकारणत्वं द्रव्यादिसप्तपदार्थेप्वपि निमित्तकारणत्वं सम्भवतीति बोध्यम्।

निरूपणम्	निरूपकनिरूपणम्
निरूपिताः	निरूपकाः
प्रतियोगिता	अभावचतुष्टयम्
विशेष्यता प्रकारता	प्रानेच्छाकृतिसंस्कारद्वेषाः
संसर्गतारूपविषयतात्रयं	पञ्चगुणाः
अधिकरणता निरूपित	आधेयता
कारणता	कार्यता
स्वामिता	स्वता
निरूपकता	निरूप्यता
व्यापकता	व्याप्यता

अवच्छेदकतया

कार्यता कारणता आधेयता अधिकरणता विशेष्यता प्रकारता संसर्गता विषयता अवच्छेदकता लक्ष्यता लक्षणता प्रतियोगिता अनुयोगिता निरूप्यता

निरूपकता स्वता स्वमिना प्रभृतयः।

प्रकारता विशेष्यता संसर्गतानां परस्परं निरूप्य निरूपक भावो दृश्यते।

धर्मावच्छिन्नपदार्थ निरूपणम्

कार्यता कारणता आधेयता प्रतियोगिता अनुयोगिता लक्ष्यता लक्षणता व्याप्यता व्यापकता निरूप्यता निरूपकता प्रभृतयः घटादिनिष्ठा नियतं घटत्वाद्यवच्छिन्ना एव भवन्ति।

परन्तु प्रकारता विशेष्यता संसर्गता विषयता अवच्छेदकताः ज्ञानभेदेन धर्मैरवच्छिन्नास्तदनवच्छिन्नाश्च भवन्ति।

सम्बन्धावच्छिन्नपदार्थ निरूपणम्

प्रकारता प्रतियोगिता कार्यता कारणता आधेयता अवच्छेदकता व्याप्यता व्यापकता लक्षणता प्रभृतयः नियतं सम्बन्धावच्छिन्ना एव भवन्ति।

सम्बन्धानवच्छिन्नपदार्थ निरूपणम्

अनुयोगिता अधिकरणता विशेष्यता लक्ष्यता संसर्गता प्रभृतयः नियतं सम्बन्धानवच्छिन्ना एव भवन्ति।

केवलान्वयिपदार्थ निरूपणम्

स्वरूपसम्बन्धेन सर्वत्र वर्तमानत्वं अत्यन्ताभावप्रतियोगित्वं केवलान्वयित्वम्। वस्तुत्व वाच्यत्व प्रमेयत्व ज्ञेयत्व गगनाभाव कपिसंयोगाभाव व्यधिकरणसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगिताकाभाव व्यधिकरणधर्मावच्छिन्नप्रतियोगिताकभाव प्रभृतयः केवलान्वयिपदार्थाः। वाच्यत्वमीश्वेरच्छा विषयत्वं इच्छाविषत्वं वा। प्रमेयत्वमीश्वरीयप्रमाविषयत्वं प्रमाविषयत्वं वा। ज्ञेयत्वमीश्वरीयज्ञानविषयत्वं ज्ञानविषयत्वं वा। व्यधिकरणसम्बन्धावच्छिन्न प्रतियोगिताकाभावः संयोगसम्बन्धेन गुणाभावादिः। व्यधिकरण धर्मावच्छिन्न प्रतियोगिताकाभावः घटत्वेन पटाभावादिः।

व्यतिरेकिपदार्थ निरूपणम्

स्वरूपसम्बन्धेन सर्वत्रावर्तमानत्वमत्यन्ताभाव प्रतियोगित्वं वा व्यतिरेकित्वम्। तेच केवलान्वयिपदार्थभिन्नाः द्रव्यत्व गुणत्व कर्मत्व घटत्व पटत्वादयः।

व्याप्यवृत्तिपदार्थ निरूपणम्

व्याप्यवृत्तित्वं च स्वसमानाधिकरणात्यंताभावाप्रतियोगित्वम्। तच द्रव्यत्व गुणत्व कर्मत्वाभावत्व घटत्व पटत्वादयः।

अव्याप्यवृत्तिपदार्थ निरूपणम्

अव्याप्यवृत्तित्वं च स्वसमानाधिकरणान्यन्ताभावप्रतियोगित्वम्। अव्याप्यवृत्तिर्द्विविधः कालिकाव्याप्यवृत्तिः दैशिकाव्याप्य वृत्तिश्चेति। आद्यः द्रव्यं गुणः क्रिया च द्वितीयः कपिसंयोगदिः, आदिपदेन विभागो विभुविशेषगुणाश्च गृह्यते। संयोगसम्बन्धेन द्रव्यमपि। दैशिकाव्याप्यवृत्ति सर्वकालिकाव्याप्यवृत्ति भवति। नतु कालिकाव्याप्यवृत्ति सर्वदैशिकाव्याप्यवृत्ति भवति, रूपादौ व्यभिचारात्। संयोगत्वेन संयोगो व्याप्यवृत्तिरिति प्राचीनाः। सोप्यव्याप्यवृत्तिरिति नैवीनाशयः।

नित्यपदार्थ निरूपणम्

पृथिव्यप्तेजोवायुपरमाणवः आकाशादिपञ्चकं च द्रव्याणि जलादित्रयपरमाणुगतं रूपरसस्पर्शान्यतमं जलपरमाणुगतद्रवत्व स्नेहौ नित्यैकत्वपरिमाणे ईश्वरीयज्ञानेच्छाकृतयः सामान्यविशेष समवायात्यन्तान्योन्याभावाश्च नित्यपदार्थाः। शब्दबुद्ध्योर्द्विक्षणावस्थायित्वम्। अपेक्षाबुद्धिः क्षणत्रयं तिष्ठति। कर्मसर्वमप्यनित्यमेव।

कार्यभेदेन समवाय्यसमवायिनिमित्तकारण निरूपणम्

कालेश्वरादृष्टादिः कार्यमात्रंप्रति साधारण निमित्तकारणम्। आत्ममनस्संयोगादिः ज्ञानमात्रंप्रति कारणम् भवति।

	समवायिकारणम्	असमवायिकारणम्	निमित्तकारणम्
घटंप्रति	कपालं	कपालद्धयसंयोगः	दन्डचक्रसलिलकुदालादयः
पटंप्रति	तन्तवः	तन्तुसंयोगः	तुरीवेमादिकम्
अवयविनंप्रति	अवयवाः	अवयवसंयोगः	कालेश्वरादृष्टादयः
अवयविरूपंप्रति	अवयवी	अवयवरूपं	कालेश्वरादृष्टादयः
पटरूपंप्रति	पटः	तन्तुरूपम्	कालेश्वरादृष्टादयः
घटरूपंप्रति	घटः	कपालरूपम्	कालेश्वरादृष्टादयः
पार्थिवद्व्यणुकरूपंप्रति	द्व्यणुकं	परमाणुरूपम्	कालेश्वरादृष्टादयः
पार्थिवपरमाणुरूपंप्रति	परमाणुः	पाकः	कालेश्वरादृष्टादयः
संयोगजशब्दंप्रति	गगनं	भेर्याकाशसंयोगः	भेरीदन्डसंयोग प्रभृतयः
विभागजशब्दंप्रति	गगनं	वंशाकाशविभागः	कालेश्वरादृष्टादयः
शब्दजशब्दंप्रति	गगनं	पूर्वपूर्वशब्दाः	पवनप्रभृतयः
ज्ञानमात्रंप्रति	आत्मा	आत्ममनस्संयोगः	मनः प्रभृतयः
आद्यपतनंप्रति	फलादिकं	गुरुत्वं	काकागमनवायुप्रभृतयः

	समवायिकारणम्	असमवायिकारणम्	निमित्तकारणम्
द्वितीयपतनंप्रति	फलादिकम्	वेगः	कालेश्वरादृष्टादयः
कायपुस्तकसंयोगंप्रति	कायःपुस्तकञ्च	हस्तपुस्तकसंयोगः	कालेश्वरादृष्टादयः
क्रियाजन्संयोगंप्रति	पुस्तकम्	क्रिया	कालेश्वरादृष्टादयः
विभागंप्रति	हस्तपुस्तकादिकम्	क्रिया	कालेश्वरादृष्टादयः
पिठरपाकवादिमतेऽ-वयविरूपंप्रति	अवयवी	पाकः	कालेश्वरादृष्टादयः
अवयविगतरूपादि चतुष्टयंप्रति	अवयव	अवयवानिष्टरूपादि चतुष्टयं	कालेश्वरादृष्टादयः
अनित्यैकत्वंप्रति	अनित्यघटादि	अवयवगतैकत्वं	कालेश्वरादृष्टादयः
द्वित्वादिकंप्रति	आश्रयघटादिः	स्वसमानाधिकरण-यावदेकत्वानि	अपेक्षाबुद्धिप्रभृतयः
अवयविपरिमाणंप्रति	अवयवी	अवयवपरिमाणं	कालेश्वरादृष्टादयः
त्र्यणुकपरिमाणंप्रति	त्र्यणुकम्	द्यणुकगतत्रित्वम्	कालेश्वरादृष्टादयः
द्व्यणुकपरिमाणंप्रति	द्व्यणुकम्	परमाणुगतद्वित्वं	कालेश्वरादृष्टादयः
अनित्यमवयविग-तमेकपृथक्त्वंप्रति	अवयवी	अवयवगतैक पृथक्त्वम्	कालेश्वरादृष्टादयः
द्विपृथक्त्वंप्रति	आश्रयद्वयं	समानाधिकरणं नानापृथक्त्वम्	कालेश्वरादृष्टादयः

कार्यमात्रंप्रति प्रतिबंधकाभाव कार्यप्रागभावप्रभृतयोपि निमित्तकारणानीति ज्ञेयम् । एवंरीत्याऽन्यत्रापि भावकार्यस्थले कारणत्रयं ग्राह्यम्, अतो ध्वंसम्प्रति सम-वाय्यसमवायिकारणयोरभावेपि न क्षतिः।

फलभेदेन व्यापारकरणनिरूपणम्

फलं	व्यापारः	करणं
प्रत्यक्षज्ञानं	इन्द्रियार्थसन्निकर्षः	षडविधेन्द्रियाणि
चाक्षुषप्रत्यक्षं	चक्षुर्विषयसंयोगः	चक्षुरिन्द्रियम्
त्वाचप्रत्यक्षं	त्वगिन्द्रियविषयसंयोगः	त्वगिन्द्रियम्
रासनप्रत्यक्षं	रसनमनस्संयोगः	रसनेन्द्रियम्
घ्राणजप्रत्यक्षं	घ्राणमनस्संयोगः	घ्राणेन्द्रियम्
श्रावणप्रत्यक्षं	श्रोत्रमनस्संयोगः	श्रोत्रेन्द्रियम्

फलं	व्यापारः	करणं
मानसप्रत्यक्षं	आत्ममनस्संयोगः	मनेन्द्रियम्
अनुमितिः	परामर्शः	व्याप्तिज्ञानम्
उपमितिः	अतिदेशवाक्यार्थस्मरणं	अतिदेशवाक्यार्थज्ञानम्
शाब्दबोधः	पदार्थोपस्थितिः	वृत्तिज्ञानसहकृतंपदज्ञानं
घटः	भ्रमणं	दन्डः
घटः	कपालद्वयसंयोगः	कपालः
पटः	तन्तुसंयोगः	तन्तवः
पटः	तुरीवेमातन्तुसंयोगः	तुरीवेमादि
कपालः	कापालिकसंयोगः	कापालिकम्
द्व्यणुकं	परमाणुसंयोगः	परमाणवः
समाप्तिः	विघ्नध्वंसः	मङ्गलम्
स्वर्गादिकं	अपूर्वं	यागादिकम्
स्मृतिः	भावनाख्यसंस्कारः	अनुभवः

एवंरीत्या फलभेदेनान्यत्रापि व्यापारकरणनिर्णयः कार्यः।

मतभेदेन प्रमाणनिरूपणम्

प्रत्यक्षमेकं चार्वाकाः। प्रत्यक्षानुमाने द्वेप्रमाण इतिकणादाः। प्रत्यक्षानुमान-शब्दास्त्रयः प्रमाणानीति सांख्यकपिलाः प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाश्चत्वारि प्रमाणानीति नैय्यायिकाः। प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दार्थापत्यनुपलब्धयः षट्प्रमाणानीति मीमांसकाः। सम्भवैतिह्याभ्यामष्टाविति पौराणिकाः। सम्भवैतिह्य चेष्टाभिस्समं नव प्रमाणानीति भरतः। शतेपञ्चाशन्नयायेन पञ्चाशत् ज्ञानजनकं शतज्ञानं सम्भवप्रमाणम्। इहवटे-यक्षस्तिष्ठतीत्यज्ञानतुमूलवक्तृकः प्रवादः ऐतिह्यप्रमाणम्। गमनागमनादिज्ञानजनिकाः करचरणनयनादिचेष्टश्चेष्टाप्रमाणम्।

अस्मिन्मतेप्रमाणचतुष्टयावश्यकतानिरूपणम्

प्रत्यक्षप्रमाणमात्रादरेऽतीन्द्रियाणामीश्वरादीनां सिद्धिर्न सम्भवति, अतोऽनु-मानांगीकरणम्। प्रत्यक्षानुमानरूपप्रमाणद्वयमावादरें विप्रकृष्टदेशकालस्थानां लोकां-तराणां लोकांतरीयाणाम् हेतुगम्यानां पदार्थानां सिद्धिर्नसम्भवति। अतस्तद्ग्राहकं शब्द प्रमाणमप्यावश्यकम्, एतत्प्रमाणत्रयादरेपि गवये गोसादृश्यज्ञानस्यानुपपन्नतया चतुर्थमप्युपमानं प्रमाणमंगीकार्यम्।

व्याप्यव्यापकनिरूपणम्

यच्छाब्दाभिलप्यो व्याप्यः। तच्छब्दाभिलप्यो व्यापक इति निर्णयः कार्यः यथा– यत्रधूमस्तत्राग्निः, योयो धूमवान्ससोग्निमानित्यादिस्थलेषु यच्छब्दाभिलप्य-धूमो व्याप्यः तच्छब्दाभिलप्याग्निर्व्यापकश्च भवति, एवमेवयत्रवहन्यभावस्तत्र-धूमाभाव इत्यादिष्वपि बह्नयभावस्य व्याप्यत्वं धूमाभावस्य व्यापकत्वं ग्राह्यम्।

पक्षसाध्यहेतुनिरूपणम्

यस्मिन् धर्मिणि साधनेन साध्यं साध्यते स पक्षः। यथा पर्वतो वह्निमा-न्धूमादित्यत्र धूमेन वह्नेः पर्वते साधनीयतया स पर्वतः पक्षः। यदनुमीयते साधनेन तत्साध्यम्। अतः वह्नि साध्यं पञ्चम्यन्तप्रतिपाद्यो हेतुः अत्र धूमो हेतुः।

प्रकारविशेष्यनिरूपणम्

इदमादिसर्वनामपदाभिलापस्थले इदमादिपदार्थो विशेष्यं भवति। यथा– अयं पुरुषः एष स्थाणुः, असौ राजा इत्यादाविदंपदार्थै तत्पदार्थादः पदार्थानां विशेष्यत्वं स्थाणुत्वादीनां प्रकारत्वं पृथक्प्रकारबोधकपदानभिलापस्थलेऽयमित्या-दाविदम्पदार्थो विशेष्यमिदंत्वं प्रकारः। घट इतिज्ञाने घटो विशेष्यं घटत्वं प्रकारः। मतुवः इन्प्रत्ययस्य वा प्रकारबोधकपदेऽनुप्रवेशे तत्प्रत्ययप्रकृत्यर्थः प्रकारो भवति। यथा– घटवद्भूतलं धनी पुरुष इत्यादौ तत्प्रत्ययप्रकृत्यर्थयोघटधनयोः प्रकारत्वं ज्ञेयम्। एवं विशिष्टपदस्य युक्तपदस्याधिकरणपदादीनां वा प्रकारबोधनस्थले विद्य-मानत्वे तत्पदपूर्ववृत्तिपदार्थः प्रकारोभवति। यथा– घटविशिष्टं भूतलं घट युक्तं भूतलं घटाधिकरणं भूतलमित्यादिषु तत्तत्पदपूर्ववृत्ति घट पदार्थीभूतघटः प्रकारो भवति। पूर्वोक्तप्रत्ययद्वयस्य विशिष्टादि पदानांवाऽनुपादाने तत्पदप्रतिपाद्यतावच्छेदक-धर्मः प्रकार इति निर्णयः कार्यः। यथा-- घटोऽनित्यः, नीलो घट इत्यादौ तत्प्रत्य-यान्यतरस्य विशिष्टादिपदान्यतमस्य वाऽनभिलापस्थले तत्तत्पद प्रतिपाद्यतावच्छेद-कानित्यत्वनीलत्वादीनां प्रकारत्वं ज्ञेयम्। अयं प्रकारः भेदसम्बन्धेन साध्यकानुमितिस्थले सर्वत्रापि ग्राह्यः। यथा– पर्वतो वह्निमानित्यत्रमतुप्प्रत्ययप्रकृत्यर्थीभूतवह्निस्साध्यं चैत्रो धनीत्यत्रेन्प्रत्ययप्रकृत्यर्थीभूतधनञ्च साध्यं भवति। एतत्प्रत्ययान्यतरस्य विशि-ष्टादिपदानां वा विरहस्थले शब्दोऽनित्यः कार्यत्वादित्यादौ साध्यवोधकपदप्रतिपाद्यता वच्छेदकीभूतानित्यत्वादिकं साध्यं भवतीति विज्ञेयम्। अभेदसम्बन्धेन साध्यकस्थलेऽयं गौ सास्नावत्वादित्यादौ कुत्रचिन्निरूक्तप्रत्ययाद्यभावेपि साध्यवाचक पदप्रतिपाद्यता-वच्छेदकाश्रयो गौरेव साध्यतयांगीक्रियते। कंवुग्रीवादिमत्वान् घटत्वादित्यादावभेद-

सम्बन्धेनसाध्यकस्थलेपि पूर्वोक्तविधया कंवुग्रीवादिमत एव साध्यत्वं विज्ञेयं सामान्य-धर्मावच्छिन्नवाचकपदघटितवाक्येनाभिलापस्थले सामान्यरूपेण विशेषबोधः। यथा– प्रमेयवद्भूतलमित्यादौ प्रमेयत्यादिरूपेण घटादीनां बोधः। विशेषधर्मावच्छिन्नवाचक-पदघटितवाक्येनाभिलापस्थले घटवद्भूतलमित्यादौ घटत्वादिरूपेणैव घटादीनांभानम्। शाब्दातिरिक्तज्ञानस्थले पूर्वोक्तारीतिग्राह्या । शाब्दज्ञानस्थले तु पर्वतो वह्निमान् चैत्रो धनी घटविशिष्टं भूतलमित्यादि निपातातिरिक्तनामार्थयोरभेदसम्बन्धेनान्वय इति नियमानुरोधेन वह्निमदभिन्नः पर्वतः धनस्वाम्यभिन्नश्चैत्रः घटविशिष्टाभिन्नं भूतलमिति तत्तद्विशिष्टानामेवाभेदसम्बन्धेन प्रकारत्वं सम्भवति। नतु मतुबादिप्रत्ययप्रकृत्यर्थानां भेदसम्बन्धेनानुमित्यादिस्थलेव मुख्यविशेष्यांशे प्रकारत्वं सम्भवति। मतुवादिप्रत्य-यानां विशिष्टादिपदानां वा भेदसम्बन्धेन शाब्दबोधौपायकाकांक्षोपयोगितावादिन-येत्वनुमित्यादिस्थलेप्विव तत्तत्प्रत्ययादिपूर्वभाविनामेव प्रकारत्वं ग्राह्यम्। मतुवादि-विरहस्थले नीलोघटः घटोऽनित्य इत्यादौ तु नीलाभिन्नोघटः अनित्याभिन्नोघट इत्य-भेदसम्बन्धेन प्रकारबोधक पदप्रतिपाद्यतावच्छेदकावच्छिन्नस्यैव प्रकारत्वं ग्राह्यम्। इमामेवरीतिमनुसृत्य सविषयकपदार्थपञ्चकेऽपि शाब्दज्ञानातिरिक्तस्थल इव प्रकार-निर्णयः कार्यः।

कार्यतावच्छेदकधर्मनिरूपणम्

यद्धर्मविशिष्टं कार्यं भवति स धर्मः कार्यतावच्छेवकः

घटत्वविशिष्टं कार्यम्	पटत्वविशिष्टं कार्यम्
घटत्वं कार्यतावच्छेदकम्	पटत्वं कार्यतावच्छेदकम्
घटत्वावच्छिन्ना कार्यता	पटत्वावच्छिन्ना कार्यता

कारणतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्

यद्धर्मविशिष्टं कारणं भवति स धर्मः कारणतावच्छेदकः

दण्डत्वविशिष्टं कारणम्	तन्तुत्वविशिष्टं कारणम्
दण्डत्वं कारणतावच्छेदकम्	तन्तुत्वं कारणतावच्छेदकम्
दण्डत्वावच्छिन्ना कारणता	तन्तुत्वावच्छिन्ना कारणता

लक्ष्यतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्

यद्धर्मविशिष्टं लक्ष्यं स धर्मो लक्ष्यतावच्छेदकः यो धर्मो यस्यामवच्छेदक-

सातद्धर्मावच्छिन्ना—

पृथिवीत्वविशिष्टं लक्ष्यम्	जलत्वविशिष्टं लक्ष्यम्
पृथिवीत्वं लक्ष्यतावच्छेदकम्	जलत्वं लक्ष्यतावच्छेदकम्
पृथिवीत्वावच्छिन्ना लक्ष्यता	जलत्वावच्छिन्ना लक्ष्यता

साध्यसाधनतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्

यद्धर्मविशिष्ट साध्यसाधने भवतस्तौधर्मौ साध्यसाधनतावच्छेकधर्मौ भवतः

वह्नित्वविशिष्टं साध्यम्	धूमत्वविशिष्टं साधनम्
वह्नित्वं साध्यतावच्छेदकम्	धूमत्वं साधनतावच्छेदकम्
वह्नित्वावच्छिन्ना साध्यता	धूमत्वावच्छिन्ना साधनता

व्याप्यव्यापकतावच्छेदक धर्मनिरूपणम्

यद्धर्मविशिष्टौ व्याप्यव्यापकौ भवतस्तौधर्मौ व्याप्यव्यापकतावच्छेदकधर्मौ भवतः —

धूमत्वविशिष्टं व्याप्यम्	वह्नित्वविशिष्टं व्यापकम्
धूमत्वं व्याप्यतावच्छेदकम्	वह्नित्वं व्यापकतावच्छेदकम्
धूमत्वावच्छिन्ना व्याप्यता	वह्नित्वावच्छिन्ना व्यापकता

एवमेव लक्षणनावच्छेदकादि धर्मनिर्णयः कार्यः

आधेयतावच्छेदक सम्बन्धनिरूपणम्

येन सम्बन्धेन यदस्तीत्युच्यते	तन्निष्ठाधेयता तत्सम्बन्धावच्छिन्ना–
संयोगसम्बन्धेन घटोवर्तते	समवायेन पटो वर्तते
संयोगसम्बन्धः आधेयतावच्छे-दकसम्बन्धः	समवायसम्बन्धः आधेयताव-च्छेदकसम्बन्धः
संयोगसम्बन्धावच्छिन्ना आधेयता	समवायसम्बन्धावच्छिन्ना आधेयता

प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्धनिरूपणम्

येन सम्बन्धेन यन्नास्तीत्युच्यते तन्निष्ठा प्रतियोगिता तत्सम्बन्धावच्छिन्ना–

संयोगसम्बन्धेनघटोनास्ति	समवायेन पटोनास्ति
संयोगसम्बन्धः प्रतियोगिताव-च्छेदकसम्बन्धः	समवायसम्बन्धः प्रतियोगिता वच्छेदकसम्बन्धः
संयोगसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगिता	संयोगसम्बन्धावच्छिन्ना समवाय प्रतियोगिता

साध्यतावच्छेदक सम्बन्धनिरूपणम्

येन सम्बन्धेन यस्साध्यतेस्सम्बन्धस्साध्यतावच्छेदक सम्बन्धः —

संयोगसम्बन्धेन वह्निस्साध्यते	समवायेन सत्ता साध्यते
संयोगसम्बन्धस्साध्यतावच्छेद-कसम्बन्धः	समवायसम्बन्धस्साध्यतावच्छे-दकसम्बन्धः
संयोगसम्बन्धावच्छिन्ना साध्यता	समवायसम्बन्धावच्छिन्ना साध्यता

एवमेव साधनतावच्छेदकादिसम्बन्ध निर्णयः कार्यः।

एवमेव कार्यतावच्छेदक कारणतावच्छेदक लक्षणतावच्छेदक प्रकारता–वच्देदक सम्बन्धानां निर्णयः कार्यः।

एकविधपदार्थनिरूपणम्

ईश्वरः आकाशं कालः दिक् सत्तारूपा परजातिः समवायः इत्यादयः।

द्विविधपदार्थनिरूपणम्

पृथिव्यप्तेजोवायूनां नित्यानित्यत्वभेदेन द्वैविध्यम्। जीवात्म परमात्मभेदे-नात्मनो द्वैविध्यम्। सामान्यं द्विविधं परमपरं चेति। परं सत्ता अपरं द्रव्यत्वादि। गन्धो द्विविधः— सुरभिरसुरभिश्चेति। संयोगो द्विविधः– कर्मजस्संयोगजश्चेति। आद्यो हस्तक्रियया पुस्तकसंयोगः द्वितीयो हस्तपुस्तकसंयोगत्कायपुस्तकसंयोगः। कर्मजसंयोगोऽपि द्विविधः– अभिघातसंयोगः नोदन संयोगश्चेति, शब्दहेतुराद्यः शब्दाहेतु द्वितीयः। विभागोऽपि द्विविधः– कर्मजो विभागजश्चेति। आद्यो हस्तक्रियया पुस्तकविभागः द्वितीयोः हस्तपुस्तकविभागात्कायपुस्तकविभागः। विभागजविभा-गोऽपि द्विविधः– होतुमात्रविभागजन्यः होत्वहोतुविभागजन्यश्चेति। आद्यः कपाल-द्वयविभागजन्यः, कपालाकाशविभागः द्वितीयः हस्ततरुविभागजन्यः, तरुशरीरविभागः। परत्वापरत्व द्विविधे दिक्कृते कालकृतेचेति। दूरस्थे दिक्कृतं परत्वं ज्येष्ठ कालकृतं परत्वं समीपस्थे दिक्कृतमपरत्वं कनिष्ठ कालकृतमपरत्वम्। द्रवत्वं द्विविधं सांसिद्धिकं नैमित्तिकं चेति । आद्यं जले द्वितीयं पृथिवीतेजसोः सांसिद्धिकत्वं-चाग्निसंयोगादिनिमित्ताजन्यत्वं नैमित्तिकत्वं चाग्निसंयोगादिरूपनिमित्तजन्यत्वम्। शब्दो द्विविधः– ध्वन्यात्मको वर्णात्मकश्चेति। आद्यः भेर्यादिताडनजन्यश्शब्दः द्वितीयस्संस्कृतभाषादिरूपः। बुद्धि द्विविधा– स्मृतिरनुभवश्चेति। अनुभवो द्विविधः– यथार्थोऽयथार्थश्चेति। स्वप्नोऽपि मानसविपर्ययरूप एवेति न पृथग्भावः। स्मृतिरपि द्विविधा– यथार्थाऽयथार्थाचेति। प्रमाजन्या यथार्था अप्रमाजन्याऽयथार्था। प्रत्यक्षं

द्विविधं सविकल्पकं निर्विकल्पकश्चेति। अनुमितिः द्विविधा– स्वार्थानुमितिः परार्थानुमितिश्चेति। शाब्दबोधो द्विविधः– वैदिकशाब्दबोधः लौकिकशाब्दबोधश्चेति। अर्थापत्ति द्विविधा– शतार्थापत्तिः दृष्टार्थापत्तिश्चेति। अनुमितिकरणं द्विविधम्– स्वार्थानुमानं परार्थानुमानंचेति। शाब्दबोधकरणं द्विविधम्– वैदिकशब्दो लौकिकशब्दश्चेति। अर्थापत्तिकरणं द्विविधम्– शतार्थापत्तिः दृष्टार्थापत्तिश्चेति। प्रत्यक्षज्ञानस्थले फलकरणयोरुभयत्रापि प्रत्यक्ष शब्दः प्रवर्तते। अर्थापत्तिस्थले फलकरणयोरुभयत्रापियर्थापत्ति शब्दः प्रयुज्यते। ज्ञानेच्छाकृतीनां नित्यत्वानित्वभेदेन। द्विविधम्– ईश्वरगतांनां तासां नित्यत्वम्, जीतवगतांनां तासामनित्यत्वम्। ईश्वरेपि सुखांगीकतृमते सुखस्यापि नित्यत्वानित्वभेदेन द्वैविध्यम्– ईश्वरे तन्नित्यम्, जीवेः तदनित्यम्। व्याप्ति द्विविधा– व्याप्तिः व्यतिरेकव्याप्तिश्चेति। आद्याहेतुव्यापकसाध्यसामानाधिकरण्यरूपा, द्वितीया साध्याभावव्यापकीभूताभावप्रतियोगित्वरूपा। वृत्तिर्द्विविधा– शक्ति लक्षणाचेति। आद्या अस्मात्पदादयमर्थो बोद्धव्य इतीश्वेरच्छाविषयत्यरूपा, द्वितीया शक्यसम्बन्धरूपा। लक्षणा द्विविधा– जहल्लक्षणा अजहल्लक्षणाचेति। शक्यार्थपरित्यागं नान्यार्थग्रहणं जहल्लक्षणा। यथा– 'गंगायां घोष' इत्यादौ। गंगापदस्य तीरे मंचाः क्रोशंतीत्यादौ। मंचपदस्य पुरुषेषुच जहल्लक्षणा। शक्यार्थापरित्यागेसत्यन्यार्थग्रहणमजहल्लक्षणा। छत्रिणो यांतोत्यत्र छत्रपदस्य छत्रवत्क्षछत्रिसाधारणसंघत्वावच्छिन्ने काकेभ्यो दधिरक्ष्यतामित्यत्र काकपदस्य दध्युपघातुकत्वाबच्छिन्नेचाजहल्लक्षणा। जीवब्रह्मणोरैक्यं ब्रूवतां वेदांतिनांमते जहदजहल्लक्षणा चांगीक्रियते। तन्मते तत्त्वमसीत्यादिषु चैतन्यादिरूपव्यक्तिमात्रबोधनार्थं जहदजहलक्षणा नैयायिकानां मतेतु सा नास्तीति लक्षणाद्वयमेव। लक्षणं द्विविधम्– व्यावहारिकं व्यायर्तकंचेति। व्यावहारिकत्वंच व्यवहारप्रयोजकत्वं व्यावर्तकत्वंचेतरभेदानुमापकर्त्वम्। यथाऽद्यं पृथिव्या पृथिवीत्वम्, द्वितीयं तस्या गन्धवत्वम्। अन्वयव्यतिरेकद्वयं यत्सत्वे यत्सत्वमन्वयः, यदभावे यदभावो व्यतिरेकः। प्रथमयत्पदं कारणत्वे नाभिमतपरः द्वितीययत्पदं कार्यत्वे नाभिमतपरम्। अन्वयव्यतिरेक व्यभिचारद्वयं यदत्वेयदनुत्पत्तिरन्वयव्यभिचारः, यदभावे यदुत्पत्ति व्यतिरेकव्यभिचारः। अभावो द्विविधः– संसर्गाभावोऽन्योन्याभावश्चेति। हेतुर्द्विविधः– सद्धेतुरसद्धेतुश्चेति। आद्यः व्याप्तिपक्षधर्मताविशिष्टः द्वितीयः व्याप्तिपक्षधर्मत्वोभयाभाववान्। असद्धेतुमात्रेचैकसत्वे द्वयंनास्तीत्याकारकप्रतीत्या प्रत्येकाभावप्रयुक्तः उभयाभावप्रयुक्तोवोभयाभावस्संभवत्येव। शुक्लरूपं द्विविधं– भास्वरशुक्लमभास्वरशुक्लंचेति। आद्यं तेजसि द्वितीयं जले। पदार्थो द्विविधः– व्याप्यवृत्तिरव्याप्यव्यत्तिश्चेति। आद्यः घटत्वपटत्वादिः, द्वितीयः कपिसंयोगादिः। पदार्थः प्रकारांतरेण द्विविधः– भावोऽभावश्चेति। द्रव्यादयषड्ऽभावाः प्राग्भावादयश्चत्वारोऽभावाः। ज्ञानं पुनरपि द्विविधम्– संशयो निश्चयश्चेति। आद्यः स्थाणुर्वा पुरुषोचेति। द्वितीयः अयं स्थाणुरिति। स्मृतिरपि निश्चयरूपैव। ज्ञानं पुनरपि द्विविधम्– आहार्यं अनाहार्यं चेति। वाधकालीनेच्छाजन्यज्ञानमाहार्यम्। तद्भिन्नमनाहार्यम्। आहार्यज्ञानमपि द्विविधम्– नियताहार्यमनियताहार्यंचेति। स्वविरोधिधर्मधर्मितावच्छेदकस्वप्रकारकज्ञानं नियताहार्यं यथा वह्निमत्पर्वतो वह्न्यभाववानिति। तद्भिमनियताहर्यम्– यथा ह्रदो वह्निमानितिज्ञानम्। अनियताहार्यानाहार्ययोः बाधकालीनेच्छाजन्यत्वतदजन्यत्वाभ्यामेव भेदो ज्ञेयः नत्वाकारतो भेदः। उभयत्र ह्रदो वह्निमानित्यस्येवाकारत्वात् वह्निमत्पर्वतो वह्न्यभाववा नितिज्ञानस्य नियतमिच्छाजन्यत्वेन नियताहार्यत्वव्यवहारः। नियताहार्यानाहार्यज्ञानार्यास्त्वाकारतोपि भेदो वर्तते एव। यथा– आद्यं वह्निमद्दो वह्नयाभाववानितिज्ञानं द्वितीयं ह्रदो वह्निमानिति ज्ञानम्। ज्ञानं पुनरपि द्विविधम्– अप्रामाण्यमानास्कंदितं तदनास्कंदितंचेति।

सम्बन्धो द्विविधः– वृत्तिनियामकः वृत्त्यनियामकश्चेति। आद्यः संयोगसमवायस्वरूपकालिकपर्याप्तिस्वभावद्वृत्तित्वादिरूपः द्वितीयः निरूप्यनिरूपककोटिप्रविष्टविषयत्वादिरूपः परम्परासम्बन्धरूपश्च। अनुमितिः पुनरपि द्विविधा– पक्षतावच्छेदकावच्छेदेनानुमितिः पक्षतावच्छेदकावच्छेदेनानुमितिः। पदार्थः प्रकारान्तरेण द्विविधः– केवलान्वयी व्यतिरेकीचेति। अवच्छेदकत्वं द्विविधम्म्– स्वरूपसम्बन्धरूपमनतिरित्तवृत्तित्वरूपञ्चेति। दण्डत्वं घटकारणतावच्छेदकमित्यत्रावच्छेदकत्वं स्वरूपसम्बन्धरूपं हेतुमन्निष्ठात्यन्ताभावप्रतियोगितानवच्छेदकं साध्यतावच्छेदकमित्यत्र गुरुधर्मस्यावच्छेदकत्वानभ्युपगमे प्रमेयधूमवान् वह्नेरित्यत्र प्रसक्तस्यातिव्याप्तिदोषस्य वारणार्थमनवच्छेदकत्व घटकीभूतावच्छेदकत्वमनतिरिक्तत्वरूपम्। तर्को द्विविधः– कार्यकारणभावभङ्गप्रसङ्गलक्षणः, व्याप्यव्यापकभावभङ्गप्रसङ्गलक्षणश्चेति। पर्वते धूमोस्तु बह्निमानस्त्वित्यप्रयोजकशङ्कायां प्रसक्तायां तन्निवृत्यर्थं धूमे बह्निजन्यत्वं नस्यादिति कार्यकारण भावभङ्गप्रसङ्गलक्षणस्तर्क उपयोक्तव्यः। द्रव्यं विशिष्टसत्वादित्यादौ निरुक्तरीत्याऽप्रयोजकशङ्कायां प्रसक्तायां विशिष्टसत्तायां नित्यतया धूमंप्रति बह्नेरिव विशिष्ट सत्तांप्रति द्रव्यत्वस्य कारणत्वाभावेन कार्यकारणभावभङ्गप्रसङ्गलक्षणतर्कस्योपयोक्तुमशक्यतया यत्रविशिष्टसत्ता तत्र द्रव्यत्वमिति नियमोनस्यादिति व्याप्यव्यापकभावभङ्गप्रसङ्गलक्षण एव तर्क उपयोक्तव्यः। कुत्रचित्कार्यकारणभावेप्रसङ्गलक्षणतर्कप्रसक्तिस्थले व्याप्यव्यापकभावभङ्गप्रसङ्गलक्षणोऽपि

तर्क उपयोक्तुं शक्यते। यथा– पर्वतो वह्निमान् धूमादित्यादौ यदिवह्निर्नस्यातर्हि-धूमोपिनस्यादिति कार्यकारणभावभङ्गप्रसङ्गलक्षणतर्कस्य यत्रधूमस्तत्राग्निरिति नियमो-नस्यादिति व्याप्यव्यापकभावभङ्गप्रसङ्गलक्षणतर्कस्य चोपयोक्तुं शक्यत्वात्। अतः यत्र हेतुसाध्ययोः कार्यकारणभावस्सुप्रसिद्धस्तत्रकार्यकारणभावभङ्गप्रसङ्गलक्षण-स्तर्क उपयोक्तव्यः। अन्यत्रतु व्याप्यव्यापकभावभङ्गप्रसङ्गलक्षणस्तर्क उपयोक्तव्य इति सिद्धम्। कारणत्वं द्विविधम्– फलोपधानरूपं स्वरूपयोग्यतारूपञ्चेति। स्व-जनकत्वसम्बन्धेन फलविशिष्टत्वं फलोपधानरूपं जनकत्वं तच्च साक्षात्फलजनकी-भूतवस्तुत्वेव सम्भवति। जनकतावच्छेदकधर्मवत्वं स्वरूपयोग्यतारूपं जनकत्वं तच्चसाक्षादघटानुपदायकेप्यारण्यकदन्डादौ सम्भवति। रूपादिचतुष्टयस्य पाकजा-पाकजभेदेनद्वैविध्यम्। रूपरसगन्धस्पर्शसंख्यापरिमाणद्रवत्वस्नेहबुद्धीच्छाप्रयत्नानां नित्यत्वानित्यत्वभेदेन द्वैविध्यं जलादि त्रयेवर्तमानानां चाद्यानां चतुर्णां नित्य-वृत्तित्वान्नित्यत्वं अनित्यवृत्तीनां तासामनित्यत्वं संख्यापरिमाणद्रवत्वस्नेहानां नित्यवृत्तीनां नित्यत्वमनित्यवृत्तीनामनित्यत्वम् किंतु द्वित्वादिसंख्याया नित्यवृत्तेरप्य-पेक्षांबुद्धिजन्यतयाऽनित्यत्वमेव ज्ञानेच्छाकृतीनां त्वीश्वरवृत्तीनां नित्यत्वं जीववृत्तीनां तासामनित्यत्वं नित्यवृत्तेगुरुत्वस्य नित्यत्वं अनित्यवृत्तेरनित्यत्वं पृथक्त्परत्वपरत्वानां नित्यवृत्तीनामप्यपेक्षाबुद्धिजन्यतया संयोगविभागयोः क्रियाजन्यतया ईश्वरेमतविशेषे नित्यसुखानंगीकरेण जीववृत्तिसुखस्यविषयजन्यतया दुःखद्वेषधर्माधर्मसंस्काराणा-मीश्वरेऽनंगीकारेण जीववृत्तीनां तेषां सनिमित्तकत्वेन यज्जन्यं तदनित्यमितिव्याप्तया जन्यानामेषां नाशस्यावश्यभ्युपेयतया पृथक्संयोगविभागपरत्वापरत्वशब्द सुखदुःख-द्वेषधर्माधर्मसंस्काराणां नित्यत्वं नास्त्येव। किन्तु सर्वेषामेतेषामनित्यत्वमेव। उभया-भावो द्विविधः– प्रत्येकाभावप्रयुक्तः उभयाभावप्रयुक्तश्चेति। आद्यः पटे घटत्व-द्रव्यत्वोभयाभावः द्वितीयः गुणादौ घटत्य द्रव्यत्वोभयाभावः। इच्छा द्विविधा फलविषयिणी उपायविषयिणीचेति। द्वेषो द्विविधः– फलविषयकः उपाय विषयकश्चेति। निश्चयो द्विविधः– उपेक्षात्मकः उपेक्षानात्मकश्चेति। आद्यः स्मरणप्रत्यभिज्ञाद्यजनकः द्वितीयस्तदुभयजनकः। वेगो द्विविधः– कर्मजस्संयोग-जश्चेति। योगजसन्निकर्षो द्विविधः– युक्त योगजन्यः युजानयोगजन्यश्चेति। योगजसन्निकर्षो नाम योगजन्यधर्मविशेषः चिन्ताद्यसहकृतयोगजन्यधर्मविशेषः युक्तयोगजन्यस्सन्निकर्षः चिन्तासहकृतयोगजन्यधर्मविशेषः युञ्जानयोगजन्यस्सन्निकर्षः। सम्बन्धः पुनरपिद्विविधः– साक्षात्सम्बन्धः, परम्परा सम्बन्धश्चेति। आद्यस्संयोग-समवायादिः द्वितीयः स्वज्ञानविषय प्रकृतहेतुताबच्छेदकधर्मवत्वादिस्सम्बन्धः।

सम्बन्धः प्रकारान्तरेण द्विविधः– भेदसम्बन्धः अभेदसम्बन्धश्चेति। आद्यः अभेदातिरिक्तसम्बन्धः अभेदसम्बन्धस्तादात्म्यसम्बन्धः। लक्षणावीजद्वयं अन्वया-नुपपत्तितात्पर्यानुपपत्तिद्वयं गन्गायां घोषः मञ्चाः क्रोशन्ति सिंहोमाणवकः सोयन्देवदत्तः इत्यादावन्वयानुपपत्तिः, यष्टीः प्रवेशय काकेभ्योदधिरक्ष्यतां छत्रिणोयान्ति सैन्ध-वमानयेन्यादिषु तात्पर्यानुपपत्तिरेवलक्षणाबीजं अन्वयानुपपतेर्लक्षणाः स्थलेषु सर्वत्र सम्भवाभावेन तात्पर्यानुपपत्तेस्सर्वत्रापिसम्भवेन सर्वत्रतात्पर्यानुपपत्तिरेव लक्षणावीज-मिति बहुनां सिद्धान्तः। प्रवृत्तिः प्रकारान्तरेण द्विविधा– निष्कम्पप्रवृत्तिः सकम्प-प्रवृत्तिश्चेति। आद्या पूर्वोत्पन्नज्ञानं प्रामाण्यनिश्चयहेतुका द्वितीया तस्मिन् ज्ञाने प्रामाण्यसंशयहेतुका। निष्कम्पत्वं सकम्पत्वं च विषयताविशेषः। हेतुर्द्विविधः समव्याप्तहेतुः विषमव्याप्तहेतुश्चेति। समव्याप्तत्वञ्च हेतुव्यापकसाध्याकत्वम्। विषमव्याप्तत्वं च हेतुव्यापक साध्याव्यापकत्वम्। प्रतिवध्यप्रतिबन्धकभाव-ग्राहकान्वयव्यतिरेकद्वयम्। यत्सत्वेयदनुत्पत्तिरन्वयः यदभावेयदुत्पत्तिर्व्यतिरेकः प्रथमयत्पदं प्रतिबन्धकत्येनाभिमतपरम्। द्वितीयोयत्पदं प्रतिबध्यत्वे नाभिमतपरम्। पञ्चावयववाक्यं द्विविधम्। अन्वयपञ्चावयववाक्यं व्यतिरेकपञ्चावयववाक्य-ञ्चेति। आद्यं पर्वतोवह्निमान् धूमवत्वात् यो यो धूमवान् ससोग्निमान्यथामहानसः तथाचायं तस्मात्तथा इति।। द्वितीयं पर्वतोवह्निमान् धूमवत्वात् यो यो बह्नयभाववान् स धूमाभाववान्, यथा– महाह्रदः नचायं तथा तस्मानतथेति।। कारणं द्विविधम्– साधारणकारणमसाधारणकारणं चेति। कार्यमात्रंप्रतीश्वरादृष्टादि साधारणकारणम्। कार्यविशेषं प्रतिकारणं द्वितीयम् यथा– घटादिकंप्रतिदण्डादिकंद्वितीयंकारणम्।।

त्रिविधिवस्तुनिरूपणम्

पृथिव्यप्तेजोवायूनां शरीरेन्द्रियविषयभेदेन पुनरपित्रैविध्यं स्पर्शस्त्रिविधः शीतोष्णानुष्णाशीतभेदात्। संयोगः प्रकारान्तरेणत्रिविधः– एककर्मजन्यः उभय-कर्मजन्यः संयोगजन्यश्चेति। आद्यः श्येनशैलसंयोगः, द्वितीयः मेषद्वयसंयोगः, तृतीयः हस्तपुस्तकसंयोगात्कायपुस्तकसंयोगः। विभागोपित्रिविधः– एककर्मजन्यः उभयकर्मजन्यः विभागजन्यश्चेति। आद्यः श्येनशैलविभागः, द्वितीयः मेषद्वयविभागः तृतीयः हस्तपुस्तकविभागात्कायपुस्तकविभागः। शब्दस्त्रिविधः– संयोगजोवि-भागजश्शब्दजश्चेति। आद्यः भेरीदण्डसंयोगजन्यः, द्वितीयः वंशाकाशविभागजन्यः तृतीयः पूर्वपूर्वशब्दोत्पन्नद्वितीयादिशब्दसमुदायः। कारणं त्रिविधम् समवाय्यसम-वायिनिमित्तभेदात्। अलौकिकसन्निकर्षस्त्रिविधः सामान्यलक्षणः, ज्ञानलक्षणः, योगजलक्षणश्चेति। आद्यः व्याप्तिज्ञानादौ निखिलवह्निधूमभानार्थमंगीकृतः द्वितीयः

सुरभिचंदनमित्यादौ। सुरभिगन्धत्वादिभानार्थं तृतीयः योगिनामतीतानागतसर्ववस्तुसाक्षात्कारार्थमंगीकृतः सामान्यलक्षणंसन्निकर्षस्तु सामान्यश्रयस्य यावतो ज्ञानं जनयति ज्ञानलक्षणस्तु स्वविषयविषयकज्ञानं जनयतीतीयान्भेदः। आद्यद्वितीयौ पर्यवसाने ज्ञानरूपावेव। लिङ्गं त्रिविधम्– अन्वयव्यतिरेकि केवलान्वयि केवलव्यतिरेकिचेति। सव्यभिचारस्त्रिविधः साधारणाऽसाधारणनुपसंहारिभेदात्। असिद्धस्त्रिविधः आश्रयासिद्धः स्वरूपासिद्धो व्याप्यत्वासिद्धश्चेति। अयथार्थानुभवस्त्रिविधः– संशयविपर्ययतर्कभेदात् । उत्कटैकतरकोटिकसंशयस्संभावना एषासंशयएवांतर्भवति। संस्कारस्त्रिविधः वेगोभावनास्थितस्थापकश्चेति। विषयता त्रिविधा– विशेष्यता प्रकारता संसर्गताचेति। संसर्गाभावस्त्रिविधः– प्रागभावः प्रध्वंसाभावः अत्यंताभावश्चेति। लक्षणदोषास्त्रयः– अतिव्याप्तिरव्याप्तिरसंभवश्चेति। आत्माश्रयादिदोषत्रयम् आत्माश्रयः अन्योन्याश्रयः चक्रकापत्तिश्चेति। जन्यभावत्रयम् द्रव्यगुणकर्मत्रयम्। कृतिनिरूपितविषयतात्रिविधा– उद्देश्यताविधेयता उपादानताचेति। अन्नंभटाशयानुरोधें नान्यथासिद्धस्त्रिविधः– पटं प्रतितंतुरूपम् तंतुत्वंच प्रथमान्यथासिद्धम् । पटंप्रत्याकाशंद्वितीयान्यथासिद्धम् । पाकजस्थले गन्धंप्रति रूपप्रागभावस्तृतीयान्यथासिद्धः। प्रयत्नस्त्रिविधः– प्रवृत्तिः निंवृत्तिः जीवनयोनिश्चेति। आद्यो भोजनादौ द्वितीयो विषभक्षणादौ तृतीयः प्राणधारणार्थम्। औपाधिकं कालत्रयं अतीतानागतवर्तमानकालत्रयम्। परिमाणं प्रकारान्तरेण त्रिविधम्– अणुपरिमाणं मध्यमपरिमाणं परम महत्परिमाणं (विभुपरिमाणं) चेति। आद्यं परमाण्वादौ द्वितीयं द्वयणुकादिब्रह्मांडान्ते विभुभिन्ने द्रव्ये तृतीयमाकाशादि चतुष्टयंवर्तते। विशिष्टाभाव स्त्रिविधः– विशेष्याभावप्रयुक्तः विशेषणाभावप्रयुक्तः उभयाभावप्रयुक्तश्चेति। आद्यः पटे द्रव्यत्वविशिष्टघटत्वाभावः द्वितीयः पटेघटत्वविशिष्टद्रव्यत्वाभावः तृतीयः गुणादौ घटत्वविशिष्टद्रव्यत्वाभावः। कर्मजन्यत्रयं संयोगविभागवंगत्रयम्। अनित्यपरिमाणं त्रिविधम्– संख्याजन्यं परिमाणजन्यं प्रचयजन्यञ्चेति। त्र्यणुकनिष्ठपरिमाणं द्वयणुकनिष्ठत्रित्वसंख्या जन्यमाद्यं घटाद्यवयविनिष्ठपरिमाणं कपालाद्यवयवनिष्ठपरिमाणजन्यं द्वितीयम्, तूलकादिनिष्ठपरिमाणं प्रचयजन्यं तृतीयम्। प्रचयादिधिलाख्यसंयोगः। चिकीर्षाप्रति कारणत्रयम्। कृतिसाध्यता ज्ञानेष्टसाधनताज्ञानवलवदनिष्टाननुवंधित्वज्ञानत्रयं चिकीर्षानाम कृतिसाध्यत्वप्रकारकेच्छा कृतिसाध्यताज्ञानस्य चिकीर्षांप्रति कारणत्वानंगीकारे चन्द्रमण्डलानयनादौ वृष्ट्यादौचिकीर्षाप्रसंगः। इष्टसाधनताज्ञानस्य कारणत्वानंगीकारे शत्रुगृहगमनादौ चिकीर्षाप्रसंगः वलवदनिष्टाननुबंधित्वज्ञानस्य कारणत्वानंगीकारे विषसंपृक्तान्न-

भक्षणादौ चिकीर्षाप्रसंगः। अतो ज्ञानत्रयस्य चिकीर्षांप्रति कारणत्वमंगीकार्यं वलवदनिष्टानुवंधित्वज्ञानस्य प्रतिबंधकत्वांगीकर्तृमते, वलवदनिष्टाननुवंधित्वज्ञानस्य कारणत्वं नांगीक्रियते। किं त्वाद्ययोर्द्वयोरेव कारणत्वं तन्मतेऽङ्गीकार्यम्। अवस्थावयं जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थात्रयम्। एवकार स्त्रिविधः– विशेष्य संगतः विशेषणसंगतः क्रियासंगतश्चेति। पार्थएव धनुर्धर इत्यत्र विशेष्यसंगतः शंखः पांडुएवेत्यत्र विशेषणसंगतः नीलमुत्पलं भवत्येवेत्यत्र क्रियासंगत श्चेवकार इति बोध्यम्।।

चतुर्विधपदार्थ निरूपणम्

परिमाणं चतुर्विधं अणुमहद्दीर्घंह्रस्वञ्चेति। भावप्रधाननिदेशेनाण्यादिपदमणुत्वादिवरम्। अभावश्चतुर्विधः– प्रागभावः प्रध्वंसाभावोऽत्यन्ताभावोन्योन्याभाश्चेति। विभुचतुष्टयम्– आकाश कालदिगात्मचतुष्टयम्। भूतमूर्तपदार्थचतुष्टयं पृथिव्यप्तेजोवायुचतुष्टयम्। यथार्थानुभवश्चतुविधः– प्रत्यक्षानुमित्युपमितिशाब्दभेदात्। अयथार्थानुभवश्चतुर्विधः– प्रत्यक्षानुमित्युपमितिशाब्दभेदात्। पर्वतो धूमवान् वह्नेरित्यत्र धूमव्याप्यवह्निमान्पर्वत इति। भ्रमात्मकादपि परामर्शात् पर्वतो धूमवानिति प्रमात्मकानुमितिर्भवत्येव। प्रमात्मकपरामर्शाभ्रमात्मकानुमितिः कुत्रापि न सम्भवति कुतः ह्रदो वह्निमानित्यनुमितिभ्रमात्मकानुमितिः, अत्र धूमादेर्हेतुत्वे पक्षधर्मत्वांशे परामर्शस्य भ्रमत्वं द्रव्यत्वादेर्हेतुत्वे व्याप्त्यंशे परामर्शस्य भ्रमत्वं सम्भवति।।

प्रमात्मकपरामर्शात्प्रमात्मकानुमितिः, भ्रमात्मकपरामर्शाद्भ्रमात्मकानुमितिश्च निर्विवादा। क्वचिद्भ्रमात्मकपरामर्शात्प्रमात्मकानुमितिश्च भवति। प्रमाणं चतुर्विधं प्रत्यक्षानुमानोपमान शब्दभेदात्। उपाधिश्चतुर्विधः– केवलसाध्यव्यापकः पक्षधर्मावच्छिन्नसाध्यव्यापकः साधनावच्छिन्नसाध्यव्यापकः उदासीनधर्मावच्छिन्नसाध्यव्यापकश्चेति पक्षधर्मावच्छिन्नत्वादेस्साध्येऽन्वयः पक्षधर्मावच्छिन्नत्वञ्च समानाधिकरण्यसम्बन्धेन पक्षधर्म विशिष्टत्वं उदासीनत्वञ्च पक्षधर्मसाधनातिरिक्तत्वम्। क्षणोपाधि चतुष्टयम्– स्वजन्यविभागप्रागभावावच्छिन्नंकर्मपूर्वसंयोगावच्छिन्नविभागोवापूर्वसंयोगनाशावच्छिन्नोत्तरसंयोगप्रागभावोवाउत्तरसंयोगावच्छिन्नंकर्मवाक्षणोपाधि स्यात्। तेजोविषयश्चतुर्विधः– भौमदिव्यौदर्याकरजभेदात्। सामान्यादिचतुष्टयं सामान्यविशेषसमयाभावचतुष्टयम्। रूपादिचतुष्टयं रूपरसगन्धस्पर्शचतुष्टयम्। औपाधिकं दिक्चतुष्टयम्, प्राचीदिक्प्रतीचीदिगुदीचीदिगवाचीदिक्चतुष्टयम्।

पञ्चविधपदार्थनिरूपणम्

भूतपञ्चकं पृथिव्यप्तैजोवाय्वाकाशपञ्चकम्। मूर्तपञ्चकं पृथिव्यप्तेजोवायुमनः पञ्चकम्। प्राणादिपञ्चकं प्राणापानव्यानोदानसमानपञ्चकम्। आकाशादिपञ्चकम्, आकाशकालदिगात्ममनः पञ्चकम्। कर्मपञ्चकम् उत्क्षेपणापक्षेपणाकुंचनप्रसारणगमनपञ्चकं सविषयक पदार्थपञ्चकं ज्ञानेच्छाकृतिसंस्कारद्वेषपञ्चकम्। हेत्वाभासः पञ्चविधः– सव्यभिचारविरुद्धसत्प्रतिपक्षासिद्धवाधितभेदात्। अवयवपञ्चकम् प्रतिज्ञाहेतूदाहारणोपनयनिगमनपञ्चकम्। विश्वनाथपञ्चाननाशयानुरोधे नान्यथासिद्धपञ्चकं घटादिकंप्रति दंडत्वादिकं प्रथमान्यथासिद्धम्, दण्डरूपादिकं द्वितीयान्यथासिद्धम्, व्योमप्रभृतितृतीयान्यथासिद्धम्। कुलालजनकप्रभृति चतुर्थान्यथासिद्धंरासभादिकं पञ्चमान्यथासिद्धम्। सर्वमते चान्यथासिद्धसामान्यलक्षणं अवश्यक्लृप्तनियतपूर्ववृत्तिभिन्नत्वमेव। घटादिकंप्रतिक्लृप्तनियतपूर्ववृत्तिनो दंडचक्रसलिलकुदालादयः, तद्भिन्नत्वंच दंडत्वदंडरूपादिनिरुक्तान्यथासिद्धेषु वर्तत इति लक्षणसंगतिः। प्रवृत्तिकारणपञ्चकं चिकीर्षाकृतिसाध्यताज्ञानेष्टसाधनताज्ञानवलवदनिष्टाननुबंधित्वज्ञानोपादानप्रत्यक्षपञ्चकम्। एतत्कारणपञ्चकप्रयोजनंतु चिकीर्षास्थल इव ज्ञेयम्।

षड्विधपदार्थ निरूपणम्

भावषट्कं द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायषट्कम्। रसप्यषड्विधः– मधुराम्ललवणकटुकषायतिक्तभेदात्। प्रत्यक्षप्रमाणं षड्विधम्– त्वक्चक्षुश्श्रोत्रजिह्वाघ्राणमनोभेदात्। एतदेवैन्द्रियषट्कमुच्यते। लौकिकसन्निकर्ष षड्विधः। संयोगस्संयुक्तसमवायस्संयुक्तसमवेतसमवायस्समवायस्समवेतसमवायो विशेषण विशेष्यभावश्चेति।

जातिवाधकषट्कम्

व्यक्तेरभेदस्तुल्यत्वं सङ्करोऽस्थानवस्थितिः।
रूपहानिरसम्बन्धो जातिवाधकसन्ग्रहः।। इति।

सप्तविधपदार्थ निरूपणम्

पदार्थसप्तकं द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायाभावसप्तकम्। रूपं सप्तविधम्– शुक्लनीलपीतरक्तहरितकपिशचित्रभेदात्।

नवविधपदार्थ निरूपणम्

पृथिव्येप्तजोवाय्वाकाशकालदिगात्ममनांसि नव द्रव्याणि।

षोडशपदार्थ निरूपणम्

प्रमाण प्रमेय संशय प्रयोजन दृष्टान्त सिद्धांतावयवतर्कनिर्णयबादजल्पवितन्डाहेत्वाभासच्छलजातिनिग्रहस्थानानिषोडशपदार्थागौतममतेऽङ्गीकृताः।

एकविंशतिविध पदार्थनिरूपणम्

प्रतिज्ञाहानिः प्रतिज्ञातरं प्रतिज्ञाविरोधः प्रतिज्ञासन्नयासः हेत्वंतरं अर्थातरं निरर्थकं अविज्ञातार्थकं अपार्थकं अप्राप्तकलं न्यूनं अधिकं पुनरुक्तं अननुभाषणं अज्ञानं अप्रतिभा विक्षेपः मतानुज्ञा पर्यनुयोज्योपेक्षणं निरनुयोज्यानुयोगः अपसिद्धान्तः इति निग्रहस्थानान्येकोनविशतिः। वादिनोऽपजयहेतुर्निग्रहस्थानम्।।

चतुर्विंशतिविधपदार्थनिरूपणम्

रूप रस गन्ध स्पर्श संख्या परिमाण पृथक् संयोग विभाग परत्वापरत्व गुरुत्व द्रवत्व स्नेह शब्द बुद्धि सुख दुःखेच्छा द्वेष प्रयत्न धर्माधर्म संस्काराश्चतुर्विंशति गुणाः।

साधर्म्य वैधर्म्योत्कर्षापकर्ष वर्ण्यावर्ण्य विकल्प साध्यप्राप्यप्राप्ति प्रसंग प्रतिदृष्टांतानुत्पत्ति संशय प्रकरण हेत्वाभाषत्यविशेषोपपत्युपलब्ध्यनुपलब्धिनित्यानित्य कार्यसमाश्चतुर्विंशतिर्जातयः। असदुत्तरं जातिः स्वव्याधातुकमुत्तरं जातिरितिलक्षण।

अनन्तपदार्थनिरूपणम्

जीवान्मानः मनांसि विशेषाः नियमाः परमाणवः इत्यादयः।

प्रतीति व्यवहाराभ्यामर्थसिद्धिः। यद्वैशिष्टयं यत्र भासते स एव स्वपदार्थः। प्रकृत्यर्थे प्रकारीभूतधर्मो भावप्रत्ययार्थः। यदुत्तरं प्रत्ययः विधीयते स प्रकृतिः। यस्याभावस्सप्रतीयोगी। यद्धर्मविशिष्टं लक्ष्यं स धर्मो लक्ष्यतावच्छेकः यो धर्मो यस्यामवच्छेदकस्सातद्धर्मावच्छिन्ना। येन सम्बन्धेन यदस्तीत्युच्यते तन्निष्ठाधेयता तत्सम्बन्धावच्छिन्ना। येन सम्बन्धेन यन्नास्तीत्युच्यते तन्निष्ठा प्रतियोगिता तत्सम्बन्धावच्छिन्ना विग्रहवाक्याद्यादृशविशेषणभावापन्नपदार्थविषयकवोधो जायते सभासवाक्यात्तद्विपरीतबोधो जायते। निपातातिरिक्तनामयोरभेदसम्बन्धेनान्वयः। विशेषणवाचकपदोत्तरवर्तिविभक्तेतिरर्थकत्वमिति केचन। तस्या अप्यभेदार्थकत्वमित्यपरे। प्रत्ययानां प्रकृत्यर्थान्वितस्वार्थबोधकत्वम्। गुणे गुणानन्गीकारः। सर्वाधारः कालः। जन्यानां कालोपाधित्वम्। मूर्तानां दिगुपाधित्वम्। नित्येषु कालिकायोगः विभिन्नकालीनपदार्थयोर्विषयत्वान्यसम्बन्धेनाधाराधेयभावविरहः उत्पन्नं द्रव्यं क्षणमगुणं

निष्क्रियञ्च तिष्ठति। यो गुणो यदिन्द्रियग्राह्यस्तन्निष्ठाजातिस्तदभावश्च तेनेन्द्रियेण गृह्यते। नित्यस्य स्वरूपयोग्यत्वे फलावश्यंभावनियमः। ध्वंसप्रागभावयोस्स्वप्रतियोगिसमवायिदेशवृत्तित्वम्। अनुल्लेख्यमानजात्यखन्डोपाध्यतिरिक्तधर्माणां स्वरूपतो भाने प्रमाणाभावः, विशेषणाभावाद्विशिष्टाभावः, विशेषणाभावाद्विशिष्टाभावः, उभयाभावाद्विशिष्टाभावः। एकसत्वे द्वयं नास्ति। ध्वंसभिन्नं यजन्यं तदनित्यम्। एकधर्मावच्छिन्नाऽधेयतैका। सम्भवति दृष्टफलकत्वेऽदृष्टफलकल्पनाऽन्याय्या। सविषयार्थबोधकधातुसमभिव्याहृतद्वितीयार्थीभूतकर्मत्वं विषयतारूपम्। आदौ क्रिया क्रियातो विभागः विभागात्पूर्वसंयोगनाशः पूर्वसंयोगनाशादुत्तरसंयोगोत्पत्तिः।

शब्दबुद्ध्योर्द्विक्षणावस्थायित्वम्। अर्थं बुद्ध्वाशब्दरचना। असन्निकृष्टपदार्थस्यप्रत्यक्षेभानं न सम्भवति। अपदार्थस्य शाब्दबोधे भानं न सम्भवति आधारास्त्वनुयोगिनः आधेयाः प्रतियोगिनः। सम्बन्धमात्रस्य किञ्चित्प्रतियोगिकत्वं किचिदनुयोगिकत्वम्। यत्र सम्बन्धस्तत्र तेन सम्बन्धेन सम्बन्धी। एकसम्बन्धिज्ञानमपरसम्बन्धिस्मारकम्। सम्बन्ध सम्बन्ध्युभयसत्तायास्सम्बन्धिप्रतीतिनियामकत्वम्। अभावमात्रस्य स्वप्रतियोगितावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्न स्वप्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्नाधेयतानिरूपिताधिकरणतया साकं विरोधः। पदार्थः पदार्थेनान्वेति नत्वेकदेशेन। समानज्ञानीय समानाधिकरण प्रकारता विशेष्यतयोरभेद इति केचन। तयोरवच्छेद्यावच्छेदक भाव इत्यपरे। यद्धर्मावच्छिन्नवाचकपदोत्तरं यावत्पदं सामान्य पदं वा श्रूयते तद्धर्मव्यापकत्वं विधेयांशे भासते। असति बाधके उद्देश्यतावच्छेदकधर्मव्यापकत्वम् विधेयांशे भासते। व्याप्य वृत्तिजातीयधर्माणामव्याप्यवृत्तित्वे प्रमाणाभावः। जातित्वेनाभिमतसङ्करस्य जातिवाधकत्वम्। द्रव्यत्वव्याप्यव्याप्यजातेः परमाणुवृत्तित्वे प्रमाणाभावः। समुदायः प्रत्येकान्नातिरिच्यते। विशिष्टं शुद्धान्नातिरिच्यते। उभयत्वमुभयत्र पर्याप्तं नत्वेकत्र। भेदस्य व्याप्यवृत्तित्वनियमः। व्याप्यवृत्तेरवच्छेदकसद्भावे प्रमाणाभावः। सप्तम्यंतानुयोगिवाचकपदसमभिव्याहृतनञ्‌ अत्यन्ताभावार्थकत्वम्।

परिष्कार

व्यापकत्वम् तदधिकरणवृत्त्यत्यन्ताभावाप्रतियोगित्वमेकम्। तदधिकरणवृत्तिभेदप्रतियोगितानवच्छेदकत्वमपरम्। अधिकदेश वृत्तित्वरूपव्यापकत्वमप्यस्ति। तच्च स्वसामानाधिकरण्येसति धूम स्वाभावसामानाधिकरण्यम् व्याप्यत्वम् तदभावदवृत्तित्वरूपमेकं स्वव्यापकतत्कत्वं (तत्सामानाधिकरण्यं) अपरं न्यूनदेशवृत्तित्वरूपव्याप्यत्वमप्यस्ति। तच्च स्वसमानाधिकरण्यत्वे सति स्वसमाना-

धिकरणभेदप्रतियोगितावच्छेदकत्वमेकं स्वसमानाधिकरणत्वे सति स्वसमानाधिकरणात्यन्ताभावप्रतियोगित्वमपरम्। स्वव्यापकत्वे सति स्वव्याप्यत्वं स्वसमनियतत्वम्। हेतुव्यापक साध्यव्यापकत्वं हेतौसमव्यातत्वम्। यथा– सत्तावान् जातेरित्यत्र जातिरूपहेतौ एतद्रूपवानेतद्रसादित्यत्रै तद्रसरूपहेतौ समव्याप्तहेतुत्वं वर्तते। स्वव्यापकसाध्याव्यापकत्वं हेतौविषमव्याप्तत्वं यथा पर्वतोवह्निमान् धूमादित्यत्र धूमे विषमव्याप्तहेतुत्वं वर्तते। पतने च स्वसमानाधिकरणपतनप्रतियोगिकध्वंससमानकालिकम् यद्यत्तरवन्तद्भिन्नत्वम्। चरमवर्णध्वंसम्समाप्तिः। वर्णे चरमत्वं च स्वघटितग्रन्थघटकवर्णप्रागभावसमानकालिनं यद्यत्स्वं तद्भिन्नत्वम्। विजातीयज्ञानान्तरितसजातीयज्ञानपरम्पराध्यानम्। स्वोत्कृष्टत्वप्रकारकज्ञानानुकूलव्यापारो वेदनम्। कन्ठताल्वाद्यभिघातसंयोग उच्चारणम्। आद्यकृतिरारम्भः। अनन्तराभिधानप्रयोजकजिज्ञासाजनकस्मरणप्रयोजकनिरूप्यनिष्ठसम्बन्धत्वं सङ्गतित्वम्। ज्ञानजनकशब्दघटकवर्णाभिव्यंजकरेखोपविलेखनंलिपिः। स्वविषयत्व स्वसामानाधिकरण्योभयसम्बन्धेन बाधकालीनेच्छाविशिष्टान्यत्वमनाहार्यत्वम्। निरुक्तसम्बन्धद्वयेनाप्रामाण्यज्ञानविशिष्टान्यत्वमप्रामाण्यज्ञानानास्कन्दितत्वम्। संशयभिन्नत्वं निश्चयत्वम्। कारणीभूताभावप्रतियोगित्वं प्रतिबन्धकत्वम्। प्रतिबन्धकतावच्छेदकीभूताभावप्रतियोगित्वं उत्तेजकत्वम्। विषयतानिरूपकत्वं सविषयकत्वम्। भेदकूटावच्छिन्नप्रतियोगिताकभेदवत्वमन्यतमत्वम्। भेदद्वयावच्छिन्नप्रतियोगिताकभेदवत्वमन्यतरत्वम्। ज्ञानशून्यावस्था सुषुप्तिः परस्परात्यन्ताभावसमानाधिकरणयोर्धर्मयोरेकत्रसमावशस्सङ्करः । अथवा स्वसामानाधिकरण्यस्वाभावसामानाधिकरण्यस्वसमानाधिकरणभेदप्रतियोगितावच्छेदकत्वै तन्नितयसम्बन्धेन जातिविशिष्टत्वं तत्। अप्रामाणिकानन्तसजातीयपदार्थकल्पनाधाराविश्रान्त्यभावोऽनवस्था। समवाये एकत्वं च स्वप्रतियोगिवृत्तित्वस्वानुयोगिवृत्तित्वोभयसम्बन्धेनभेदविशिष्टान्यपदार्थविभाजकोपाधिमत्वम्। स्वप्रतियोगित्वस्वसामानाधिकरण्योभयसम्बन्धेनाभावविशिष्टत्वमव्याप्यवृत्तित्वम्। निरुक्तसम्बन्धद्वयेरनाभावविशिष्टान्यत्वं व्याप्यवृत्तित्वम्।

समवायस्वसमवायिसमवेतत्वोभयसम्बन्धेन सत्ताविशिष्टत्वं भावत्वम्। निरुक्तसम्बन्धद्वयेन सत्ताविशिष्टान्यत्वमभावत्वम्। वेदोक्तत्वज्ञानेन वेदविहितकर्मकारित्वं शिष्टत्वम्। यत्सत्वे यत्सत्वमन्वयः, यदभावे यदभावो व्यतिरेकः प्रथमद्वितीययत्पदे कार्यकारणत्वाभ्यामभिमतपरे। स्वेतरयावत्कारणसामग्रीसमवहितस्वाधिकरणवृत्त्यत्यन्ताभावप्रतियोगिकार्यकत्वमन्वयव्यभिचारः। कार्याधिकरणवृत्त्यत्यन्ताभावप्रतियोगित्वं व्यतिरेकव्यभिचारः। भावनान्यो यो वायुवृत्तिवृत्तिस्प-

शार्वृत्तिधर्मसमवायी तदन्यत्वे सति गुरुत्वाजलद्रवत्वान्यगुणत्वं विशेषगुणत्वम्। रूपस्पर्शान्यत्वे सति द्रव्यविभाजकोपाधिव्याप्यतावच्छेदकसंयोगविभागद्रव-त्वावृत्तिजातिशून्यगुणत्वं सामान्यगुणत्वम्।

कारणतावच्छेदकधर्मवत्वं स्वरूपयोग्यत्वरूपं कारणत्वम्। स्वजनकत्व-सम्बन्धेन फलविशिष्टत्वम् फलोपधानरूपं कारणत्वम्। उत्तरकालीनकृतिसाध्यत्व-प्रकारकज्ञानजनकशब्दः। प्रतियोगिव्यधिकरणतदभावाभाववत्वं तदुपलक्षितत्वम्। आश्रयत्व सम्बन्धेन विशेषणवत्वम् तद्विशिष्टत्वम्। कार्यत्वातिरिक्तधर्माव-च्छिन्नकार्यतानिरूपितकारणताश्रयत्वमसाधारणकारणत्वम्। कार्यत्वावच्छिन्न-कार्यतानिरूपितकारणताश्रयत्वं साधारणकारणत्वम्। अनुक्तस्य पदस्य प्रकृतशाब्द-बोधोपयोगित्वेनानुसंधानमध्याहारः। पूर्वोक्तपदस्य प्रकृतशाब्दबोधोपयोगित्वेनानु-संधानमसंगः। स्वप्रतियोगिवृत्तित्वस्वानुयोगिवृत्तित्वोभयसम्बन्धेनभेदविशिष्टान्यद्रव्य-विभाजकोपाधिमत्वमाकाशगतैकत्वं प्रतियोगिवैयधिकरण्यं च प्रतियोग्यधिकरणा-वृत्तित्वरूपमेकम्, प्रतियोग्यनधिकरणवृत्तित्वरूपमपरम्। विशिष्टाभावोभयाभावादि-कमादाय प्रसक्तस्यासंभवस्य वारकं व्भोपकत्वं तदधिकरणवृत्तन्ताभावीयवैशिष्ट-यव्यासज्यवृत्तिधर्मानवच्छिन्नप्रतियोगिताशून्यत्वरूपमेकम्, स्वानधिकरणतदधिकरण-वृत्त्यत्यन्ताभावप्रतियोगियद्यत्स्वं तद्भिन्नत्वरूपमपरं स्वपदं तदधिकरणवृत्त्य-त्यंताभावप्रतियोगिपरम्। क्षणे क्षणाव्यवहितोत्तरत्वं च स्वध्वंसाधिकरणाक्षणध्वं सानधिकरणत्वे सति स्वध्वंसाधिकरणत्वम्। क्षणे क्षणाव्यवहित पूर्वत्वं च स्वप्रागभावाधिकरणक्षणप्रागभावानधिकरणत्वे सति स्वप्रागभावाधिकरणत्वम्। ज्ञानादौ ज्ञानाद्यव्यवहितोत्तरक्षणवृत्तित्वं च स्वाधिकरणक्षणध्वंसाधिकरण-क्षणध्वंसानधिकरणीभूतः स्वाधिकरणक्षणध्वंसाधिकरणीभूतश्च यो क्षणः तद्-वृत्तित्वरूपं ग्राह्यम्। एवमेव ज्ञानादौ ज्ञानाद्यव्यवहितपूर्ववृत्तित्वमपि ग्राह्यम्। अतीतत्वं वर्तमानध्वंसप्रतियोगित्वम्। वर्तमानत्वं च शब्दप्रयोगाधिकरणकालवृत्तित्वम्। अना-गतत्वं च वर्तमानप्रागभावप्रतियोगित्वम्। एकपदनिष्ठमपरपदपर्यायत्वं च अपर-पदशक्यता वच्छेकरूपेणशक्त्याऽपरपदशक्यबोधकत्वम्। अकथनानुमितावोधकता-वत्पुरुषोच्चरितत्वं ग्रन्थनिष्ठन्यूनत्वं स्वरूपसमवायोभयघटितसामानाधिकरण्यम् नाम स्वनिष्ठस्वरूपसम्बन्धावच्छिन्नाधेयतानिरुपिताधिकरणतावन्निरुपित समवाय सम्बन्धावच्छिन्नवृत्तित्वरूपम्। अकथनानुमिताबोधकतावत्पुरुषत्वं ग्रन्थकर्तृनिष्ठ न्यूनत्वम्। ज्ञाननिष्ठप्रामाण्यं तद्वतितत्प्रकारकत्वरूपम्। भूतत्वं च वहिरिन्द्रि-यजन्यप्रत्यक्षविषयविशेषगुणवत्वम्। क्रियाश्रयत्वं मूर्तत्वम्। सर्वमूर्तद्रव्यसंयोगित्वं

विभुत्वम्। तद्धर्मावच्छिन्नशक्तत्वे सति तद्धर्मबोधकत्ववान् शब्दः स्वारसिकतत्पद-जन्यशाब्दबोधीयविशेष्यतावच्छेदकमुख्यविशेष्यकज्ञानजनकशब्दो वा भावप्रधान-निर्देशः। संख्यात्वव्याप्यधर्मावच्छिन्नप्रकारकनिश्चयाविषयत्वमसंख्याकत्वं तदेवा-नन्तत्वमुच्यते। तदविषयकप्रतीत्यविषयत्वं तत् घटितत्वम्। तद्विषयताव्यापक-विषयताकत्वं तत् घटकत्वम्। समासार्थवोधकवाक्यत्वं विग्रहत्वम्।

साध्यतावच्छेदकतापर्याप्तयधिकरणधर्मावच्छिन्नत्वमिति या साध्यतावच्छेद-कतात्वावच्छिन्नप्रतियोगिताकपर्याप्तपनुयोगितावच्छेदकरूपावच्छिन्नानुयोगिताक पर्या-प्तिकावच्छेदकताकत्वमिति वा स्वावच्छेदकताप्रतियोगिकपर्याप्तयनुयोगितावच्छेद-कत्वसम्बन्धेन साध्यतावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रतियोगिताक पर्याप्तयनुयोगिताबच्छे-दकरूपवृत्तित्वमिति या साध्यतावच्छेदकतान्यूनवारकपर्याप्तिनिवेशप्रकारो विज्ञेयः।

साध्यतावच्छेदकातिरिक्तधर्मानवच्छिन्नत्वमितिवासाध्यतायच्छेदकताप्रति-योगिकपर्याप्तयनुयोगितावच्छेदकरूपांवच्छिन्नानुयोगिताक स्वावच्छेदकतात्वावच्छिन्न प्रतियोगिताक पर्याप्तिप्रतियोग्यवच्छेदकताकत्वमितिवास्वावच्छेदकतात्वावच्छिन्न-प्रतियोगिताकपर्याप्तयनुयोगितावच्छेदकत्वसम्बन्धेन साध्यतावच्छेदकताप्रतियोगिक-पर्याप्तयनुयोगितावच्छेदकरूपवृत्तित्वमिति वा साध्यतावच्छेदकेतरवारकपर्याप्ति-निवेशषप्रकारो ज्ञेयः।

साध्यतावच्छेदकतापर्याप्त्यधिकरणधर्मावच्छेन्नत्वे सति साध्यतावच्छेद-कातिरिक्तधर्मानवच्छिन्नत्वमिति वा साध्यतावच्छेदकतात्वावच्छिन्न प्रतियोगिताक-पर्याप्तयनुयोगितावच्छेदकरूपावच्छिन्नानुयोगिताकस्वावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रति-योगिताक पर्याप्तिप्रतियोग्यवच्छेदकताकत्वमितिवा स्वावच्छेदकतात्वावच्छिन्न प्रति-योगिताकपर्याप्तनुयोगितावच्छेदकत्वसम्बन्धेनसाध्यतावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रति-योगिताकपर्याप्तपनुयोगितावच्छेदकरूपवृत्तित्वमिति वा साध्यतावच्छेदकतान्यूनेतर-वारकपर्याप्तिद्वयनिवेशप्रकारो ग्राह्यः।

साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतापर्याप्त्यधिकरणधर्मावच्छिन्नसंसर्गता-कत्वमिति वा, साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रतियोगिताकपर्याप्त-पनुयोगितावच्छेदकरूपावच्छिन्नानुयोगिताकपर्याप्तिकावच्छेदकताकसंसर्गताकत्व-मितिवा, स्वनिरूपितसंसर्गतावच्छेदकताप्रतियोगिकपर्याप्तयनुयोगितावच्छेदकत्व-सम्बन्धेन साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतात्वावच्छिन्न प्रतियोगिताकपर्याप्तय-नुयोगितावच्छेदकरूपवृत्तित्वमिति वा, साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतान्यूनवारक-पर्याप्तिनिषेशप्रकारो ग्राह्यः।।

साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकातिरिक्तधर्मानवच्छिन्नसंसर्गताकत्वमिति वा साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकताप्रतियोगिकप्रयाप्त्यनुयोगितावच्छेदकरूपावच्छिन्नानुयोगिताकस्वनिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रतियोगिताकपर्याप्तिप्रतियोग्यवच्छेदकताकसंसर्गताकत्वमितिवा स्वनिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रतियोगिताकरणप्त्यनुयोगितावच्छेदकत्वसम्बन्धेनसाध्यतानिरूपित संसर्गतावच्छेदकताप्रतियोगिकपर्याप्त्युनुयोगितावच्छेदकरूप वृत्तित्वमितिवासाध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकेतरवारकपर्याप्तिन्निषेशप्रकारो ग्राह्यः।

साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतापर्याप्त्यधिकरणधर्मावच्छिन्नसंसर्गताकत्वे सति साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकातिरिक्तधर्मानवच्छिन्नसंसर्गताकत्वमिति वा, साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रतियोगिताक प्रतियोग्यनुयोगितावच्छेदकरूपावच्छन्नानुयोगिताक स्वनिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतात्वावच्छिन्नप्रतियोगिताक पर्याप्तिप्रतियोग्यवच्छेदकताकसंसर्गताकत्वमिति वा स्वनिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतात्वाच्छिन्नप्रतियोगिताकपर्याप्तयनुयोगितावच्छेदकत्वसम्बन्धेन साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतावच्छिन्नप्रतियोगिताकपर्याप्त्यनुयोगितावच्छेदकरूपवृत्तित्वमिति वा, साध्यतानिरूपितसंसर्गतावच्छेदकतान्यूनेतरवारकपर्याप्तिद्वयनिवेशप्रकारो ग्राह्यः।

एवमेव हेतुतावच्छेदकत्वादिन्यूनेतरवारकपर्याप्तिन्निवेशप्रकारोपि ग्राह्यः तथा च सम्बन्धावच्छिन्नास्वाधेयताप्रभृतिषु तत्तद्दोषवारणाय निरुक्तविधपर्याप्तिनिवेशः कार्य इति सिद्धम्।

चक्षुर्ग्राह्यपदार्थ निरूपणम्

महत्त्वोद्भूतरूपालोकसंयोगविशिष्टद्रव्याणि तदभावाः तादृशद्रव्यवृत्तिजातयः तदभावाः तादृशद्रव्यवृत्त्युद्भूतरूपसंख्यापरिमाणपृथक्संयोगविभागपरत्वापरत्वद्रवत्वस्नेहाः तदभावाः, तादृशगुणवृत्तिजातयः तदभावाः, तादृशद्रव्यवृत्तिकर्म तदभावः, तज्जातिः तदभावः, तादृशद्रव्यवृत्तिसमवायः तदभावः, तद्धर्मः तदभावः एते चक्षुरिन्द्रियेणं गृह्यन्ते। अमुमेवार्थं येनेन्द्रियेण याव्यक्तिगृह्यते तेनेन्द्रियेण तन्निष्ठाजातिस्तदभावश्च गृह्यन्ते इति न्यायो बोधयति।

त्वगिन्द्रियग्राह्य पदार्थ निरूपणम्

महत्त्वोद्भूतरूपोद्भूतस्पर्शविशिष्टानि द्रव्याणि तदभावाः, तज्जातयः तदभावाः, रूपरूपत्वरूपाभावभिन्नं चाक्षुषप्रत्यक्षविषयी भूतं सर्वमपि त्वगिन्द्रियंग्राह्यं भवति, स्पर्शतदभावौ तज्जाति तदभावौ च त्वगिन्द्रियेण गृह्यन्ते इति विशेषः।

रसनेन्द्रियग्राह्यपदार्थनिरूपणम्

महत्त्वसमानाधिकरणरसाः तदभावाः तज्जातयः तदभावाः समवायः तदभावः तद्धर्मः तदभावः एते रसनेन्द्रियेण गृह्यन्ते।।

घ्राणेन्द्रियग्राह्यपदार्थनिरूपणम्

महत्त्वसमानाधिकरणगन्धाः तदभावाः, तज्जातयः तदभावाः, समवायः तदभावः, तद्धर्मः तदभावः घ्राणेन्द्रियेण गृह्यन्ते।

श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यपदार्थनिरूपणम्

शब्दाः तदभावाः तज्जातयः तदभावाः समवायश्च श्रोत्रेन्द्रियेण गृह्यन्ते।

मनोग्राह्यपदार्थनिरूपणम्

बुद्धिसुखदःखेच्छाद्वेषप्रयत्नाः तदभावाः, तज्जातयः तदभावाः, जीवः तद्भावाः तेनेन्द्रियेण गृह्यन्ते, येनेन्द्रियेणेति नियम एव तत्तदिन्द्रियाणां तत्तत्पदार्थग्राहकत्वमस्तीति सूचयति।

तथा च चाक्षुषप्रत्यक्षं प्रति महत्त्वोद्भूतरूपालोकसंयोग चक्षुस्सन्निकर्षाणाञ्चतुर्णां कारणत्वं अणुत्वपरिमाणयतां परमाणुनां अनुद्भूतरूपवतां इन्द्रियाणां अन्धकारस्थितानां चक्षुस्संयोगरहितानां च पदार्थानां चाक्षुषवारणाय क्रमेण महत्त्वादीनां चतुर्णां कारणत्वमङ्गीकार्यम्।

त्वाचप्रत्यक्षं प्रति महत्त्वोद्भूतरूपत्वक्संयोगान्त्रयाणां कारणत्वं वाच्यम्।

रासनप्रत्यक्षं प्रति महत्त्वरसनेन्द्रियसन्निकर्षयोः द्वयोरेव कारणत्वं वाच्यम्।

घ्राणजप्रत्यक्षं प्रति महत्त्वघ्राणेन्द्रियसन्निकर्षयोः द्वयोरेव कारणत्वं वाच्यम्।

श्रावणप्रत्यक्षेपि महत्त्वश्रोत्रेन्द्रियसन्निकर्षयोः द्वयोरेव हेतुत्वम्।

मानसप्रत्यक्षे महत्त्वात्ममनस्सन्निकर्षयोः द्वयोरेव हेतुत्वं ज्ञेयम्।

महत्त्वं तु षडविधेपि प्रत्यक्षे हेतुरेव। अयमेवार्थो महत्त्वं षड्विधेहेतुरित्यादिना विश्वनाथपञ्चाननभट्टाचार्येण निरूपितः। द्रव्यविषयकप्रत्यक्षे महत्त्वस्य समवायसम्बन्धेन द्रव्यसमवेतविषयकप्रत्यक्षे तस्य स्वसमवायिसमवेतत्वसम्बन्धेन द्रव्यसमवेत समवेतविषयकप्रत्यक्षे तस्य स्वसमवायिसमवेतसमवेतत्वसम्बन्धेन च हेतुत्वं ज्ञेयम्।

एवमेवोद्भूतरूपालोकसंयोगचक्षुरादीन्द्रियणामपि प्रत्येकं हेतुत्वं ज्ञेयम्। शब्दप्रत्यक्षे श्रोत्रसमवायस्य प्रतियोगितासम्बन्धेन हेतुत्वम्। शब्दत्वप्रत्यक्षे श्रोत्रसमवेतसमवायस्य तेनैव सम्बन्धेन हेतुत्वं ज्ञेयम्।

अभावनिरूपणम्

अत्यन्ताभावो बहुविधः– सामान्याभावः, विशेषाभावः, विशिष्टाभावः, उभयाभावः, त्रितयाभावप्रभृतयः, अन्यतराभावः, समुदायाभावः, प्रत्येकाभाव इत्यादिना। द्रव्यमादाय क्रमेणाभावाः दृष्टान्तपुरस्सरं प्रदर्श्यन्ते। आद्यः गुणे द्रव्यं नास्तीति प्रतीति सिद्धाभावः। द्वितीयः भूतले घटाभावः। तृतीयः भूतले पूर्वक्षण-वृत्तित्वविशिष्टद्रव्याभावः। चतुर्थः भूतले द्रव्यगुणत्वोभयाभावः। पञ्चमः द्रव्य-गुणत्वकर्मत्वत्रितयाभावः। षष्टः गुणे द्रव्यगुणान्यतराभावः। सप्तमः गुणे द्रव्य-गुणगुणत्वकर्मकर्मत्वसमुदायाभावः। अष्टमः गुणे द्रव्याभावः गुणाभावः कर्माभावः कर्मत्वामावादयः।

अन्योन्याभावोपि बहुविधः– सामान्यभेदः, विशेषभेदः, विशिष्टभेदः, उभय-भेदादि, अन्यतरभेदः, समुदाभेदः प्रत्येकभेद इत्यादिना। आद्यः गुणे द्रव्यं नेति भेदः। द्वितीयः गुणे घटो नेति प्रतीतिसिद्धभेदः। तृतीयः भूतलवृत्तित्वविशिष्टद्रव्यभेदः। चतुर्थः– द्रव्यगुणोभयभेदादि। पञ्चमः द्रव्यगुणान्यतरभेदः। षष्ठः द्रव्यगुण-कर्मसमुदायभेदः। सप्तमः द्रव्यभेदः गुणभेदः कर्मभेदश्च। भविष्यतीति प्रतीति-विषयः प्रागभावः। ध्वस्तो नष्ट इति प्रतीति विषयः प्रध्वंसाभावः। नास्तीति, प्रतीतिविषयः अत्यन्ताभावः। न भवतीति प्रतीतिविषयः अन्योन्याभावः। नास्ति-पदाभिलापस्थलएवात्यन्ताभावो बोध्यते। परं तु तादात्म्यसम्बन्धेन नास्तीत्यत्र नास्तिपदप्रयोगेप्यन्योन्याभाव एव बोध्यते। भूतले न घट इत्यत्र नास्तिपदप्रयोगाभावेपि सप्तम्यन्तानुयोगिवाचकपदसमभिव्याहृतनञः अत्यन्ताभावर्थकत्वमिति नियमेन अत्यन्ताभाव एव बोध्यते। संयोगसम्बन्धेन द्रव्यत्वाभावः व्यधिकरणसम्बन्ध-त्वावच्छिन्नप्रतियोगिताकाभाव अयं च केवलान्वयी। **सौन्दलमते** घटत्वेन पटो नास्तीत्याकारकप्रतीतिसिद्धाभावः व्यधिकरणधर्मावच्छिन्नप्रतियोगिताकाभावः घट-त्वेन पटवान्नेत्याकारकप्रतीतिसिद्धभेदः व्यधिकरणधर्मावच्छिन्नावच्छेदकताक-प्रतियोगिताकभेदः द्रव्यत्वेन घटो नास्तीत्याकारकप्रतीतिसिद्धाभावः सामान्यरूपेण विशेषाभावः घटत्वेन द्रव्यं नास्तीत्याकारकः विशेषरूपेण सामान्याभावश्च आङ्गी-क्रियते। वह्नित्वेन तार्णातार्णदहनोभयं नास्ति घटत्वेन घटपटोभयं नास्ती-त्यादेप्रतीतिसिद्धा अन्ये बहुविधाऽभावाऽपि अंगीकृताः।

वृत्तिनियामकसम्बन्ध निरूपणम्

संयोगसम्बन्धः, समवायसम्बन्धः, कालिकसम्बन्धः, स्वरूपसम्बन्धः दिक्कृत विशेषणतासम्बन्धः, पर्याप्तिसम्बन्धः स्वाभावद्वृत्तित्वसम्बन्धप्रभृतयः वृत्ति-

नियामकसम्बन्धाः। वृत्तिनियामकत्वं च वृत्तितावच्छेदकत्वम्। तच्च तेनसम्बन्धेन-तद्वानितिप्रतीतिनिवन्धनम्। द्रव्ययोरवयवावयविभिन्नयोः संयोगः सम्बन्धः। अयुत-सिद्धयोः समवायः सम्बन्धः। अयुतसिद्धाश्च अवयवावयविनौ गुणगुणिनौ क्रिया-क्रियावन्तौ जातिव्यक्ति विशेषनित्य द्रव्येच। सर्वस्य पदार्थस्य काले वर्तमानत्वं कालिकः सम्बन्धः अत्र च सर्वाधारः काल इति नियमो नियामकः। जन्ये पदार्थ सत्वेपि कालिक एव सम्बन्धः तत्र जन्यानां कालोपाधित्वमिति नियमो नियामकः। नित्येषुकालिकायोगइतिनियमेन नित्यपदार्थेषु न कोपि पदार्थः कालिक-सम्बन्धेन वर्तते। विभिन्नकालीनयोः विषयत्वान्यसम्बन्धेनाधाराधेयभावविरह इति नियमेन जन्येष्वपिभिन्नकालिकाः पदार्थाः न कालिकसम्बन्धेन वर्तन्ते। भिन्नकालि-कयोरपि अधाराधेयभावः आगामिपदार्थविषयकज्ञानानुरोधेन अङ्गीक्रियते।

निरूपककोटिप्रविष्टा अभावप्रभृतयः द्रव्यादिपञ्चकभिन्नाः स्वरूपसम्बन्धेन आश्रयेषु वर्तन्ते तथा च द्रव्यादिपञ्चकभिन्नानां आश्रयेषु वर्तमानत्वे स्वरूपसम्बन्ध एव सम्बन्ध इति फलितम्। मूर्तानां दिगुपाधित्वमितिनियमेन मूर्तेषु नित्येष्वनित्येषु च दिक्कृतविशेषणतासम्बन्धेन पदार्थाः वर्तन्ते। उभयत्वत्रित्वादिपदार्थपर्यन्तास्-संख्याः अवच्छेदकताश्च पर्याप्तिसम्बन्धेनापि आश्रयेषु वर्तन्ते। उभयत्वादि-व्यासज्यवृत्तिधर्माः उभयत्वाद्यवच्छेदेनैव पर्याप्तिसम्बन्धेन आश्रयेषूभयप्रभृतिषु वर्तन्ते। अवच्छेदकतास्तु उभयत्वाद्यवच्छेदेन एकत्वावच्छेदेन च आश्रयेषु वर्तन्ते इतीयान् भेदः उभयत्वादीनां अवच्छेदकतानां च वर्तते। केचित्तुविषयताया अपि पर्याप्तिमङ्गीकुर्वन्ति। आर्द्रेन्धनसंयोगरूपोपाधेः धूमवान् बह्वेरित्यत्र बह्विरूपहेतौ स्वाभाववद्वृत्तित्वसम्बन्धेन वर्तते। यद्वैशिष्ट्यं यत्र भासते स एव स्वपदार्थ इति नियमेन स्वपदेनार्द्रेन्धनसंयोगस्य प्रग्रहणे स्वाभाववदयोगोलकं तद्वृत्तित्वं बह्वौ वर्तते इति। सम्बन्धमात्रं किञ्चित्प्रतियोगिकंकिञ्चिदनुयोगिकं च आधेयाः प्रति-योगिनः आधारास्त्वनुयोगिनः।

वृत्त्यनियामकसम्बन्धनिरूपणम्

ते च निरूपककोटिप्रविष्टाः कार्यताप्रभृतयः परस्परासम्बन्धाश्च एते च स्वसामानाधिकरण्य स्वसमानकालीनत्वादयः एवमेवान्येपि ग्राह्याः। वृत्त्यनियामकत्वं च वृत्तितानवच्छेदकत्वं तच्चतेन सम्बन्धेन तद्वानिति प्रतीत्यभावनिबन्धनम्।।

लक्षणदोषनिरूपणम्

अतिव्याप्तिः अव्याप्तिः असम्बन्धश्च आत्माश्रयः अन्योन्याश्रयः चक्रका-पत्तिरित्येते लक्षणदोषाः। अलक्ष्ये लक्षणसत्वमतिव्याप्तिः यथा गोः शृङ्गित्वं

लक्षणमुक्तंचेद्गोभिन्नमहिषादावपि शृङ्गित्वस्य सत्वादतिव्याप्तं तल्लक्षणं भवति। केषुचिल्लक्ष्येषु लक्षणा सत्वमव्याप्तिः, यथा गोः कलरूपवत्वं लक्षणमुक्तं-चेत्कपिलरूपवत्वलक्षणस्य श्वेतगव्यभावादव्याप्तं तल्लक्षणम्। लक्ष्यमात्रे कुत्रापि लक्षणासत्वमसम्बन्धः, यथा– गोरेकशफवत्वं लक्षणमुक्तंचेत्तस्य लक्ष्यभूते गोसामान्ये कुत्राप्यभावादसम्बधितल्लक्षणम्। स्वग्रहाधीनस्वग्रहविषयत्वं आत्माश्रयः। स्वग्रहा-धीनग्रहाधीनस्वग्रहविषयत्वमन्योन्याश्रयः। स्वग्रहाधीनग्रहाधीनग्रहाधीनस्वग्रहविषय-त्वं चक्रकापत्तिः। दोषत्वं च दुष्टताप्रयोजकत्वम्।

हेतुदोषनिरूपणम्

व्यभिचारः विरोधः सत्प्रतिपक्षः आश्रयासिद्धिः स्वरूपासिद्धिः व्याप्य-त्वासिद्धिः बाधः। सिद्धसाधनं अर्थातरं भागासिद्धिः साध्याप्रसिद्धिः साधनाप्रसिद्धि-प्रभृतयो हेतुदोषाः। साध्याभाववद्वृत्तिहेतुर्व्यभिचारः न तु साध्याभाववद्वृत्तित्वमात्रं तन्मात्रस्य अनुमितिप्रतिबन्धकतातिरिक्तवृत्तिविषयताकत्वात्। साध्यभाववद्वृत्तित्व-मात्रमपि हेतुनिष्टव्यभिचारतया व्यवहारन्ति, तथापि न तस्य दोषेष्वन्तर्भावः। एवमेव निश्चितसाध्यवद्व्यावृत्तहेतुरेवासाधारण्यं प्राचीनाम्। नवीनास्तु साध्यासमा-नाधिकरणहेतुमेवासाधारण्यं वदन्ति। एवमन्वयतिरेकदृष्टान्तरहितहेतुरनुपसंहारित्वं प्राचीनमते, नवीनमते अत्यन्ताभावा प्रतियोगिसाध्यकत्वं तत् साध्यव्यापकीभूता-भावप्रतियोगिहेतुर्विरोधः।

केचन एतादृशं विरोधमेवासाधारण्यं साध्यासामानाधिकरण्यमेव विरोधं चाहुः। प्राचीनमते साध्याभावव्याप्यप्रतिहेतुमत्तापरामर्शकालीनसाध्यव्याप्यप्रकृत-हेतुमत्तापरामर्श विषयत्वं सत्प्रतिपक्षदोषः। नवीनमते साध्याभावव्याप्यवत्पक्ष-स्सत्प्रतिपक्षः। पक्षतावच्छेदकाभाववत्पक्ष आश्रयासिद्धिः। हेत्वभाववत्पक्षः स्व-रूपासिद्धिः। साध्याभाववदवृत्तित्वाभाववद्धेतुः व्याप्यत्वासिद्धिः। साध्याभावव-त्पक्षो बाधः। पक्षेसाध्यनिश्चयः सिद्धसाधनम्। अनभिमतार्थसिद्धिरर्थान्तरम्। पक्षतावच्छेदकसामानाधिकरण्येन हेत्वभावो भागासिद्धिः। साध्यतावच्छेदका-भाववत्साध्यं साध्याप्रसिद्धिः। साधनतावच्छेदकाभाववत्साधनं साधनाप्रसिद्धिः। हेतुघटकविशेषणानां व्यभिचारवारकतया साध्यधटकविशेषणानामर्थान्तरसिद्धसाध-नादिवारकतया पक्षघटकविशेषणानामपि क्वचिदाश्रयासिद्धिसाधनादिवारकतया क्वचि-त्स्वोद्भावनीयदोषसङ्गमनफलकत्वेन च सार्थक्यमवधेयम्।

सर्वेषां च पदार्थानां क्लृप्तपदार्थेष्वन्तर्भावप्रकारः

तमः प्रौढ़प्रकाशकतेजस्सामान्याभावरूपः। सादृश्यस्य तद्भिन्नत्वे सति तद्गतभूयोधर्मरूपतया तच्च साधारणधर्मेन्तर्भवति। अतः साधारणधर्मस्सप्तपदा-र्थान्तर्भूत एवम्। स्वरूपसम्बन्धः स्थलभेदेन प्रतियोग्यनुयोगिरन्तर्भावमुपैति। निरूपक-कोटिप्रविष्टः कार्यताप्रभृतयः अधिकरणरूपतां भजन्ते यथा कार्यत्वं कार्यरूपम्। विषयत्वं विषयरूपम्। कालिकदिक्कृतविशेषणता सम्बन्धौ अधिकरणरूपावेव। प्रतिबन्धकसद्भावासद्भावाभ्यामेव प्रकृतकार्योत्पत्त्यनुत्पत्त्योः निर्वाहे अतिरिक्तशक्ते-रनभ्युपगमाच्छक्तेनातिरिक्तपदार्थता। लघुत्वं तु गुरुत्वाभावरूपम्। मृदुत्वकठिनत्वयोः मृदुकठिनावयवसंयोगरूपत्वेन तयोस्संयोगेन्तर्भावः। एवमतिरिक्तत्वेन प्रतीयमानानां पदार्थानां उक्तेषु सप्तसु पदार्थेष्वेवान्तर्भावःन पुनः पृथग्भूतेति ध्येयम्।

भावरूपाभावनिरूपणम्

घटाभावाभावो घटस्वरूपः। घटाभाववद्भेदोपि घटस्वरूपः समनैय्यत्यात्। घटभिन्नभेदो घटत्वरूपः। घटभेदाभावो घटत्वरूपः। घटवद्भिन्नभेदो घटस्वरूपः। घटवद्भेदाभावो घटस्वरूपः। घटावृत्तिर्नास्तीति प्रतीतिसिद्धाभावो घटत्वस्वरूपः स च अभावः घटनिरूपितस्वरूपसम्बन्धावच्छिन्नवृत्तित्वाभाववत स्वरूपेण नास्ती-त्याकारकप्रतीतिसिद्धाभावः। घटध्वंसप्रागभावः घटप्रागभावध्वंसश्च घटस्वरूप एव। घटपटान्यतराभावाभावस्य घटपटान्यतररूपतया अन्यतरान्तर्गतघटरूपत्वमपि सम्भवति। घटपटकुड्यान्यतमाभावाभावस्य घटपटकुड्यान्यतमस्वरूपतया अन्यत-मान्तर्गतघटरूपत्वमपि सम्भवति। एषाञ्चाभावानां भावरूपत्वस्वीकारे तद्भावाभाव-योस्समनैयत्यमेवातिप्रसङ्गानापादकताविशिष्टं प्रयोजकमिति पर्यवस्यति। पूर्वक्षण-वृत्तित्वविशिष्टघटाभावाभावस्य पूर्वक्षणवृत्तित्वविशिष्टघटरूपतया विशिष्टं शुद्धा-न्नातिरिच्यत इति न्यायेन पूर्वक्षणवृत्तित्वविशिष्टघटस्य शुद्धघटस्यचैक्यात् पूर्वक्षण-वृत्तित्वविशिष्टघटाभावाभावोपि पटरूप एव। जलवृत्तित्वविशिष्टो यः पटाभावः तदभावस्य घटे सत्वेन अभावप्रतियोगिकाभावस्याधिकरणरूपत्वाङ्गीकर्तृमते जल-वृत्तित्वविशिष्टघटाभावाभावोपि घटरूप एव। अनयोरभावयोः भावसमनैयत्याभावेपि भावरूपत्वमेवाङ्गीकृतं कैश्चित्। एतन्मते प्रसक्तातिप्रसङ्गाः तत्तदभावाधिकरण-त्वाभावेनैव वारणीयाः। घटाभावस्तत्ज्ञानरूपः तत्ज्ञानकालस्वरूपः अधिकरणरूप इति च केचन मन्यन्ते तन्मते, ज्ञानकालातीन्द्रियाधिकरणानां चक्षुरादिग्रहणायोग्य-तया घटाभावस्यापि चक्षुराद्यग्राह्यत्वप्रसङ्गरूपा अतिप्रसक्तयो दुर्वाराः।

ज्ञायमानस्य कारणत्वप्रतिबन्धकत्वनिरासः

यदि ज्ञायमानं लिङ्गं अनुमितिकरणं तदा धूलीपटले धूमस्य भ्रान्तिमतो वह्निव्याप्यधूमवानयमितिपरामशाध्धूलीपटलंधूमत्वेनावगाहमानादनुमितिर्नस्यात्। तदा लिङ्गज्ञानसत्येपि ज्ञायमानलिङ्गस्याभावात्। कारणाभावात्कार्याभावस्य सर्वसम्मतत्वात्। एवमेव ज्ञायमानं पदं यदि शाब्दधीहेतुः तदामौनिश्लोकादितः शाब्दबोधानुपपत्तिः तदानीं कण्ठताल्वाद्यभिघातसंयोगजन्यध्वनिविशेषरूपस्य ज्ञायमानशब्दस्य अभावात्। एवमेव ह्रदे वह्निभ्रान्तिसत्वे तया च भ्रान्त्या ह्रदोवह्नयभाववानितिज्ञानं प्रतिवध्यते। यदि ज्ञायमानस्य प्रतिबन्धकता तदा ज्ञायमानस्य वह्नेः ह्रदेऽभावात् तत्ज्ञानस्याप्रतिबध्यत्वापत्तिः। एवमेव स्थलविशेषेषु ग्राह्यम्। सर्वत्रापि निश्चयस्यैव प्रतिबन्धकत्वकारणत्वयोरङ्गीकारे घटादिकं प्रति स्वरूपतः कारणानां दन्डकुलालसलिलादीनां निश्चयभिन्नानां कारणत्वभङ्गः दाहादिकं प्रति स्वरूपतःप्रतिबन्धकानां मण्यादीनां निश्चयभिन्नानां प्रतिबन्धकत्वभङ्गश्चेति न शंकनीयम्। नास्माभिस्सर्वत्र ज्ञानस्यैव कारणत्वमुच्यते किन्तुज्ञानस्य कारणताप्रसक्तिस्थले ज्ञायमानस्य तन्निसिद्ध्यते। अतः ज्ञायमानस्य न कारणत्वप्रतिबन्धकत्वे सम्भवतः किन्तु ज्ञानस्यैव ते सम्भवत इति सिद्धान्तः।

कार्यकारणभाव विचारः

यत्सत्वे यत्सत्वमित्यन्वयः, यदभावे यदभाव इति व्यतिरेकश्च कार्यकारणभावं ग्राहयतः। सर्वत्र कार्यकारणयोस्सामानाधिकरण्यमावश्यकम्। समवाय्यसमवायिकारणस्थलयोस्समवायिकारणान्तर्भावेणोभयोः सामानाधिकरण्यं सम्भवतीति ज्ञेयम्। सर्वत्र समवायिकारणस्थले समवायिसम्बन्धेन जायमान घटादिकार्यं प्रति तादात्म्यसम्बन्धेन कपालादिसमवायिकारणानां कारणत्वं वक्तव्यम्। अतः समवायिकारणस्थले समवायसम्बन्ध एव कार्यतावच्छेदकसम्बन्धः तादात्म्यसम्बन्ध एव कारणतावच्छेकसम्बन्धश्च भवतः।

प्रथमासमवायिकारणस्थले समवायसम्बन्धेन जायमानघटादिकार्यं प्रति समवायसम्बन्धेनैव कपालसंयोगादिरूपासमवायिकारणस्य कारणत्वमित्यसमवायिकारणस्थले कार्यतावच्छेदकः कारणतावच्छेदकोऽपि सम्बन्धस्समवायएव।

द्वितीयासमवायिकारणस्थले समवायसम्बन्धेन जायमान घटरूपादिकार्यं प्रति स्वसमवायिसमवेतत्वसम्बन्धेन कपालादिरूपस्य कारणत्वं घटाद्यन्तर्भावेण सामानाधिकरण्यं च बोध्यम्।

परन्तु निमित्तकारणाना बहुविधत्वेन कार्यकारणभेदेन कार्यतावच्छेदककारणतावच्छेदकसम्बन्धभेदः। यथा समवायसम्बन्धेन जायमानघटंप्रति स्वजन्यभ्रमिजन्यभ्रमिवत्वसम्बन्धेन दन्डस्य कारणत्वं उभयो कपालान्तर्भावेण सामानाधिकारण्यम्।

विषयतासम्बन्धेन जायमानघटादिप्रत्यक्षं प्रति तादात्म्यसम्बन्धेन घटादिविषयस्य कारणत्वम्। अत्र च विषयान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्।

प्रतियोगितासम्बन्धेन जायमानघटादिध्वंसंप्रति तादात्म्सम्बन्धेन घटादिप्रतियोगिनां कारणत्वं प्रतियोग्यन्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्।

विषयतासम्बन्धेन जायमानद्रव्यविषयकचाक्षुषप्रत्यक्षं प्रति महत्त्वोद्भूतरूपालोकसंयोगचक्षुस्संयोगानां समवायसम्बन्धेन कारणत्वं विषयान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्। समवायसम्बन्धेन जायमानानुमितित्वावच्छिन्नं प्रति समवायसम्बन्धेन परामर्शस्य करणत्वं आत्मान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्।

एवमेव समवायसम्बन्धेन जायमानोपमितिशाब्दबोधौ प्रति सादृश्यज्ञानपदज्ञानयोः समवायसम्बन्धेन हेतुत्वं आत्मान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्।

विषयतासम्बन्धेन जायमानवाह्यद्रव्यप्रत्यक्षं प्रतीन्द्रियस्य संयोगसम्बन्धेन हेतुत्वं विषयान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्। एवमेवात्मनिवर्तमानानां गुणानां परस्परङ्गार्यकारणभावे प्राप्ति उभयत्रापि समवायसम्बन्धेनात्मान्तर्भावेण हेतुत्वं ज्ञेयम्।

मङ्गलं त्रिविधं ज्ञानात्मकं शब्दात्मकं क्रियात्मकञ्चेति। तत्रस्वप्रतियोगिचरमवर्णानुकूलकृतिमत्तासम्बन्धेन जायमानसमाप्तित्वावच्छिन्नं प्रति समवायसम्बन्धेन ज्ञानात्मकमङ्गलस्य कारणत्वं आत्मान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्।

स्वरूपसम्बन्धेन जायमानसमाप्ति प्रति समवायसम्बन्धेन गगनान्तर्भावेण शब्दात्मकमङ्गलस्य हेतुत्वं बोध्यम्।

स्वप्रतियोगिचरमवर्णानुकूलकृतिमदवच्छेकतासम्बन्धेन जायमानसमाप्तिं प्रति समवायसम्बन्धेन क्रियात्मकमङ्गलस्य शरीरान्तर्भावेण हेतुत्वं बोध्यम्।।

स्वप्रतियोगिचरमवर्णानुकूलकृतिमत्तासम्बन्धेन जायमानसमाप्तित्वावच्छिन्नं प्रति स्वजन्यविघ्नध्वंसवत्तासम्बन्धेन सर्वेषां मङ्गलानां कारणत्वं आत्मान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यमवधेयम्।

स्वरूपसम्बन्धेन जायमानदाहत्वावच्छिन्नं प्रति संयोगसम्बन्धेन वह्नेरिन्धनान्तर्भावेण कारणत्वं बोध्यम्।

कालिकसम्बन्धेन जायमानकार्यं प्रति तादात्म्यसम्बन्धेन कालस्य कालान्त-

र्भावेण कारणत्वं बोध्यम्।

स्वानुकूलकृतिमत्वसम्बन्धेन जायमानकार्यं प्रति ईश्वरस्य तादात्म्यसम्बन्धेन कारणत्वं ईश्वरान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्।

स्वाश्रयसंयोगिसंयुक्तत्वसम्बन्धेन जायमानकार्यं प्रति समवायेनादृष्टस्य कारणत्वं आत्मान्तर्भावेण सामानाधिकरण्यम्।

प्रतिबन्धकसत्वदशायां कार्योत्पत्त्यापत्तिवारणाय कार्यमात्रं प्रति प्रतिबन्धकाभावस्य कारणत्वं वाच्यं कार्योत्पत्त्यनन्तरं पुनस्तत्कार्योत्पत्यापत्तिवारणाय कार्यप्रागभावस्य च हेतुत्वं बोध्यम्।

कार्यमात्रे प्रतिबन्धकाभावस्य लौकिकप्रत्यक्षे विषयस्य च कार्यसहभावेन कारणत्वं वक्तव्यम्। अन्यथा कार्यकाले प्रतिबन्धकसत्वेपि कार्योत्पत्यापत्तिः प्रत्यक्षकाले विषयाभावेपि लौकिकप्रत्यक्षोत्पत्त्यापत्तिरित्यादिकं ग्राह्यम्।

प्रतिबध्यप्रतिबन्धकभावविचारः

तद्वत्ताबुद्धिंप्रतितदभाववत्तानिश्चयः तदभावव्याप्यवत्तानिश्चयः तदभावावच्छेदकतयागृहितधर्मवत्तानिश्चयश्च प्रतिबन्धकः, आद्यः ह्रदो वह्निमानितिबुद्धिं प्रति प्रतिबन्धकः वह्न्यभाववानिति निश्चयः, द्वितीयः वह्न्यभावव्याप्यवानिति निश्चयः, तृतीयः वह्न्यभाववज्जलवद्विषयकनिश्चयविशिष्टजलबह्रदविषयकनिश्चयः तादृशश्च निश्चयः वह्न्यभाववज्जलबद्वृत्ति जलवान् ह्रद इति निश्चयरूपः जलवान् वह्न्यभाववान् जलवान् ह्रदइत्यादिसमूहालंवननिश्चयरूपः जलवान् । वह्न्यभाववानितिनिश्चयविशिष्टजलवान् ह्रद इति निश्चयरूपश्च भवति।

सन्निकर्षो द्विविधः— लौकिकसन्निकर्षः अलौकिकसन्निकर्षश्चेति, आद्यः संयोगः संयुक्तसमवायः, संयुक्तसमवेतसमवायः, समवायः समवेतसमवायः विशेषणविशेष्यभावश्चेति षड्विधः। द्वितीयस्त्रिविधः— सामान्यलक्षणो ज्ञानलक्षणो योगजलक्षणश्चेति। एतदुदाहरणानि पूर्वमुक्तानि।।

प्रतिबध्यतावच्छेदकं तु लौकिकसन्निकर्षाजन्यदोषविशेषाजन्यतत्सम्बन्धावच्छिन्नतद्धर्मावच्छिन्नप्रकारतानिरूपिततद्धर्मावच्छिन्नविशेष्यताशालिबुद्धित्वमेव, नतु-प्रत्क्षत्वानुमितित्वोपमितित्वशाब्दबुद्धित्वनिश्चयत्वस्मृतित्वयथार्थानुभवत्वा यथार्थानुभवत्वादिकंकिमपि प्रत्यक्षत्वाद्यवच्छिन्नंप्रति प्रतिबन्धकत्वस्वीकारे अनुमित्यादीनां प्रतिबध्यतावच्छेदकधर्माक्रान्तत्वभावे न प्रतिबन्धकसत्वदशायामपि अनुमित्यादीनामुत्पतिप्रसंगः। तत्तद्धर्मावच्छिन्नंप्रति पृथक् पृथक् प्रतिबन्धकत्वस्वीकारे गौरवप्रसङ्गः। अतस्तादृशबुद्धित्वमेव प्रतिबध्यतावच्छेदकमिति वक्तव्यम्। प्रतिबन्धक-

तावच्छेदकन्तु अनाहार्याप्रामाण्यज्ञानानास्कन्दिततत्संबन्धावच्छिन्नतद्धर्मावच्छिन्नप्रतियोगिताकाभावत्वावच्छिन्नप्रकारतानिरूपिततद्धर्मावच्छिन्नविशेष्यताज्ञानिनीश्चयत्वमेव न तु ज्ञानत्वादिकं किमपि ज्ञानत्वादेः प्रतिबन्धकतावच्छेदकत्वं संशयादिदशायमपि तद्वत्ताबुद्धेः प्रतिबध्यत्वप्रसङ्गः अतस्तादृशनिश्चयत्वमेव प्रतिबन्धकतावच्छेदकमिति वक्तव्यम्।

मणिमन्त्रादिन्यायेन चैकं प्रतिबन्धकत्वमस्ति, नतवनिश्चयाद्यपेक्षा यथा स्वरूपसम्बन्धेन जायमानदाहत्वावच्छिन्नं प्रति संयोगसम्बन्धेन मणेः प्रतिबन्धकत्वं, यथा वा समवायसम्बन्धेन जायमानघटत्वावच्छिन्नं प्रति संयोगसम्बन्धेन वृष्टेः प्रतिबन्धकत्वम्, यथासर्पदंशनपिशाचादिजन्यबाधां प्रति मन्त्रस्य प्रति बन्धकत्वम्।

मणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वं च निश्चयत्वासमानाधिकरणप्रतिबन्धकत्वं नचैवं सिद्धिनिष्ठस्य अनुमितित्वावच्छिन्ननिरूपितप्रतिबन्धकत्वस्य निश्चयत्वासामानाधिकरण्याभावेन सिद्धिनिष्ठप्रतिबन्धकत्चे तल्लक्षणासमन्वयप्रसङ्ग इति वाच्यम्।

बुद्धित्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपित प्रतिबन्धकत्वासमानाधिकरणप्रतिबन्धकत्वस्य निरूक्तप्रतिबन्धकत्वरूपत्वात्, साध्यसिद्धेरनुमितित्वावच्छिन्नप्रत्येय प्रतिबन्धकत्वेन बुद्धित्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकत्वाभावेन तादृशप्रतिबन्धकत्वासमानाधिकरणप्रतिबन्धकत्वस्य तत्राक्षतत्वान्, न च साध्यसिद्धेरपि साध्यतावच्छेदकावच्छिन्नप्रतियोगिताकाभावत्वावच्छिन्नप्रकारतानिरूपितपक्षता वच्छेदकावच्छिन्नविशेष्यताशालिबुद्धित्वावच्छिन्नंप्रति ग्राह्याभावावगाहित्वेन प्रतिबन्धकतया साध्यसिद्धिष्ठिाया अनुमित्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकतया अपि निरुक्तबुद्धित्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकतासमानाधिकरणत्वेन सिद्धौ तादृशप्रतिबन्धकत्वासमानाधिकरणप्रतिबन्धकत्वाभावेन तन्नमणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वासम्भवप्रसङ्ग इति वाच्यम्। बुद्धित्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकत्वान्यप्रतिबन्धकत्वस्यैव मणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वशब्दार्थत्वात् अनुमितित्वावच्छिन्नप्रतिवध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकतामादाय सिद्धौ लक्षणसमन्वय सम्भवात्, कामिनीज्ञानान्यज्ञानत्वावच्छिन्नं प्रति कामिनीजिजसायाः प्रतिबन्धकत्वं इच्छायां विषयसिद्धेः प्रतिबन्धकत्वञ्च मणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वमेव।

नचैवमपि कामिनीजिज्ञासानिष्टप्रतिबन्धकत्वस्यापि ज्ञानत्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकत्वान्यत्वाभावेनतत्रतल्लक्षणासमन्वयप्रसङ्ग इति वाच्यम्। शानत्वातिरिक्तः किंचिद्धर्मावच्छिन्नप्रकारतानिरूपितविशेष्यत्वाद्यतिरिक्तश्च यो धर्मः तद्धर्मानवच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकत्वान्यप्रतिबन्धकत्वस्यैव निरुक्तप्रति-

बन्धकत्वशब्दार्थत्वात्। तथाच कामिनीजिज्ञासानिष्टप्रतिबंधकतानिरूपितप्रतिबध्यताया ज्ञानमानत्वाद्यतिरिक्तकामिनीज्ञानान्यत्वरूपधर्मावच्छिन्नत्वेन तादृशप्रतिबध्यतामादाय दोषप्रसक्तेरभावात्।

अथवा ज्ञानत्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितनिश्चयत्वावच्छिन्नप्रतिबन्धकत्वात्वप्रतिबन्धकत्वस्यैव निरुक्तप्रतिबन्धकतारूपत्वं वक्तव्यम्। कामिनीजिज्ञासानिष्टप्रतिबन्धकत्वस्य मणिमन्त्रादिनिष्टप्रतिबन्धकत्वानां च निश्चयत्वावच्छिन्नत्वाभावेन साध्यसिद्धिनिष्टप्रतिबन्धकत्वस्यानुमितित्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितत्वेपि ज्ञानत्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितत्वाभावेन विषयसिद्धिनिष्टप्रतिबन्धकत्वस्येच्छात्वावच्छिन्नप्रतिवध्यतानिरूपितस्वेपिज्ञानत्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितत्वाभावेन च मणिमन्त्रसाध्यसिद्धिविषयसिद्ध्यादिषु निरुक्तप्रतिबन्धकत्वस्य न क्षतिः। एवमेव शब्दसाक्षात्कारादिप्रतिबन्धकेषु वाधिर्यमूकत्वदूरस्थत्वादिप्वपि निरुक्तप्रतिबन्धकताभिन्नप्रतिबन्धकत्वस्य न क्षतिः नचैवमपि कम्बुग्रीवादिमदभावप्रतियोगितावच्छेदकत्वस्य कम्बुग्रीवादिषु स्वीकारे गौरवमिति गौरवानेषयस्य कम्बुग्रीवादौ निरुक्ताभावप्रतियोगितावच्छेदकत्वज्ञानं प्रति प्रतिबन्धकतया तन्निश्रये निरुक्तप्रतिबन्धधकताभिन्नप्रतिबन्धकताश्रयत्वस्याभावादव्याप्तिरितिवाच्यम्, तदभाववत्तानिश्चयत्वावच्छिन्नप्रतिबन्धकताभिन्ना तदभावव्याप्यवत्तानिश्चयत्वावच्छिन्नप्रतिबन्धकताभिन्ना निश्चयविशिष्टनिश्चयत्वावच्छिन्नप्रतिबन्धकताभिन्ना या प्रतिबन्धकता तदाश्रयत्वस्यैव निरुक्तप्रतिबन्धकत्वरूपत्वेन मणिमन्त्रादिषु साध्यसिद्धिविषयसिद्धिगौरवनिश्चयमूकत्ववाधरत्वादिषु निरुक्तप्रतिबन्धकताभिन्नप्रतिबंधकताश्रयत्वसत्वेन क्षत्यभावात् नचसाध्यसिद्धि सिद्धिविषयसिद्धिकामिनीजिशासागौरवशानादिषु मणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वव्यवहारो नास्त्येवेति वाच्यम्, शब्दरूपस्य मन्त्रस्य तादृशप्रतिबन्धकत्वसिद्धौ निरुक्तज्ञानेच्छादिषु तादृशप्रतिबन्धकत्वाभावे विनिगमकाभावात् तथा च तदभाववत्तानिश्चय तदभावव्याप्यवत्तानिश्चय तदभावावच्छेदकतयोगृहीतधर्मवज्ञानिश्चय भिन्नानां प्रतिबन्धकानां तत्तत्पदार्थेप्रति मणिमन्त्रादिन्यायेनैव प्रतिबन्धकत्वमङ्गीकार्यम्।

यदि च निरुक्तज्ञानेच्छाप्रभृतिप्वपि तदभाववत्तानिश्चयादिनिष्ठप्रतिबन्धकतासमशीलमेव प्रतिबन्धकत्वामनुभूयते मणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वं नानुभूयतएवैत्युच्यते तदा आत्मगुणत्वासमानाधिकणप्रतिबन्धकरत्वमेव मणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वं वाच्यम्। न च कामिन्यादिजन्यसुखसर्पादिजन्यदुःख शत्रुद्वेषाभिमतकार्यविषयकप्रयत्नादिषु ज्ञानान्तरप्रतिबन्धकत्वेनानुभूतेषु तत्प्रतिबन्धक-

त्वासमन्वयप्रसङ्ग इति वाच्यम्, ज्ञानत्वेच्छात्वासमानाधिकरणप्रतिबन्धकत्वस्यैव निरुक्तप्रतिबन्धकतारूपत्वात्, तथा च निरुक्तसुखादिषु सुवर्णादिनिष्ठोष्णस्पर्श भास्वररूपोपलब्धिप्रतिबन्धकेषु पार्थिवरूपस्पर्शादिप्वपि निरुक्तप्रतिबन्धकत्वस्य न क्षतिरिति, यदिज्ञानेच्छयोरिव आत्मविशेषगुणेषु सुखदुःखादिष्वपि सजातीयप्रतिबन्धकत्वस्यैवानुभवः तदाऽत्मविशेषगुणत्वासमानाधिकरणप्रतिबन्धकत्वमेव मणिमन्त्रादिन्यायेन प्रतिबन्धकत्वं वाच्यम्, तथा च मणिमन्त्रादिषु निरुक्तपार्थिवरूपस्पर्शादिषु दूरस्थत्ववाधिर्यमूकत्वादिषु च तत्तत्प्रतिबन्धकेषु निरुक्तप्रतिबन्धकत्वमक्षतमिति न कापि अनुपपत्तिः।

पक्षतावच्छेदकावच्छेदेन साध्यानुमितिं प्रति पक्षतावच्छेदकावच्छेदेन साध्यसिद्धिरेव प्रतिबन्धिका, न तु सामानाधिकरण्येन साध्यसिद्धिरपि, सामानाधिकरण्येन सिद्धिसत्वेप्यवच्छेदकावच्छेदेन साध्यसंशयजननद्वारा अवच्छेदकावच्छेदेन साध्यानुमितिजननात्। पक्षतावच्छेदकसामानाधिकरण्येनानुमितिंप्रति पक्षतावच्छेदकावच्छेदेन पक्षतावच्छेदकसामानाधिकरण्ये न च साध्यसिद्धिः प्रतिबन्धिका। पक्षतावच्छेदकावच्छेदेनानुमितौ पक्षतावच्छेदकव्यापकविधेयप्रतियोगिकत्वं साध्तावच्छदकसम्बन्धांशे विशेषणतया भासते, तथा च पर्वतो वह्निमानित्यवच्छेदकावच्छेदेनानुमितिः पर्वतत्वव्यापकवह्निप्रतियोगिकसंयोगसम्बन्धावच्छिन्न वह्नित्वावच्छिन्न प्रकारतानिरूपितपत्वावच्छिन्नविशेष्यताज्ञालिनी भवति, निरुक्तसम्बन्धाविषयिणी केवलसंयोगसम्बन्धावच्छिन्नवह्नित्वावच्छिन्नप्रकारता निरुपित पर्वतत्वावच्छिन्नविशेष्यताशालिनी अनुमितिः पर्वतत्वसामानाधिकरण्येन वह्न्यनुमितिः इति सामानाधिकरण्येनानुमितेरवच्छेदकावच्छेदेनानुमितिश्च भेदो ज्ञेयः। अवच्छेदकावच्छेदेन तद्वत्ताबुदिं प्रति अवच्छेदकावच्छेदेन सामानाधिकरण्येन च यद्यनिश्चयः प्रतिबन्धकः, सामानाधिकरण्येन तद्वत्ताबुद्धिं प्रति अवच्छेदकावच्छेदेनैव बाधनिश्चयः प्रतिबन्धकः न तु सामानाधिकरण्येन बाधनिश्यचः प्रतिबन्धकः, एकत्र वाधनिश्चये सत्यपि अन्यत्र तद्बुध्युदयात्।

विषयताविचारः

विषयता त्रिविधा– विशेष्यताप्रकारतासंसर्गताचेति। प्रकारतैव विशेषणतेत्युच्यते, यथा संयोगसम्बन्धेनघटवद्भूतलमित्यत्रभूतलेविशेष्यताघटेप्रकारता संयोगसम्बन्धेसंसर्गता च वर्तते, एवमेव सविषयकपदार्थपञ्चकेपि विषयतात्रयं ग्राह्यम्। सैव विशेष्यता प्रकारता च अनुमितिनिरूपिताचेद्विशेष्यता उद्देश्यतेति प्रकारता विधेयतेति च व्यवह्रियते, यथा पर्वतो वह्निमानित्यनुमितौ पर्वतनिष्ठविशेष्यता

उद्देश्यतेति वह्निनिष्ठाप्रकारताविधेयतेति च व्यवह्रियते:। निर्विकल्पकज्ञाने तु विशेष्यताप्रकारतासंसर्गतारूपविषयताश्रयं नास्ति, किन्तु घट इति सविकल्पकादव्यवहितपूर्वं जायमाने घटविषयकनिर्विकल्पकप्रत्यक्षे विषयीभूतेषु घटघटत्वतत्समवायेषु तुरीयविषयताख्य एकैव विषयता त्रिष्वपि प्रत्येकं सम्भवति। अन्या: कृतिनिरूपिताश्च विषयता: उद्देश्यता विधेयता उपादानव्याख्यास्तिस्त्रो वर्तते यथा– जलानयनाय, कपालाभ्यां, घटमहं कुर्यामित्यत्र जलानयने उद्देश्यत्वाख्या कपालयोरूपादानत्वाख्या घटेविधेयत्वाख्या च विषयता वर्तते, अनयारीत्या सर्वा अपि कृतिनिरूपितविषयता: ज्ञेया:। घटं न जानामीत्यत्र द्वितीयार्थीभूतविषयत्वस्य ज्ञाधात्वर्थीभूतज्ञाने समन्वय:, ज्ञानस्य नञ्अर्थीभूताभावे च अन्वय:, तस्य च आख्यातार्थीभूताश्रयत्वेन्वय: तथाचघटविषयकज्ञानाश्रयत्वाभाववानहमितिबोधोऽङ्गीक्रियते नैय्यायिकै:। नञ्समभिव्याहृतज्ञा धातोर्भावरूपाज्ञानार्थकत्वमङ्गीकृत्य-घटविषयकाज्ञानवानहमितिबोधोङ्गीक्रियतेवेदान्तिभि:।।

इदमत्रावधेयम्, समानाधिकरणयोरेकज्ञानीययो: विशेष्यता प्रकारतयो: समनैय्यत्यादभेद इति केचन वदन्ति। तादृशयो: विशेष्यताप्रकारतयो: समनैय्यत्वादवच्छेद्यावच्छेदकभावइत्यपरे वदन्ति। यथा– आद्यमते घटवद्भूतलमितिज्ञाने घटो भूतलांशेविशेषणं घटत्वांशे विशेष्यं च भवति, अत्र घटन्ष्ठिाया: भूतलनिष्ठ-विशेष्यतानिरूपितप्रकारताया: घटत्वनिष्ठप्रकारतानिरूपितविशेष्यतायाश्च अभेदस्याङ्गीकृतत्वेन घटत्वनिष्ठप्रकारतानिरूपिता या घटनिष्ठाप्रकारता तन्निरूपिता या भूतलनिष्ठा विशेष्यता इति तच्छालिवोधोभवतीत्यङ्गीक्रियते। द्वितीयमते घटवद्भूतलमित्यत्र घटत्वनिष्ठप्रकारतानिरूपिता या घटनिष्ठा विशेष्यता तदवच्छिन्नायाघटनिष्ठाप्रकारतातन्निरूपितायाभूतलनिष्ठाविशेष्यता इति तच्छालिवोधोङ्गीक्रियते। आद्यमते तादृशविशेष्यताप्रकारतयोरभेदाङ्गीकारेपि तयो: प्रकारतारूपतैव, न विशेष्यतारूपता नातस्तन्मते घटत्वनिष्ठप्रकारतानिरूपिता या घटनिष्ठा विशेष्यता तन्निरूपिता या भूतलनिष्ठा विशेष्यता इति तच्छालिबोधस्य सम्भव:।

क्रमेण प्रत्यक्षादिप्रमाणचतुष्टयनिरूपणम् संगतिनिरूपणम्

यन्निरूपणानन्तरं यन्निरूप्यते तत्तन्निरूपितसङ्गतिमदितिन्यायेन सङ्गतिमन्तराऽनन्तरोक्तनिरूपणमसङ्गतम्, अतस्सङ्गतिज्ञानाय सा निरूपणीया सङ्गतित्वं च अनन्तराभिधानप्रयोजकजिज्ञासाजनकस्मरणप्रयोजकनिरूप्यनिष्ठसम्बन्धत्वं अत्राऽयं क्रम: अयमेव निरूप्यनिष्ठस्य निरूपितसम्बन्धस्य ज्ञानम्, तदन्वेकसम्बन्धिनो निरूपितस्य ज्ञानम्, तदन्वेकसम्बन्धिज्ञानमपरसम्बन्धिस्मारकमिति नियमेन अपर-

सम्बन्धिनो निरूपणीयस्यस्मृति:, तदनुसङ्गतिमतेऽपरसम्बन्धिनो जिज्ञासा, तदन्वनन्तराभिधानम् तथा च अनुमानस्य व्याप्त्यनुभवप्रयोज्यतया तस्य च प्रत्यक्षप्रमाणाधीन तथा प्रत्यक्षानुमानयोरुपजीव्योपजीवकत्वयोर्वर्तमानतया तादृशोपजीव्योपजीवकत्वसङ्गतौ लक्षणसमन्वय: प्रदर्श्यते, अनन्तराभिधानं नाम अनन्तरोक्तस्यानुमानस्य निरूपणम्, तत्प्रयोजकीभूता या जिज्ञासा प्रत्यक्षप्रमाणनिरूपणानन्तरं अनुमानप्रमाणनिरूपणम् भूयादिति जिज्ञासा तादृशजिज्ञासाजनकं यत्स्मरणं अनुमानस्मरणं तत्प्रयोजको निरूप्यनिष्ठो यस्सम्बन्ध: उपजीव्योपजीवकत्वरूपस्सम्बन्ध: तत्सम्बन्धत्वमुपजीव्योपजीवकभावरूपसङ्गतो वर्तते इति समन्वय:।

स प्रसङ्ग उपोद्घात: हेतुताऽवसरस्तथा।
निर्वाहकैक्यकार्यैक्ये षोढ़ा सङ्गतिरिष्यते।

तत्र स्मृतस्येऽत्पेक्षानर्हत्वं प्रसङ्ग, स्मृतिप्रयोजकं च सारूप्यवैरूप्यादि स्वज्ञानजनकज्ञानविषयत्वं उपोद्घात:, उपजीव्योपजीवकभावो उपजीवयतीत्युपजीव्यम्, प्रयोजकमित्यर्थ:। उपजीवतांत्युपजीवकं प्रयोज्यमित्यर्थ:, प्रतिबन्धकीभूतशिष्यजिज्ञासानिवृत्त्युत्तरकालिनावश्यवक्तव्यत्वं अवसर: स्वकारणजन्यत्वं निर्वाहकेक्यं एतत्फलयोस्सङ्गतिरिति बोध्यम्। स्वकर्मजनकत्वं कार्यैक्यम् एतत्कारणयोस्सङ्गतिरिति बोध्यम्, एतत्कारणयो: सङ्गतिरीति बोध्यम्। अन्यास्सङ्गतय: फलकारणयोरूभयोरपि स्थलभेदेन सम्भवन्तीति बोध्यम्। बहुप्रमाणमूलतया बहुवादिसम्मततया च प्रत्यक्षप्रमाणस्य प्रथमतोनिरूपणम्। प्रत्यक्षप्रमाणस्येन्द्रियरूपतया अनुमानस्य च व्याप्तिज्ञानरूपत्वेन इन्द्रियायत्ततया प्रत्यक्षानन्तरमनुमाननिरूपणे उपजीव्योपजीवकभावस्सङ्गतिरिति बोध्यम्। अनुमाननिरूपणानन्तरं उपमाननिरूपणेऽवसरसङ्गतिर्बोध्या। फलभूताया: गवयो गवयपदवाच्यं इत्याकारकोपमिते: शक्त्यात्मकवृत्तिज्ञानरूपतया तादृशवृत्तिज्ञानस्य शाब्दबोधप्रयोजकतया उपमितिशाब्दबोधयो: फलयोरेव उपजीव्योपजीवकभावसङ्गतिर्बोध्या।

शाब्दबोधविचार:

शाब्दबोधो द्विविध:– खन्डशाब्दबोध: अखन्डशाब्दबोधश्चेति। आद्य: घटमानयेत्यत्र घटपदस्य घटोऽर्थ:। द्वितीयाया: कर्मत्वमर्थ:। आङ्पूर्वकनय्धातोरानयनं अख्यातस्य कृतिश्चार्थ:। एवंरूप: खन्डशाब्दबोध:, द्वितीय:– घटकर्मकानयनानुकूलकृतिमात्रैश्च इत्याकारक: आद्यस्य शाब्दबोधत्वव्यवहारो गौण:, किन्तु शाब्दबोधार्थत्वेन वृत्तिज्ञानस्यैव खन्डबोधत्वव्यवहार:, स च खन्डबोधान्तेवासिनां शाब्दबुद्धिसौकर्यायभवति, गौणत्वं च शक्तिज्ञानजन्योपस्थितिप्रयोज्यशाब्दबोधी-

यविषयत्वाभाववत्वम्।

न्यायमते प्रथमान्तार्थमुख्यविशेष्यकशाब्दबोधोङ्गीक्रियते। यथा– घटमानयेत्यत्र घटकर्मकानयनानुकूलकृतिमान् चैत्र इति।

वैय्याकरणमते भावप्रधानमाख्यातमिति नियमेन भावार्थ मुख्यविशेष्यकबोधोङ्गीक्रियते, भावो नाम धात्वर्थः प्रधानं विशेष्यं यथा तत्रैवचैत्रकर्तृकं घटकर्मकमानयनमिति।

मीमांसकमतेचाख्यातार्थमुख्यविशेष्यकबोधोङ्गीक्रियते। यथा- तत्रैव घटकर्मकानयनानुकूला चैत्रसमवेता कृतिरिति।

परोक्षमनाहार्यमसन्दिग्धमितिन्यायेन शाब्दबोधस्यपरोक्षतयाआहार्यज्ञानभिन्नस्संशयभिन्नश्च भवति।

पुनरपि शाब्दबोधो द्विविधः– लौकिको वैदिकश्चेति। आप्तवाक्यजन्यबोधो लौकिकः। श्रुतिस्मृत्यादिजन्यबोधो वैदिकः।

शक्तिज्ञानजन्यशाब्दबोधसामग्री प्रदर्श्यते, प्रथमं पदज्ञानं तदनुशक्तिज्ञानम्, द्वाभ्यामुपस्थितिः, तदनुशाब्दबोधः। यथा– घटमानयेत्यत्र प्रथमं घटपदज्ञानं तदन्यंपदज्ञानम् तदन्यास्पूर्वफलेन धातुज्ञानम्, तदन्वाख्यातज्ञानम्, इदं पदज्ञानमुच्यते। तदनु घटस्य घटे शक्तिः अम्पदस्य कर्मत्वे शक्तिः, अङ्गपूर्वकनय्धातुरानयने शक्तिः, आख्यातस्य कृतौ शक्तिः इति ज्ञानं शक्तिज्ञानं तदनुघटपदात् घट इत्युपस्थितिः, अम्पदात्कर्मत्वमित्युपमित्याङ्पूर्वकनय्धातोः आनयनमित्युपस्थितिः, आख्यादातिरित्युपस्थितिश्च भवति। तदन्वाकांक्षायोग्यतासन्निधितात्वज्ञानादिसामग्रीबलाद्घटकर्मकानयनानुकूलकृतिमांश्चैत्र इत्याकारकः घटकर्मकानयनानुकूलकृतिप्रकारकः चैत्रविशेष्यकश्च बोधं भवति।

लक्ष्यार्थविषयकशाब्दबोधसामग्री प्रदर्श्यते– प्रथमं पदज्ञानं तदनु शक्तिज्ञानं द्वाभ्यां शक्यार्थोपस्थितिः तदन्वन्वयानुपत्तेस्तात्पर्यानुपपत्तेर्वाज्ञानम् तदनुलक्ष्यपदार्थे तात्पर्यज्ञानम्, तत्लक्ष्यपदार्थोपस्थितिः, तदनु लक्ष्यपदार्थविषयकशाब्दबोधः इत्येवं क्रमः। उदाहरणम्– 'गङ्गायां घोषः इत्यत्र प्रथमं गङ्गापदज्ञानं तदनुसप्तमीविभक्तिज्ञानं, तदनुघोषपदज्ञानम्, तदनुगङ्गादिपदानां शक्तिज्ञानानि, तदनु प्रवाहाद्युपस्थितयः, तदनु प्रवाहवृत्तित्वं घोषेऽनुपपन्नमित्यन्वयापपत्तिज्ञानम् तदनु गङ्गापदस्य प्रवाहवाचकत्वे तीरेवक्तृतात्पर्यमनुपपन्नमिति तात्पर्यानुपपत्तिज्ञानम्, तदनु गङ्गापदं तीरे लाक्षणिकमिति लाक्षणिकत्वज्ञानम्, तदनु गङ्गापदात्तीरमित्युपस्थिनिः तदत्वाकांक्षादिसामग्रीवलात्तीरवृत्तिर्घोष इति शाब्दबोधः।

लक्षणास्थले कुत्रचिदन्वयानुपपत्तिः लक्षणाबीजम्, यथा– गङ्गायां घोषः मंचाः क्रोशन्तीत्यादौ। कुत्रचित्तात्पर्यानुपपत्तिर्लक्षणाबीजम्, यथा– यष्टीः प्रवेशय, छत्रिणो यान्तीत्यादौ इति केचन वदन्ति। तात्पर्यानुपपत्तेस्सर्वत्रापि सम्भवेन सर्वत्रापि तात्पर्यानुपपत्तिरेव लक्षणाबीजमिति सिद्धान्तः। प्रकरणादिकं तात्पर्यग्राहकं तच्च प्रकरणं सन्दर्भभेदेन देशकालाद्यन्यतमरूपतां भजते।

नानार्थकस्थले सैंधवमानयेत्यादावेव तात्पर्यज्ञानस्यावश्यकता, न सर्वत्र शाब्दबोधे तस्यावश्यकतेति केषांचिदाशयः। शाब्दबोधमात्रं प्रति तात्पर्यज्ञानं कारणमिति अन्येषामाशयः।

एतन्मते शक्तिर्लक्षणाचेति वृत्तिर्द्विविधैव न व्यंजनावृत्तिरपि तृतीया अभ्युपेयते, यतः शब्दशक्तिमूलव्यंजनावृत्तिश्शक्तया, अर्थशक्तिमूलव्यंजनावृत्तिरनुमानेन च चरितार्था भवति। यथा– दूरस्था भूधरारम्या इत्यत्र। भूधरपदस्य पर्वतनृपयोस्समाना शक्तिरेवाङ्गीक्रियते। 'गच्छ गच्छसि चेत्कान्त तत्रैव स्याज्जनिर्ममे'त्यादौ इयं कान्ता भर्तृगमनोत्तरकालिकमरणव्यापारवती एतादृशविलक्षणशब्दप्रयोगकर्तृत्वात् इत्यनुमानेनैबार्थशक्तिमूलव्यंजनया बोध्यस्य मरणरूपार्थस्य बोधनात् वृत्तिर्द्विविधैवेतिसिद्धिम्।

अवच्छिन्ननिरवच्छिन्नविषयताविचारः

अनुल्लिख्यमानजात्यखन्डोपाध्यतिरिक्तधर्माणां स्वरूपतोभाने प्रमाणाभाव इति नियमानुरोधेन उल्लिख्यमानजात्यखन्डोपाधीनां तदतिरिक्तघटपटादिधर्माणां च स्वरूपतः (किञ्चिद्रूपम पुरस्कृत्य) भानं नास्तीति सिद्धम् तथा च पर्वतो वह्निमानित्यत्र जातेरनुल्लेखाद्वह्नित्वस्य स्वरूपत एव भानं न तु वह्नित्वत्वरूपेण भानम्। यत्र वह्नित्वविशिष्टवानिति साध्यते तत्र वह्नित्वस्योल्लिख्य मानतया वह्नित्वत्वेन वह्नित्वस्त्य भानं वह्नित्वनिष्ठा साध्यतावच्छेदकता वह्नित्वत्वावच्छिन्ना भवतीत्यर्थः, तथा च यत्र जातेरखन्डोपाधेयोल्लेखः तत्र जात्यखन्डोपाधिवृत्तिधर्मपुरस्कारेण भानम्, यत्र चोल्लेखो नास्ति तत्र स्वरूपत एव भानम्, जात्यखन्डोपाध्यतिरिक्तधर्माणां तु सर्वदापि किञ्चिद्रूपेणैव भानं न तु स्वरूपेन इत्यवधेयम्।

विभक्त्यर्थ विचारः

अस्मिन् शास्त्रे प्रायशः स्थलविशेषेषु गुरुभिरुपदिष्टानेव शाब्दबोधप्रकारान् अन्तेवासिनोऽनधीतसम्पूर्णशास्त्रा विज्ञातुंवक्तुं वा प्रभवन्ति, न पुनस्स्वातन्त्र्येण निरूप

यितुं प्रभवन्ति, अतस्सर्वेपि प्रतिवाक्यमनायासेन यथा वा शाब्दबोधप्रकारं निर्नीतुं प्रभवेयुः तथा तदानुरूप्येण सुप्तिङ्विभक्त्यर्थान् अव्ययार्थान् अर्थनिर्णायकाणि मूलसूत्राणि दुरबगाहताभिया परिहाय सुलभया शैल्या यथामति निरूपयितुं प्रयते।

द्वितीयाविभक्त्यर्थविचारः

द्वितीयाविभक्तेः निष्ठत्वं विषयत्वं विशेष्यत्वं प्रकारत्वं प्रतियोगित्वं निरूपितत्वं व्यापकत्वं चार्थः।

निष्ठत्वं चैत्रो ग्रामं गच्छतीत्यत्र ग्रामनिष्ठोत्तरसंयोगावच्छिन्नक्रियावान् चैत्र इति बोधः।

विषयत्वं घटं जानातीत्यत्र घटविषयकज्ञानाश्रयश्चैत्र इति बोधः।

विशेष्यत्वं पृथिवीं लक्षयतीत्यत्र पृथिवीविशेष्यकलक्षण प्रकारकज्ञानानुकूलकृतिमान् चैत्र इति बोधः। एवमेव पृथिवीं विभजते पृथिवीं निरूपयतीत्यादावपि बोधः लक्षधातोः लक्षण प्रकारकज्ञानानुकूलव्यापारोर्थः। विपूर्वकभजधातोः परस्परविरुद्धसामान्यधर्मव्याप्यविशेषधर्मप्रकारकज्ञानानुकूलव्यापारोर्थः निपूर्वकरूपधातोः लक्षणस्वरूपविभागप्रामाण्यादिप्रकारकज्ञानानुकूलव्यापारोर्थः।

प्रकारत्वं पृथिव्या लक्षणमाहेत्यत्र पृथिवीविशेष्यकलक्षणप्रकारकज्ञानानुकूलव्यापारानुकूलकृतिमान् चैत्र इति बोधः।

प्रतियोगित्वं घटं नाशयतीत्यत्र घटप्रतियोगिकनाशानुकूलव्यापारकर्ता चैत्र इति बोधः।

निरूपितत्वं घटं प्रति कारणं दन्ड इत्यादौ घटनिरूपितकारणतावान् दन्ड इति बोधः।

व्यापकत्वं मासमधीते चैत्र इत्यत्र, मासत्वव्यापकाध्ययनकर्ता चैत्र इति बोधः, क्रोशं कुटिला नदीत्यत्र क्रोशत्वव्यापककौटल्पवती नदीति बोधः, कालाध्यनोरत्यन्तसंयोगे द्वितीयेति सूत्रेण कालाध्ववाचकपदोत्तरवर्तिद्वितीयाया अत्यन्तसंयोगरूपार्थे व्यापकत्वरूपार्थे विधानात्।

एवमेव द्वितीयाविभक्तिस्थलेऽन्यत्रापि संदर्भभेदेनार्थो ज्ञेयः।

तृतीयाविभक्त्यर्थविचारः

तृतीयाविभक्तेः कर्तृत्वं करणत्वं ज्ञानज्ञाप्यत्वं अभेदः, साहित्यम्, प्रतियोगित्वं निरूपितत्वम्, निष्ठत्वम्, समवेतत्वम्, समानकालिकत्वम्, अवच्छिन्नत्वंचार्थः।

कर्तृत्वं चैत्रेण पच्यते तन्डुल इत्यत्र चैत्रकर्तृकपचनकर्मीभूतस्तन्डुल इति बोधः।

करणत्वं परशुना छिनत्तीत्यत्र परशुकरणकच्छेदनकर्ता चैत्र इति बोधः।

ज्ञानज्ञाप्यत्वं धूमेन वह्निमनुमितीत्यत्र धूमज्ञानज्ञाप्य वह्निविधेयकानुमितिमान् चैत्र इत्याकारको बोधः।

अभेदः धान्येन धनवानित्यत्र धान्याभिन्नधनवानयमिति बोधः।

साहित्यं पुत्रेणागतः पितेत्यत्र पुत्रागमनसहितागमनकतो पितेति बोधः।

प्रतियोगित्वं रूपेणरहित इत्यत्र रूपप्रतियोगिकाभाववान् वायुरिति बोधः।

निरूपितत्वं पुत्रेण सहित इत्यत्र पुत्रनिरूपितसाहित्यवानयमिति बोधः।

निष्ठत्वं व्याप्त्या विशिष्टमित्यत्र व्याप्तिनिष्ठप्रकारतानिरूपकाभिन्नमिति बोधः।

समवेतत्वं मया क्रियत इत्यत्र मत्समवेतकृतिविषयोऽयमिति बोधः एवमेव मया ज्ञायत इत्यादावपि।

समानकालिकत्वं धावता पुरुषेण पीतमित्यत्रधावनसमानकालिकं पुरुषकर्तृकं पानमिति बोधः।

अवच्छिन्नत्वं यद्विषयकत्वेन ज्ञानस्यानुमितिविरोधित्वमित्यत्र वह्निविषयकत्वावच्छिन्न अनुमितिप्रतिबन्धकतेति बोधः।

एवमेवान्यत्रापि तृतीयाविभक्तिस्थलेऽर्थोति ज्ञेयः।

चतुर्थीविभक्त्यर्थविचारः

उद्देश्यत्वं तृप्तिप्रयोजकत्वं, समवेतत्वं, निष्पत्तिप्रयोजकत्वं, विकारित्वं, वृद्धिप्रयोजकत्वं, आश्रितत्वं, विषयत्वं, स्वापहरणेच्छाप्रयोज्येच्छाविषयत्वम्, प्रयोजकत्वम्, इच्छाधीनेच्छाविषयत्वं च चतुर्थ्यर्थाः।

उद्देश्यत्वं ब्राह्मणाय गां ददातीत्यत्र ब्राह्मणोद्देश्यकगोकर्मकदानवानयमिति बोधः।

तृप्तिप्रयोजकत्वं भूतेभ्यो बलिरित्यत्र भूततृप्तिप्रयोजकीभूता बलिरिति बोधः।

समवेतत्वं गवे सुखमित्यत्र गोसमवेतं सुखमिति बोधः।

निष्पत्तिप्रयोजकत्वं यूपायदार्वित्यत्र यूपनिष्पत्तिप्रयोजकीभूतं दार्विति बोधः।

विकारित्वं कुन्डलायाष्टापदमित्यत्र कुन्डलविकार्यष्टापदमिति बोधः।

वृद्धिप्रयोजकत्वं वृक्षायोदकं सिञ्चतीत्यत्र वृक्षवृद्धिप्रयोजकीभूतसेचनकर्तायमिति बोधः।

आश्रितत्वं नारदाय रोचते कलह इत्यत्र नारदाश्रितप्रीतिविषयीभूतः कलह इति बोधः।

विषयत्वं पुष्पेभ्यः स्पृहयतीत्यत्र पुष्पविषयकेच्छावानयमिति बोधः।

स्वाहरणेच्छाप्रयोज्येच्छाविषयत्वं एधेभ्यो व्रजतीत्यत्रइन्धनाहरणेच्छाप्रयोज्येच्छाविषयगमनकर्तायमिति बोधः।

प्रयोजकत्वं अन्नाय यतत इत्यत्र अन्नसम्पादनप्रयोजकी भूतयन्नवानयमिति बोधः।

इच्छाधीनेच्छाविषयत्वं यागाय यातीत्यत्र यागदर्शनेच्छाधीनेच्छाविषयगमनकर्तायमिति बोधः।

एवमन्यत्रापि चतुर्थ्यर्थोज्ञेयः।

पञ्चमीविभक्त्यर्थविचारः

अवधिमत्वं, प्रतियोगित्वं, जन्यत्वं, स्वकर्तृकोच्चारणाधीनत्वं, निरूपितत्वं, ज्ञानज्ञाप्यत्वं, आरम्भः, पर्यन्तः, तदपेक्षत्वं इमेपञ्चम्यर्थाः।

अवधिमत्वम्– वृक्षात्पर्णं पततीत्यत्र वृक्षावधिकपतनाश्रयं पर्णमिति बोधः।

प्रतियोगित्वम्– घटः पटाद्भिन्नइत्यत्र पटप्रतियोगिकभेदाश्रयो घट इति बोधः।

जन्यत्वम्– दन्डाद्घट इत्यत्र दन्डजन्यो घट इति बोधः।

निरूपितत्वम्– साध्याभाववतोऽवृत्तिरित्यत्र साध्याभाववन्निरूपितवृत्तित्वाभाववानिति बोधः।

ज्ञानज्ञाप्यत्वम्– पर्वतोवह्निमान्धूमादित्यत्र धूमज्ञानज्ञाप्यवह्निमान्पर्वत इति बोधः।

आरम्भः– आजननादध्यस्यतीत्यत्र जननारम्भकाभ्यास कर्तायमिति बोधः, आद्यशरीरप्राणसंयोगो जननम्।

पर्यन्तः आमरणाद्ध्यायतीत्यत्र मरणपर्यन्तध्यानवानयमिति बोधः, चरमशरीरप्राणसंयोगध्वंसो मरणम्।

तत्कर्तृकोच्चारणाधीनत्वम्– पन्डितात्पुराणंशृणोतीत्यत्र पन्डितकर्तृकोच्चारणाधीनश्रवणकर्ता अयमितिबोधः।

तदपेक्षत्वम्– अयमस्माद्दीर्घ इत्यत्र एतदपेक्षदीर्घत्ववानयमिति बोधः।

एवमन्यत्रापि पञ्चम्यर्था विज्ञेयाः।

षष्ठीविभक्त्यर्थविचारः

विषयत्वं, विशेष्यत्वं, प्रकारत्वं, प्रतियोगित्वं, निरूपितत्वं, वृत्तिः, स्वामितानिरूपितस्वत्वं, प्रतिपादकत्वं, उच्चरित्वं, प्रतियोगित्वानुयोगित्वे अभेदः, कर्तृत्वं, कर्मत्वं, अवयवत्वं, करणत्वं, समवेतत्वं, स्वसमभिव्याहृतपदार्थतावच्छेदकजातिशून्यषष्ठ्यन्तपदार्थव्यावृत्तत्वं च षष्ठ्यर्थाः।

विषयत्वम्– घटस्य ज्ञानमित्यत्र घटविषयकं ज्ञानमिति बोधः।

विशेष्यत्वम्– घटस्य लक्षणमाहेत्यत्र, घटविशेष्यकलक्षणप्रकारकज्ञानानुकूलव्यापारानुकूलकृतिमानयमिति बोधः।

प्रकारत्वम्– पृथिव्या लक्षणस्य ज्ञानं जनयतीत्यत्र पृथिवीविशेष्यकलक्षणप्रकारकज्ञानानुकूलव्यापारकर्तायमिति बोधः।।

प्रतियोगित्वम्– घटस्य नाश इत्यत्यत्र घटप्रतियोगिको नाश इति बोधः।

निरूपितत्वम्– घटस्य कारणमित्यत्र घटनिरूपितकारणता वानयमिति बोधः।

वृत्तिः– घटस्य रूपमित्यत्र घटवृत्ति रूपमितिबोधः।

स्वामितानिरूपितस्वत्वम्– राज्ञः पुरुष इत्यत्र राजनिष्ठस्वामितानिरूपितस्वत्ववानयं पुरुष इति बोधः।

प्रतिपादकत्वम्– रामस्य नाममहिमेत्यत्र, रामप्रतिपादकनामधेयमहिमेति बोधः।

उच्चरितत्वम्– आप्तस्य वाक्यमित्यत्र आप्तोच्चरितं वाक्यमिति बोधः।

प्रतियोगित्वानुयोगित्वे भूतलस्य घटस्य च संयोगस्सम्बन्धः इत्यत्र भूतलानुयोगिको घटप्रतियोगिकस्संयोग इति बोधः।

अभेदः– राहोश्शिरः नाम्नोर्द्वयमित्यादौ क्रमेण राह्वभिन्नंशिरः नामाभिन्नं द्वयमिति बोधः।

कर्तृत्वम्– चैत्रस्य भोजनमित्यत्र चैत्रकर्तृकं भोजनमिति बोधः।

कर्मत्वम्– विश्वस्य रक्षितेत्यत्र विश्वकर्मकरक्षणकर्तेति बोधः।

अवयवत्वम्– चैत्रस्य हस्त इत्यत्र चैत्रावयवो हस्त इति बोधः।

करणत्वम्– नाग्निस्तृप्यति काष्ठानां न पुंसां वामलोचनेत्यादो, काष्ठकरणकर्तृत्वभाववानाग्निः पुरुषकरणकतृत्यभाववतोवामलोचनेति बोधो क्रमेण ज्ञेयौ।

समवेतत्वम्– घटस्य रूपमित्यत्र घटसमवेतं रूपमिति बोधः।

स्वसमभिव्याहृतपदार्थतावच्छेदकजातिशून्यषष्ठ्यन्तपदार्थ व्यावृत्तत्वं नराणां क्षत्रियश्शूर इत्यत्र क्षत्रियत्वशून्यनरव्यावृत्त शूरत्ववान् क्षत्रिय इति बोधः।

शेषे षष्ठी षष्ठ्यसूत्रेणेतरविभक्तिभिरनिर्दिष्टेष्वर्थेषु षष्ठीविधानात् शतं षष्ठ्यर्था इति प्राचीनवचनाच्च षष्ठीविभक्त्यर्थानामनन्तत्वं एवमन्यत्रापि सन्दर्भभेदेन षष्ठ्यर्था विज्ञेयाः।

सप्तमविभक्त्यर्थविचारः

आधेयत्वं, विषयत्वं, विशेष्यत्वं, निरूपितत्वं, व्यापकत्वं, अभेदः, अवच्छेद्यत्वं, घटकत्वं, प्रतिपाद्यत्वं, प्रकारत्वं, सामानाधिकरण्यरूपवैशिष्ट्यं, समानकालिकत्वं, पूर्वकालिकत्वं, उत्तरकालिकत्वं, अनुयोगित्वं, प्रतियोगित्वं, स्वविषयकेच्छाधीनत्वं स्वसमभिव्याहृतपदार्थतावच्छेकजातिशून्यसप्तम्यन्तपदार्थव्यावृत्तत्वं, कार्यकारणभावः, एतेसप्तम्यर्थाभवन्ति।

आधेयत्वम्– भूतले घट इत्यत्र भूतलवृत्तिघट इति बोधः।

विषयत्वम्– कान्तायां रतिः सर्पे द्वेष इत्यादौ कान्ताविषयिणो रतिः सर्पविषयको द्वेष इति बोधौ भवतः।

विशेष्यत्वम्– पर्वते वह्निमनुमीनोमित्यत्र पर्वतविशेष्यकवह्निविधेयकानुमितिमानहमिति बोधः।

निरूपितत्वम्– भूतले वर्तते घट इत्यत्र भूतलनिरूपितवृत्तिताबान्घट इति बोधः।

व्यापकत्वम्– दिने दिने पटतीत्यत्र दिनत्वव्यापकपटनानुकूलकृतिमानयमिति बोधः।

अभेदः– शिवे भागवत इत्यत्र शिवाभिन्नभगवद्विषयकभक्तिमानयमिति बोधः।

अवच्छेद्यत्वम्– अग्रे वृक्षः कपिसंयोगीत्यत्र अग्रावच्छिन्नकपिसंयोगवान् वृक्ष इति बोधः।

घटकत्वम्– बने वृक्षः सूत्रे पदमित्यादौ वनघटकीभूतो वृक्षः सूत्रघटकं पदमिति बोधौ भवतः।

प्रतिपाद्यत्वम्– शास्त्रे विषय इत्यत्र शास्त्रप्रतिपाद्यो विषय इति बोधः।

प्रकारत्वम्– पर्वते वह्नौ सन्दिहान इत्यत्र पर्वतविशेष्यकबह्निप्रकारकसन्देहवानयमिति बोधः।

सामानाधिकरण्यरूपवैशिष्ट्यम्– द्रव्यकर्मभिन्नत्वे सति सा मान्यवान् गुण इत्यत्र द्रव्यकर्मभिन्नत्वविशिष्टसामान्यवान् गुण इति बोधः।

समानकालिकत्वम्– वित्ते नष्टे वितरणमहो कर्तुमिच्छन्ति मूढा हत्यत्र, वित्तनाशकालिकवितरणचिकीर्षावन्तोमूढा इति बोधः, पितरि समायति पुत्रः पाठशालां गत इत्यत्राप्येवमेव।

पूर्वकालिकत्वम्– पितरि प्रमिष्यति गत इत्यत्र पितृगमन पूर्वकालिकगमनकर्तायमिति बोधः।

उत्तरकालिकत्वं पितरि गते गत इत्यत्र पितृगमनोत्तर कालिकगमनकर्ता पुत्र इति बोधः।

अनुयोगित्वम्– भूतले घटसंयोग इत्यत्र भूतलानुयोगिको घटसंयोग इति बोधः।

प्रतियोगित्वम्– भूतलसंयोगो घट इत्यत्र, भूतलानुयोगिकः घटप्रतियोगिकः संयोग इति बोधः।

स्वविषयकेच्छाधीनत्वम्– चर्मणि द्वीपिनं हन्तीत्यत्र चर्मविषयकेच्छाधीनद्वीपिहननकर्तायमिति बोधः।

स्वसमभिव्याहृत पदार्थतावच्छेदकजातिशून्यसप्तम्यन्तपदार्थव्यावृत्तत्वम् नरेषु क्षत्रियश्शूर इत्यादौ। क्षत्रियत्वशून्यनरव्यावृत्तशूरत्ववान् क्षत्रिय इति बोधः।

कार्यकारणभावः– पयःपाने तृषाशाम्यतीत्यत्र पयःपानजन्यतृशाशान्तिमानयमिति बोधः।

एवमेवान्यत्रापि सन्दर्भभेदेन सप्तम्यर्था निर्नेयाः।

अव्ययार्थविचारः

इववद्वायथादिपदानां सादृश्यमर्थः चन्द्र इव मुखमित्यत्र सादृश्यस्य साधारणधर्मतोऽतिरिक्ततावादिमते चन्द्रस्येवशब्दार्थीभूतसादृश्ये निरूपितत्वसम्बन्धेन सादृश्यस्यचाह्लादकमित्यत्राह्लादकपदार्थैकदेशीभूताह्लादकत्वे प्रयोजकत्वसम्बन्धेनान्वये चन्द्रनिरूपितसादृश्यप्रयोजकाह्लादकत्ववन्मुखमिति बोधः।

आह्लादकपदाभावे चन्द्रवन्मुखमित्यादौ चन्द्रनिरूपितसादृश्यवन्मुखमिति बोधः। अह्लादकत्वेन चन्द्रवन्मुखमित्यादावाह्लादकत्वप्रयोज्यचन्द्रनिरूपितसादृश्यवन्मुखमिति बोधः। चन्द्रमुखी बालेत्यादौ चन्द्रपदस्य चन्द्रसादृश्यविशिष्टार्थकत्वे चन्द्रनिरूपितसादृश्यविशिष्टाभिन्नमुखविशिष्टा बालेति बोधः। चन्द्राह्लादकंमुखमित्यादौ चन्द्रपदस्य चन्द्रनिरूपितसादृश्यप्रयोजकार्थकत्वे चन्द्रनिरूपितसादृश्यप्रयोजकाभिन्नाह्लादकत्ववन्मुखमिति बोधः।

चन्द्रवद्भातिमुखमित्यादौ भाधातोः ज्ञानार्थकत्वे न तदुत्तरवर्त्याख्यातस्य

विषयत्वार्थकत्वेन वच्छब्दार्थसादृश्यस्य प्रकारतानिरूपकत्वसम्बन्धेन ज्ञानेऽन्वये चन्द्रनिरूपितसादृश्यप्रकारकज्ञानविषयो मुखमिति बोधः, चन्द्रवदाह्लादकं भाति-मुखमित्यत्र चन्द्रनिरूपितसादृश्यप्रयोजकाह्लादकत्वप्रकारकज्ञानविषयो मुखमिति बोधः। सादृश्यस्य साधारणधर्मतोऽनतिरिक्ततावादिमते प्रयोजकत्वस्थानेऽभेदो ज्ञेयः। एकदेशान्वयानङ्गीकारे चन्द्रवदाह्लादकं मुखमित्यादावाह्लादकपदस्यैव चन्द्रनिरूपित-सादृश्यप्रयोजकाह्लादकत्वाविशिष्टार्थकत्वं अन्यस्य तात्पर्यग्राहकत्वं चाङ्गीकार्य इवादिशब्दसमभिव्याहारदशायामेवंक्रमेण ज्ञाब्दबोधा विज्ञेयाः।

इत्युवाच नृपं विप्र इत्यादावितिशब्दस्य पूर्वोक्तवाक्यार्थ एवार्थः, अस्य च वचि धात्वर्थैकदेशीभूतज्ञाने विषयत्वसम्बन्धेनान्वयः तथा च पूर्वोक्तवाक्यार्थवि-षयकज्ञानजनकशब्दप्रयोगकर्ता विप्र इति बोधः, इत्थमेवमादीनामिवमेवार्थो ज्ञेयः। स्थाणुः पुरुष इति ज्ञात इत्यत्रेतिशब्दस्य प्रकारतानिरूपकत्वमर्थः पुरुषपदं च पुरुषत्वार्थकं तथा च पुरुषत्वप्रकारकज्ञानविषयः स्थाणुरिति बोधः। ब्राह्मण इति नमस्करोतीत्यत्रेतिशब्दस्य स्वसमभिव्याहृतपदार्थतावच्छेदकप्रकारकज्ञानहेतुकत्वमर्थः तथा च ब्राह्मणत्वज्ञानहेतुकनमस्कारकर्ताऽयमिति शाब्दबोधः। तमाल इति वृक्ष इत्यादावितिशब्दस्याभेदोऽर्थः तथा च तमालाभिन्नो वृक्ष इति बोधः। ग्रन्था-न्तेवर्तमानस्येतिशब्दस्य समाप्तत्वार्थकत्वेन ग्रन्थस्समाप्त इति बोधः। किं पद-समभिव्याहृतेतिशब्दस्य जिज्ञासाविषयहेतुकत्वमर्थः तथा च किमिति भगवन्तं भजत इत्यादौ जिज्ञासाविषयहेतुकभगवद्विषयकभक्तिमानयमिति बोधः। इतिशब्दस्य क्वचिच्छब्दस्वरूपमप्यर्थः। यथा– गवित्याहेत्यत्र गोशब्दस्वरूपाभिन्नज्ञाना-नुकूलव्यापारानुकूलकृतिमानयमितिबोधः।

दृष्ट्वा गत इत्यादौ क्त्वप्रत्ययान्ताव्ययानामुत्तरकालीनत्वमर्थः, तथा च दर्शनो-त्तरकालिकगमनाश्रयोयमिति बोधः, विलोक्य प्रविश्येत्यादिल्यबन्तानामप्येवमेवो-त्तरकालीनत्वमर्थः। शाब्दबोधः पूर्ववदेव तथा च ल्यप्प्रत्यायान्तपदार्थस्य क्त्वा-प्रत्ययान्त पदार्थस्य च क्रियासमानाधिरण्यं क्रियापूर्वभावित्वं चावश्यकम्। द्रष्टुं गत इत्यादितुमुन्नन्ताव्ययस्थले तुमुन्प्रत्ययस्येच्छाप्रयोज्यत्वं इच्छाधीनेच्छाविषयत्वं वा अर्थः तथा च दर्शनेच्छाप्रयोज्यगमनकर्तायमिति बोधः।

सम्यक्पठतीत्यादौ सम्यक्पदार्थश्श्रद्धापूर्वकत्वरूपः, तथा च श्रद्धापूर्वक-त्वविशिष्टपठनकर्तायमिति बोधः। सम्यक्स्वपितीत्यादौ जाग्रत्ज्ञानाभावसामा-नाधिकरण्यं सम्यक्पदार्थः तथा च जाग्रत्ज्ञानाभावसमानाधिकरणस्वापकर्ताय-मिति बोधः।।

सम्यक्फलतीत्यत्र सम्पूर्णत्वम्, सम्यङ्नमस्करोतीत्यत्र भक्तिपूर्वकत्वम्, सम्यक्पश्यति कान्तामित्यादावनुरागपूर्वकत्वम्, सम्यक्ताडयतीत्यादौ दयाराहि-त्यपूर्वकत्वं च सम्यक्पदार्थः, एवं स्थल भेदेन सम्यक्पदार्थो ज्ञेयः।।

क्रियाविशेषणस्थले शाब्दबोधविचारः

स्तोकं पचतीत्यादौ स्तोकपदार्थस्याल्पस्य पच्धात्वर्थीभूत पाकेऽभेद सम्बन्धेना-न्वयेल्पाभिन्नपाकानुकूलकृतिमानयमिति बोधः, सुखं शेत इत्यादौ सुखपदस्य सुख-जनके लक्षणा तथा च सुखजनकाभिन्नशयनकर्तायमिति बोधः। मधुरं रौति पिक इत्यादौ मधुराभिन्नकूजनकर्ता पिक इति बोधः।

जगदाविर्भावविषये मतभेदाः

केचन आरम्भवादिनः केचन परिणामवादिनः, तत्रचारम्भवादिनो नैयुया-यिकाः, परिणामवादिनःसांख्याः तत्रचारम्भवादिनः घटादिरूपावयविनः कपा-लाद्युपादानकारणैर्जन्यन्ते न तु कपालादय एव घटाद्यात्मना परिणमन्ति। अतः कपालादिभ्यो भिद्यन्ते घटादय इति वदन्ति। परिणामवादिनस्तु मृदाद्युपादा नपरिणामा एव घटाद्यवयबिनः, नतूपदानेभ्यो भिद्यन्तेऽवयविनः इति वदन्ति।।

एवं नैयुयायिका असत्कार्यवादिनः, सांख्यादयस्तु सत्कार्यवादिनः, स्वोत्पत्तेः प्राक् घटादिकार्यमसदेव कपालादिकारणैर्जन्यते इत्यसत्कार्यवादिनामाशयः। मृदाद्युपादानेषु संस्कारात्मना (सूक्ष्मरूपेण) स्वोत्पत्तेः पूर्वं वर्तमानमेव घटादि-कार्यमाविर्भवतीति सत्कार्यवादिनामाशयः।

प्रत्यक्षादिप्रमाणैः पदार्थसिद्धिविचारः

त्र्यणुकादिघटपर्यन्तानामवयविरूपाणां पृथिव्यप्तेजसांसिद्धिश्चक्षूरूपेण त्वग्रूपेण च प्रत्यक्षप्रमाणेन सम्भवति, बाह्यद्रव्यप्रत्यक्षे त्वक्चक्षुषोः कारणत्वात्, परमाणु-रूपाणां द्व्यणुकरूपाणां च पृथिव्यप्तेजसां सिद्धिस्त्वनुमानप्रमाणेनैव भवति, तथाहि, जालसूर्यमरोचिस्थं सूक्ष्मतमुपलब्धिविषयीभूतं रजः सावयवं चाक्षुषद्रव्यत्वादित्यनु-मानेन त्र्यणुकसिद्धिः, त्र्यणुकावयवोपि सावयवः महदारम्भकत्वात्तंतुवदित्यनुमानेन परमाणुसिद्धिः।

रूपवद्द्रव्यासमवेतस्पर्शः क्वचिदाश्रितः स्पर्शत्वात् पृथिवीसमवेतस्पर्शवत्। असति रूपवद्द्रव्याभिघाते पर्णादिषु योयंशब्दसन्तानः स स्पर्शवद्वेगवद्द्रव्यसंयोग-जन्यः अविभज्यमानावयवद्रव्यसम्बन्धिशब्दसन्तानत्वात् दण्डाभिहतभेरीशब्द-सन्तानवत्। नभसि तृणतूलस्तनयित्नुविमानानां धृतिः स्पर्शबद्वेगवद्द्रव्यसंयोगहेतुका

अस्मदाद्यनधिष्ठितद्रव्यधृतित्वात् नौकाधृतिवत्। रूपवद्द्रव्याभिघातमन्तरेण तृणे कर्म स्पर्शवद्वेगवद्द्रव्याभिघातजन्यं विजातीयकर्मत्वात् नदपराहतकाशादिकर्मवत् इत्याद्यनुमानेनैवीयोस्सिद्धिर्द्रष्टव्या।

सुवर्णं तैजसं प्रतिबन्धकाभावविशिष्टात्यन्तानलसंयोगसमानकालीनानुच्छिद्यमानद्रवत्वाधिकरणत्वात् यन्नैवं तन्नैवं यथा घट इत्यनुमानेन सुवर्णस्य तैजसत्वसिद्धिः।

घ्राणेन्द्रियं पार्थिवं गन्धेतराव्यंजकत्वे सति गन्धव्यंजकत्वे सति द्रव्यत्वात् कुङ्कुमगन्धाभिव्यंजकगोघृतवत् इत्यनुमानेन घ्राणेन्द्रियस्य पार्थिवत्वं सिद्धयति। रसनेन्द्रियं जलीयं गन्धाव्यञ्जकत्वे सति रसव्यंजकत्वे सति द्रव्यत्वात् सक्तुरसाभिव्यञ्जकोदकवत इत्यनुमानेन रसनेन्द्रियस्य जलीयत्वं सिद्धयति। चक्षुः तैजसं परकीयस्पर्शाव्यंजकत्वे सति परकीयरूपव्यंजकत्वे सति द्रव्यत्वादित्यनुमानेन चक्षुषस्तैजसत्वसिद्धिः।

त्वगिन्द्रियं वायवीयं रूपाद्यव्यंजकत्वेसति स्पर्शव्यंजकत्वेसति द्रव्यत्वात् अङ्गसङ्गिसलिलशैत्याभिव्यंजकपवनवदित्यनुमानेनत्वगिन्द्रियस्यवायवीयत्वं सिद्धयति। पार्थिवपरमाण्वादिषु मणिचन्द्रकान्तिसूर्यकान्तिप्रभृतिषु च पृथिवी- त्वादिहेतुभिः गन्धादिसिद्धिर्द्रष्टव्या।

शब्द पृथिव्याद्यष्टद्रव्यातिरिक्तद्रव्याश्रितः अष्टद्रव्यानाश्रितत्वे सति द्रव्याश्रितत्वादित्यनुमानेन शब्दस्य पृथिव्याद्यष्टद्रव्यातिरिक्तद्रव्याश्रितत्वं सिद्धयति। शब्दो द्रव्यसमवेतः गुणत्वात् संयोगवदित्यनुमानेन शब्दसमवायितयाऽकाशसिद्धिः। शब्दो न स्पर्शवद्विशेषगुणः अग्निसंयोगासमवायिकारणकत्वाभावेसति अकारणगुणपूर्वकप्रत्यक्षविषयत्वात् सुखवत्, पाकजरूपादौ व्यभिचारवारणाय सत्यन्तम्, पटरूपादौ व्यभिचारवारणाय विशेष्यं, जलपरमाणुरूपादौ व्यभिचारवारणाय प्रत्यक्षेति, अनेनचानुमानेन पृथिव्यादिचतुष्टये शब्दाश्रयत्वाभावस्सिद्धयति, शब्दो न दिक्कालमनसां गुणः विशेषगुणत्वात्, शब्दो नात्मविशेषगुणः वहिरिन्द्रियग्राह्यत्वात् इत्यनुमानद्वयेन कालादिचतुष्टये शब्दाभावस्सिद्धयति, शब्दो विशेषगुणः चक्षुर्ग्रहणायोग्यवहिरिन्द्रियग्राह्यजातिमत्वात् स्पर्शवत् इत्यनुमानेन शब्दे विशेषगुणत्वं सिद्धयति। अतः पूर्वानुमानेन शब्दसमवायितया प्रतीयमानं द्रव्यमाकाशमेवेति सिद्धम्।

कालिकपरत्वापरत्वे सासमवायिकारणे (असमवायिकारणजन्ये) जन्यगुणत्वादित्यनुमानेन कालिकपरत्वापरत्वासमवायिकारणीभूतकालपिण्डसंयोगाश्रयत्वेन कालसिद्धिः।

दिक्कृतपरत्वापरत्वे सासमवायिकारणे जन्यगुणत्वात् रूपवदित्यनुमानेनतदुभयासमवायिकारणीभूतदिक्पिण्डसंयोगाश्रयतया दिक्सिद्धिर्द्रष्टव्या। घटाकाशो, मठाकाशः, अतीतकालः, अनागतकालः, प्राची, प्रतीचीत्यादिव्यवहाराणामाकाशकालदिशामनेकत्वभासकानां घटपटादिरूपोपाधिमित्तकत्वेन वास्तविकनित्यमाकाशकालदिशां नास्त्येवेति बोध्यम्।।

अहं सुखी, अहं दुःखी इत्यादिप्रतीतिविषयीभूताहंपदार्थस्यैव जीवात्मतयामनोरूपप्रत्यक्षप्रमाणेन शरीरेन्द्रियाणि कर्तृजन्यकार्यजनकानि करणात्वात्कुठारादिवदित्यनुमानेन च जीवात्मसिद्धिर्द्रष्टव्या। परदेहादौ चेष्टा प्रयत्नसाध्या चेष्टात्वात् मदीयचेष्टावदित्यनुमानेन चेष्टासाधनप्रयत्नाश्रयत्वेन परजीवात्मसिद्धिर्द्रष्टव्या।

क्षित्यङ्कुरादिकं सकर्तृकं कार्यत्वाद्घटवदित्यनुमानेनक्षित्यङ्कुरादिकर्तृतया यस्सर्वज्ञस्ससर्ववित् विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्तेत्यादिशब्दप्रमाणेनचेश्वरसिद्धिः।

सुखादिसाक्षात्कारः सासमवायिकारणः जन्यगुणत्वादित्यनुमानेन सुखादिसाक्षात्कारासमवायिकारणात्ममनस्संयोगाश्रयत्वेन मनसस्सिद्धिः, अमुमेवार्थं आत्मा मनसा संयुज्यते मन इन्द्रियेण इन्द्रियमर्थेन ततः प्रत्यक्षमुत्पद्यत इति न्यायस्सूचयति।

एवं द्रव्यसिद्धिर्निरूपिता।

इदानीं गुणसिद्धिः निरूप्यते। त्र्यणुकाद्यवयविगतरूपादिचतुष्टयस्य त्वक्चक्षूरूपप्रत्यक्षप्रमाणेनैव सिद्धिः। त्र्यणुकगतरूपादिचतुष्टयं सासमवायिकारणं जन्यगुणत्वात् इत्यनुमानेन त्र्यणुकरूपादिचतुष्टयासमवायिकारणीभूतद्व्यणुकगतरूपादिचतुष्टयसिद्धिः। द्व्यणुकगतरूपादिचतुष्टयं सासमवायिकारणं जन्यगुणत्वादित्यनुमानेन परमाणुगतरूपादिचतुष्टयस्य सिद्धिरवगन्तव्या।

त्र्यणुकादिषु वर्तमाना एकत्वद्वित्वादित्वादिसंख्या कुत्रचित्त्वचाकुत्रचित्रचक्षुषा च अयमेक इमौ द्वौ इति प्रत्यक्षप्रतीतितो गृह्यते। त्र्यणुकगतपरिमाणं समवायिकारणं जन्यपरिमाणत्वात् द्व्यणुकगतपरिमाणं सासमवायिकारणं जन्यपरिमाणत्वादित्यनुमानद्वयेन द्व्यणुकगतत्रित्वसंख्यायाः परमाणुगतद्वित्वसंख्यायाश्च सिद्धिः। अथवा अणुपदार्थेष्वेकत्वादिपरार्थपर्यंतायास्संख्यायाश्शब्दप्रमाणेनैव सिद्धिवगंतव्या।

त्र्यणुकादिघटपर्यन्तेष्ववयविषु परिमाणं चक्षुरादिप्रत्यक्ष प्रमाणेन गृह्यते, त्र्यणुकपरिमाणं सासमवायिकारणं जन्यगुणत्वात् रूपवत्, द्व्यणुकपरिमाणं सासमवायिकारणं जन्यगुणत्वात् इत्यनुमानद्वयेन द्व्यणुकगतस्यपरमाणुगतस्यचाणुपरिमाणस्य सिद्धिर्नकथमपि निरूपयितुं शक्या, पारिमाण्डल्यभिन्नानां कारणत्वस्य

साधर्म्यत्वमुपपादयता विश्वनाथपञ्चाननभट्टाचार्येण परिमाणमात्रस्य स्वसमानजातीयस्वोत्कृष्टपरिमाणजनकत्वमित्यादियुक्तिभिः अणुपरिमाणे कारणत्वस्य निराकृतत्वात्। न च त्र्यणुकपरिमाणस्य महत्त्वरूपतया द्व्यणुकपरिमाणस्याणुत्वरूपतया द्वयोस्सजातीयत्वाभावेन परिमाणमात्रस्येतिनियमेन द्व्यणुकपरिमाणस्य त्र्यणुकपरिमाणजनकत्वासम्भवेन त्र्यणुकपरिमाणं सासमवायिकारणमित्यनुमानेन द्व्यणुकपरिमाणसिद्धभावेपि द्व्यणुकपरमाणुपरिमाणयोरणुत्वरूपतया साजात्येन द्व्यणुकपरिमाणं सासमवायिकारणमित्यनमानतः परमाणुपरिमाणं सिद्धयतीतिवाच्यं, अपकृष्टमहत्वंप्रत्यनेकद्रव्यत्वस्य (समवेतसमवेतवृत्तिद्रव्यत्वस्य) प्रयोजकत्वात् त्र्यणुकपरिमाणं प्रति अनेकद्रव्यत्वस्यैव प्रयोजकत्वाङ्गीकारेण त्र्यणुकपरिमाणं सासमवायिकारणमित्यनुमानेन त्र्यणुकपरिमाणकारणत्वेन द्व्यणुक परिमाणस्यैवासिद्धतया तदसमवायिकारणत्वेन परमाणुपरिमाणस्यसिद्धेः दुर्निरूपत्वात्, नच परमाणुद्व्यणुकयोः परिच्छिन्नपरिमाणवत्वरूपमूर्तत्वव्यवहारान्यथानुपपत्त्या परिशेषादुभयत्राप्यणुपरिमाणं सिद्धयतीति वाच्यम्, क्रियाश्रयत्वरूपमूर्तत्वेनापि मूर्तत्वव्यवहारोपपत्तेः तत्र परिमाणानंगीकारेपि बाधकाभावात्, न च परिमाण्यन्तरोत्पादकत्वरूपप्रयोजनाभावेपि विभुपदार्थेषु परिमाणमिव पारमाणुद्व्यणुकयोरप्यणुपरिमाणमङ्गीक्रियते इति वाच्यम्, सर्वत्र शब्दोपलब्ध्यन्यथानुपपत्त्या गगने, सर्वत्रेदानीघटस्तदानींघटइत्यादिप्रत्यक्षप्रतीत्यन्यथानुपपत्या काले सर्वत्रायम्प्राच्योऽयम्प्रतीच्यइत्यादिप्रत्यक्षप्रतीत्यन्यथानुपपत्या दिशि च परममहत्परिमाणस्याङ्गीकृतत्वेन गगनादित्रिके विद्यमानस्य परिमाणस्य किंचिदुत्पादकत्वरूपप्रयोजनाभावेपि प्रयोजनान्तरवत्वेन द्व्यकादिपरिमाणस्येव निष्प्रयोजनत्वाभावात्, न च गगनादित्रिके महत्त्वाङ्गीकरणे निरुक्तप्रयोजनसत्वेपि आत्मनि परिमाणाङ्गीकारे न किंचिदपि प्रयोजनमिति वाच्यम्, जीवात्मनि मध्यम परिमाणाङ्गीकारे यन्मध्यमपरिमाणवत्तदनित्यमितिव्याप्तया अनित्यत्वप्रसङ्गेन अणुपरिमाणाङ्गीकारे सर्वशरीरावच्छेदेन सुखाद्युपलब्ध्यसम्भवप्रसङगेन तत्र महत्वपरिमाणस्यैवानङ्गीकारे प्रत्यक्षेमहत्वस्यकारणत्वेनात्मतद्गतसुखादिप्रत्यक्षानुपपत्त्या च जीवात्मनि परममहत्परिमाणस्य अङ्गीकरणीयत्वेन सर्वजगत्कारणत्वान्यथानुपपत्त्या परमात्मनि च विभुपरिमाणस्यावश्यमङ्गीकरणीयत्वेनात्मपरिमाणस्यापि सप्रयोजनत्वात्, निष्प्रयोजनत्वेन द्व्यणुकपरमाणुपरिमाणयोः एव सिद्धिर्नसम्भवतीति न वाच्यं, द्व्यणुकं परमाणुर्वा परिमाणवान् द्रव्यत्वादित्यनुमानेन तयोरपि परिमाणस्याङ्गीकृतत्वात्, न च परमाण्वादावपि द्रव्यत्वसाम्येन घटादाविव कुतो न महत्वपरिमाणमङ्गीक्रियते

इति वाच्यम्, तदङ्गीकारेतयोः प्रत्यक्षत्वापत्तेः, अपकृष्टमहत्वप्रयोजकस्यानेकद्रव्यत्वस्याभावेन च तत्र महत्वस्यानङ्गीकरणीयत्वात्, न च त्र्यणुकं सपरिमाणं द्रव्यत्वादित्यनुमानेन द्व्यणुके परिमाणसिद्धौ द्व्यणुकपरिमाणं सासमवायिकारणं जन्यगुणत्वादित्यनुमानेन कुतो न परमाप्यपरिमाणस्य सिद्धिरिति वाच्यम्, द्व्यणुकपरिमाणस्य परमाणुपरिमाणजन्यत्वे परिमाणमात्रस्येतिनियमानुसारेण द्व्यणुकपरिमाणस्य परमाणुपरिमाणन उत्कर्षावश्यंभावेन परमाणुतो द्व्यणुकस्याणुतरत्व प्रसंगात्, न च निरुक्तानुमानाभ्यां द्व्यणुकपरमाण्वोरणुपरिमाणसिद्धावपि तत्परिमाणाङ्गीकारेण न किमपि प्रयोजनमस्तीति, वाच्यम्, यत्र द्रव्यत्वं तत्र परिमाणमिति व्याप्यव्यापकभावभङ्गवारणस्यैव प्रयोजनत्वात्, तथाच परमाणुः सपरिमाणः द्रव्यत्वाद्धटवत्, द्व्यणुकं सपरिमाणं द्रव्यत्वाद्धटवदित्यनुमानाभ्यां द्व्यणुकपरमाण्वोरपि परिमाणसिद्धिर्द्रष्टव्या।

त्र्यणुकादिघटपर्यन्तेष्ववयविषु अयमस्मात्पृथगिति प्रात्यक्षिकव्यहारेण पृथक्तासिद्धिः। पृथक्द्रव्यानुयोगिकभेदयोस्समनैयत्येन अयं परमाणुः इतरभिन्नः एतद्विशेषादित्याद्यनुमानैः परमाण्वादिष्वितरभेदसिद्धौ अयं परमाणुः न्वतरेभ्यः पृथक् पृथक्समनियतद्रव्यानुयोगिकभेदाश्रयत्वात् इत्याद्यनुमानैः परमाणुप्वपि पृथक्सिद्धिः द्व्यणुकेष्वेवमेवपृथक्तसिद्धिर्द्रष्टव्या। त्र्यणुकादिपृथक् सासमवायि- कारणं जन्यगुणत्वादित्यनुमानेन वा परमाण्वादिषु पृथक्सिद्धिर्द्रष्टव्या।

त्र्यणुकादिषु इमौसंयुक्ताविति प्रत्यक्षेणसंयोगसिद्धिः। त्र्यणुकं सासमबाधिकारणं जन्यद्रव्यत्वात्, द्व्यणुकं सासमवायिकारणं जन्यद्रव्यत्वादित्यनुमानद्वयेन द्व्यणुकसंयोगस्य परमाणुसंयोगस्य च सिद्धिर्द्रष्टव्या।।

त्र्यणुकादिषु इमौविभक्ताविति व्यवहारेण प्रत्यक्षसिद्धेन विभागसिद्धिः। द्व्यणुकं द्व्यणुकान्तरात् विभक्तं त्र्यणुकनाशवत्वात् ध्वंसप्रागभावयोस्स्वप्रतियोगिसमवायिदेशवृत्तित्वनियमेन न स्वरूपासिद्धिः, अनेन च अनुमानेन द्व्यणुकद्वयविभागस्सिध्यति, द्व्यणुकं नाशप्रतियोगि जन्यभावत्वादित्यनुमानेन द्व्यणुकनाशसिद्धौ परमाणुः परमाण्वन्तराद्विभक्तः द्व्यणुकनाशवत्वादित्यनुमानेन परमाणुद्वयविभागस्सिध्यति।

त्र्यणुकादिषु अयं परः अयं अपर इति व्यवहारात्परत्वापरत्वयोस्सिद्धिः। त्र्यणुकपरत्वापरत्वे सासमवायिकारणे जन्यगुणत्वात् द्व्यणुकपरत्वापरत्वे सासमवायिकारणे जन्यगुणत्वादित्यनुमानाभ्यां द्व्यणुकपरमाणुगतयोः परत्वापरत्वयोः सिद्धिर्द्रष्टव्या।

त्र्यणुकादिषु अयं गुरुत्ववान् आद्यपतनवत्वादित्याद्यनुमानेन गुरुत्वसिद्धिः। त्र्यणुकादिगुरुत्वं सासमवायिकारणं जन्यगुणत्वादित्यनुमानप्रमाणेन द्व्यणुकपरमाण्वोरपि गुरुत्वसिद्धिर्द्रष्टव्या।

त्र्यणुकादिषु इदं द्रवं इति प्रतीत्या द्रवत्वसिद्धिः त्र्यणुकनिष्ठं द्व्यणुकनिष्ठं वा द्रवत्वं सा समवायिकारणं जन्यगुणत्वात् इत्यनुमानतः द्व्यणुकपरमाण्वोरपि द्रवत्वसिद्धिः।

त्र्यणुकादिष्वपि इदं स्नेहवत् पिन्डीभावजनकत्वादित्यनुमानेन स्नेहसिद्धिः। त्र्यणुकादिस्नेहः सासमवायिकारणः जन्यगुणत्वादित्याद्यनुमानेन द्व्यणुकपरमाण्वोरपि स्नेहसिद्धिः।

अयं ध्वन्यात्मकश्शब्दः अयं वर्णात्मकश्शब्दः इति व्यवहारेण श्रोत्रेन्द्रियरूपप्रत्यक्षप्रमाणसिद्धेन श्रोत्रदेशोत्पन्नशब्दस्य सिद्धिः, अयं शब्दः सासमवायिकारणः जन्यगुणत्वादित्याद्यनुमानैः उत्तरोत्तरशब्दासमवायिकारणीभूतानां पूर्वपूर्वशब्दानां सिद्धिर्भवति, न तु श्रोत्रोत्पन्नशब्दातिरिक्तानां पूर्वपूर्वशब्दानां प्रत्यक्षतो ग्रहणम्, तेषु श्रोत्रावच्छिन्नसमवायाभावात्।

ज्ञानविषयकसाक्षात्कारोऽनुव्यवसायः। उत्तरोत्तरोत्पन्नानुव्यवसायेनपूर्वपूर्वोत्पन्नज्ञानं गृह्यते यथा घटं जानामीत्यनुव्यवसायेन घटज्ञानसामान्यस्य सिद्धिः, घटं स्मरामि अनुभवामि यथार्थतोजानामि, अयथार्थतोजानामि साक्षात्करोमि, अनुमिनोमि, उपमिनोमि, शब्दात्प्रत्येमि, सन्दिहे निश्चिनोमि, तर्कयामि सम्भावयामि इत्याद्यनुव्यवसायैः मानसिकप्रत्यक्षरूपैः मनोरूपप्रत्यक्षप्रमाणजन्यैः स्मरणादीनां प्रत्यक्षं भवति। निर्विकल्पकस्यातीन्द्रियत्वेन गौरिति विशिष्टज्ञानं विशेषणज्ञानजन्यं विशिष्टज्ञानत्वात् दन्डीपुरुषइतिविशिष्टज्ञानवत् इत्यनुमानेन विशिष्टज्ञान जनकीभूतविशेषणज्ञानरूपं निर्विकल्पकज्ञानं सिद्ध्यति, नचास्यज्ञानस्य ज्ञानत्वभङ्गः ज्ञानत्वव्यापकसविषयकत्वभावादिति वाच्यम्, तत्र प्रकारत्वादिविषयातात्रयाभावेपि तुरीयविषयताख्या या विषयतायाः तस्य सविषयकत्वभङ्गवारणायाङ्गीकृतत्वात्।

ज्ञाननिष्ठं प्रामाण्यं स्वतो ग्राह्यमिति मीमांसका वदन्ति, अत्र प्रामाण्यं तद्वतितत्प्रकारकत्वरूपं प्रमात्वमेव न तु प्रमाकरणत्वरूपं प्रामाण्यम्। अत्र विवक्षितं सर्वत्र प्रत्यक्षादिज्ञानेषु प्रमाकरणत्वरूपस्य प्रामाण्यस्य वाधितत्वात्।

स्वतोग्राह्यत्वञ्च तदप्रामाण्याग्राहकज्ञानग्राहकसामग्रीजन्य यावद्ग्रहविषयत्वम्, तच्च तदप्रामाण्याग्राहिका या ज्ञानग्राहिका सामग्री तज्जन्ययावद्ग्रहविषयत्वमिति, तथा च यावत्पदस्य व्यापकत्वार्थकतया तदप्रामाण्याग्राहकज्ञानग्राहकसामग्रीजन्यग्रहत्वव्यापकीभूतविषयताश्रयत्वमिति फलितम्। तदर्थः तद्प्रामाण्याग्राहिका तद्धर्मपकारकज्ञानग्राहिका या सामग्री तज्जन्यग्रहत्वव्यापकीभूता या विषयता तदाश्रयत्वाममिति। गुरुणां मुरारिमिश्राणां भट्टानां च मतेषु त्रिष्वपि स्वतोग्राह्यत्वं ज्ञानसाधारणं भवति। तथाहि– गुरुमते सर्वेप्वपि ज्ञानेषु ज्ञानज्ञातृज्ञेयरूपत्रयं भासते, तन्मतेऽयंघटः इत्यादिघटमात्रावगाहिज्ञानं नास्त्येव। अस्मिन् ज्ञाने ज्ञेयविषयकत्वस्यसम्भवेपि ज्ञानज्ञातृविषयकत्वा भावात्। अतो गुरुमते सर्वमपिज्ञानं निरूक्तत्रितयविषयकम् अयं घटः घटमहं जानामीत्यादिरूपं ज्ञेयम्, घटं जानामीत्यन्य घटविषयकज्ञानवानहमित्यर्थः, अस्मिन् ज्ञाने घटरूपं ज्ञेयम् घटज्ञानरूपं ज्ञानं अहंपदार्थजीवरूपो ज्ञाताचैतत्त्रितयं विषयोभवति। मिश्रमते घट इति ज्ञानानन्तरं घटमहंजानामीत्यनुव्यवसायोङ्गीक्रियते। अस्मिन् मते व्यवसायोत्पत्त्यनन्तरमनुव्यवसाय उत्पद्यते। तेन च प्रामाण्यं गृह्यते, अनुव्यवसायो नाम ज्ञानविषयकं मानसंप्रत्यक्षम्। अस्मिन् ज्ञानेपि निरूक्तत्रितयं विषयोभवति। भाट्टमते ज्ञानस्यातीन्द्रियतया ज्ञाततालिङ्गकानुमितेरेव प्रामाण्यं गृह्यते, ज्ञातता च सविषयको ज्ञानजन्यः प्रत्यक्षविषयीभूतः ज्ञानंविषयत्वातिरिक्तो घटादिनिष्टःकश्चन पदार्थ इति तन्मतम् अनुमानप्रयोगस्तु घटः घटत्ववद्विशेष्यकघटत्वप्रकारकज्ञानविषयः घटत्वप्रकारकज्ञातताववत्वात् यन्नैवं तन्नैवं यथापट इति।

अथवा ज्ञाततां पक्षीकृत्य इयं ज्ञातता घटत्ववद्विशेष्यकघटत्वप्रकारकज्ञानजन्या घटवृत्तिघटत्वप्रकारकज्ञाततात्वात् यावद्वृंत्तिः यत्प्रकारिता ज्ञातता सा तद्विशेष्यकतत्प्रकारकज्ञानजन्या यथा पटे पटत्वप्रकारिका ज्ञाततेति अत्र मतत्रयेपि व्यवसायानुव्यवसायानुमितिषु ज्ञानस्य विषयत्वेन तत्ज्ञानगतज्ञानत्ववत् ज्ञानत्वसमशीलस्य ज्ञाननिष्ठप्रामाण्यस्यापि विषयत्वे वाधकाभावात्। घटादिज्ञाननिष्ठप्रामाण्यमपि विषयीभवतीत्यङ्गीक्रियते, तथाच मतत्रयेपि प्रामाण्ये स्वतोग्राह्यत्वस्य लक्षणसमन्वय प्रकार इत्थं गुरुमते मिश्रमते च तत्पदेन यस्मिन् घटादिज्ञाने प्रामाण्यं गृह्यते तद्धटादिज्ञानं ग्राह्यं तस्मिन्नप्रामाण्यज्ञानं तदप्रामाण्यज्ञानं इत्यनेन घटादिज्ञानविशेष्यकाप्रामाण्य प्रकारकज्ञान लभ्यते, तदग्राहिका ज्ञानग्राहिका या सामग्री आत्ममनस्तत्योगविशेषणज्ञानादिरूपा सामग्री तज्जन्यग्रहः घटमहंजानामीत्याकारको ग्रहः तद्विषयत्वं घटज्ञानत्व इव तत्समशीले प्रामाण्येपिवर्तत इति। भाट्टमते तदप्रामाण्याग्राहिका प्रकृतज्ञानग्राहिकायासामग्री इत्युक्तौ आत्ममनस्संयोगपरामर्शादिरूपा सामग्री तज्जन्यो यो ग्रहः घटः घटविशेष्यकघटत्वप्रकारकज्ञानविषय इत्याकारकानुमितिरूपो ग्रहः तद्विषयत्वं ज्ञानत्वं इव तत्समशीले

प्रामाण्येपिवर्तत इति। नैय्यायिकास्तु अयं घट इति ज्ञानोत्तरं घटमहंजानामीति अनुव्यवसायस्य सम्भवेपि न तस्मिन् ज्ञाने तत्प्रामाण्यस्य विषयत्वं सम्भवति अन्यथा ज्ञानत्वसमशीलानां तद्वयक्तित्वतद्गुणत्वप्रत्यक्षत्वादीनामपितत्ज्ञानविषयता प्रसङ्गात्, किञ्च अनुव्यवसायादिनैव प्रामाण्यस्यग्रहणे अनभ्यासदशायां (प्राथमिकघटादिग्रहोत्तरदशायां) इदं प्रमा नवेति प्रामाण्यसंशयो न स्यात्। अतः प्रामाण्यं परतोग्राह्यमेवति वदन्ति परतोग्राह्यत्वञ्च अनुमानादिग्राह्यत्वम्, यज्जातीयज्ञानोत्तरं जायमाना प्रवृत्तिस्सफला भवति तत् ज्ञानं प्रमेति, यथा– अयं घटः इदं रजतं इत्यादिज्ञानं प्रमा सफलप्रवृत्तिजनकत्वात् यन्नैवं तन्नैवं यथा अप्रमेतिव्यतिरेकिणा द्वितीयादिज्ञानेषु इदं ज्ञानं प्रमा सफलप्रवृत्तिजनकत्वात् पूर्वोत्पन्नज्ञानवदित्यन्वयव्यतिरेकिणापि प्रामाण्यं गृह्यते।

नच शब्दवदाकाशमित्यादिज्ञानानां प्रवृत्तिजनकत्वाभावेन प्रमात्वं कथं सिद्ध्यतीति वाच्यम्, अनुमानशब्दान्यतरग्राह्यत्वस्यैव परतोग्राह्यत्वरूपत्वेन वक्तव्यतया शब्दवदाकाशमित्यादि ज्ञानं प्रमा इत्याद्याप्तवाक्येभ्यः तत्तत्ज्ञानेषु प्रामाण्यसिद्धेरप्रत्यूहत्वात्। नच यत्र रजते इदं रजतमितिज्ञानं जातं प्रवृत्तिस्तु न जाता तत्र प्रमात्वं दुर्निरूपमिति वाच्यम्, यत्र प्रवृत्त्यादिकमाप्त वाक्यं वा नास्ति तत्र वास्तविकप्रमात्वसत्वेपि प्रामाण्यसंशयस्यैव सत्वेन प्रामाण्यनिश्चयानुत्पत्तेरिष्टत्वात्। अथवा तादृशज्ञाने प्रवृत्तिफलोपधायकत्वाभावेपि प्रवृत्तिस्वरूपयोग्यताया अक्षतत्वेन एतेनैव लिङ्गेन तत्रापि ज्ञाने प्रमात्वनिर्णयस्सुपषपाद एव। सर्वमतेष्वपि इदं ज्ञानं अप्रमा विफलप्रवृत्तिजनकत्वात् इत्याद्यनुमानैरेवाप्रामाण्यसिद्धिरेष्टव्या। ज्ञातो घट इत्यादौ ज्ञातताया ज्ञानविषयतारूपत्वेनैवोपपत्तौ सविषयिकाया ज्ञाततायाः पार्थक्यं न कल्पनीयं गौरवान्मानाभावाच्च।

अहं सुखी, अहं दुःखी, अहमिच्छामि, अहं द्वेष्मि, अहं करोमीत्यादिमानसप्रत्यक्षैः आत्मीयास्सुखदुःखेच्छाद्वेषप्रयत्ना गृह्यन्ते। परकीयं बुद्ध्यादिषट्कन्तु सुखसङ्कोचविकासादिनानुमीयते। तथाहि– अयं घटविषयकज्ञानवान् घटविषयकेच्छावत्वात्, अयं घटविषयकेच्छावान् घटविषयककृतिमत्वात् अयं घटविषयककृतिमान् कपालविषयककृतिमत्वात् अयं सुखवान् सुखविकासवत्वात्, अयं दुःखवान्, सुखसङ्कोचवत्वात् इति। अयं सुखी अयं दुःखीत्याद्याप्तवाक्यैर्वा परकीयं बुद्ध्यादिषट्कं गृहीतुं शक्यते। धर्माधर्मभावनाख्यसंस्काराणांआत्मीयानां परकीयानां वा सिद्धिस्तु, अयं धर्मवान् अहं धर्मवान् वा ऐश्वर्यसुखादिमत्वात् अयमधर्मवानहमधर्मवान्वा निर्धनत्वाद्दुःखित्वाच्च, अयमहं वा

भावनाख्यसंस्कारवान् स्मृतिमत्वात् प्रत्यभिज्ञावत्वाद्वा इत्याद्यनुमानैरेव भवति।

त्र्यणुकादिवेगः प्रत्यक्षसिद्धः त्र्यणुकादिवेगः सासमवायिकारणः जन्यगुणत्वादित्याद्यनुमानतः द्व्यणुकपरमाण्वोरपि वेगसिद्धिर्द्रष्टव्या कटादिषु अयं स्थितस्थापकसंस्कारवान् विलक्षणक्रियावत्वादित्यनुमानेन स्थितस्थापकसंस्कारसिद्धिर्द्रष्टव्या कटाद्यवयवेषु परमाणुपर्यन्तेषु कटादिनिष्ठस्थितस्थापकः सासमवायिकारणः जन्यगुणत्वात् इत्याद्यनुमानैः स्थितस्थापकसंस्कारस्य सिद्धिर्द्रष्टव्या, एवं गुणसिद्धिःनिरूपिता।

इदं चलति इत्यादिचाक्षुषप्रत्यक्षेण त्र्यणुकादिनिष्ठं कर्म गृह्यते। त्र्यणुकं द्वयणुकं वा सासमवायिकारणं इत्यनुमानतः द्व्यणुकसंयोगस्य परमाणुसंयोगस्य च सिद्धौ कर्मणस्संयोगासमवायिकारणत्वेन त्र्यणुकादिसंयोगस्सासमवायिकारण इत्याद्यनुमानतः द्व्यणुकपरमाण्वोरपि क्रियासिद्धिः हस्तादिनिष्ठस्योत्क्षेपणादिपञ्चकस्य प्रत्यक्षतो ग्रहणं तदुत्क्षेपणं सासमवायिकारणं इत्याद्यनुमानैः तदवयवेष्वपि परमाणुपर्यन्तेषु उत्क्षेपणादीनां सिद्धिर्द्रष्टव्या एवं कर्मसिद्धिर्ग्राह्या।

…तिसिद्धिर्निरूप्यते

पदार्थत्वं न जातिः समवायादिवृत्तित्वात् द्रव्यत्वं गुणत्वं कर्मत्वं च जातिरेव, जतुघृतकाष्ठादिषु द्रव्यत्वव्यवहाराभावेन न प्रत्यक्षतो द्रव्यत्वजातिसिद्धिस्सम्भवति। किन्त्वनुमानेनैव अनुमानप्रकारः संयोगविभागादिसमवायिकारणता किञ्चिद्धर्मावच्छिन्ना कारणतात्वात् घटनिरूपितदन्डनिष्ठकारणतावदित्यनुमानेन विभागादिसमवायिकारणतावच्छेदकतया द्रव्यत्व जातिसिद्धिः नच स धर्मो घटत्वादिर्भवितुमर्हति, कारणतायामन्यूनातिप्रसक्तधर्मस्यैवावच्छेदकत्वेन घटत्वपटत्वादिव्याप्यजातीनां विभागादिसमवायिकारणताया अन्यूनत्वाभावेन सत्ताजातेस्तदनतिप्रसक्तत्वाभावेन गुणत्वादिजातिषु विभागादिकारणत्वप्रसक्तेरेवाभावेन च तत्कारणताया अन्यूनानतिप्रसक्तधर्मः द्रव्यत्वमेव भवतीति तत्सिद्धिर्द्रष्टव्या। नच द्रव्यत्वस्य तत्कारणतायामन्यूनानतिप्रसक्तत्वेपि तस्य जातित्वे प्रमाणाभाव इति वाच्यम्। वह्निव्याप्यधूमवानिति परामर्शस्य सत्वेपि महानसीय वह्नीतरवह्न्यभाववानितीतरबाधसहकारेण महानसीयवह्निमानित्यनुमितिरिव अनेकसमवेतस्य द्रव्यत्वस्य जातित्वे लाघवं इतिलाघवज्ञानसहकृतात् किञ्चिद्धर्मावच्छिन्नत्वव्याप्यकारणतात्ववती विभागादिसमवायिकारणता इति परामर्शात् तत्कारणतावच्छेदकतया जातिरूपद्रव्यव्यत्वमेव सिद्ध्यति॥

एवमेव गुणपदशक्यता किञ्चिद्धर्मावच्छिन्ना शक्यतात्वात् घटपदशक्यतावत्

इत्यनुमानेन गुणत्वजातिसिद्धिः। अस्यापि प्रत्यक्षप्रमाणतो जातित्वासिद्धौ दुःखद्वेषादिषु गुणत्वव्यवहारा भावो मूलमित्यबधेयम्। कर्मत्वजातिस्तु चलतीत्यादिप्रत्यक्षसिद्धैव॥

सामान्यादिचतुष्टये जातिर्नास्ति, तथाहि– घटत्वपटत्वादि जातिषु जातित्वरूपजातिस्वीकारे जातित्वस्यापि जातित्वेन तादृशजातित्वे घटत्वादौ च पुनर्जातित्वजातिः स्वीकार्या तथा स्वीकारे घटत्वादौ तन्निष्ठजातित्वे एतज्जातित्वनिष्टजातित्वे च पुनर्जातित्वजातिस्वीकारापत्तिः इत्यनवस्थाप्रसङ्ग इति सामान्ये जातिर्नाङ्गीक्रियते।

विशेषेषु विशेषत्वजातिस्वीकारे निस्सामान्यत्वे सति सामान्यभिन्नत्वे सति समवेतत्वमिति विशेषलक्षणस्य भङ्गः प्रसज्येतेति रूपहानिरूपदोषप्रसक्तेः विशेषेषु जातिर्नाङ्गीक्रियते, रूपहानिर्नाम लक्षणहानिः। रूपहानिपदस्य स्वतोव्यावर्तकत्वात्मकस्य रूपस्य हानिः इत्यर्थान्तरं प्रकल्प्य तस्य जातिबाधकतां वदन्ति वहवः। तत्प्रकारः घटादिद्व्यणुकपर्यन्तेष्ववयविषु स्वावयवसमवेतत्वरूपहेतुना इतरभेदस्साधयितुंशक्यते, तत्प्रकारः घटः इतरभिन्नः कपालसमवेतत्वात् द्व्यणुकं स्वेतरभिन्नं परमाणु समवेतत्वादित्यादिना घटादिद्व्यणुकान्तेष्वितरभेदस्साधयितुं शक्यते, परमाणूनामवयवाभावेन परमाणुष्वितरभेदसाधको नैतादृशो हेतुस्सम्भवति, अतस्सर्वेष्वपि परमाणुषु प्रत्येकमेकेकं विशेषमङ्गीकृत्य सर्वपरमाणुषु प्रत्येकं अयं परमाणुः इतरभिन्नः एतद्विशेषादित्याद्यनुमानैः तेष्वितरभेदः साधनीयः एवं स्थिते, विशेषेषु विशेषत्वजातिस्वीकारे सामान्याश्रयस्य सामान्यरूपेणैवसाध्यसाधकत्वमितिनियमेन सामान्यात्मकविशेषत्वरूपेणैव विशेषाणां हेतुता वाच्या, नतु सामान्यानात्मकेनैतद्विशेषत्वरूपेण, अयं परमाणुः इतरभिन्नः विशेषादिति सामान्यरूपेण हेतुता स्वीकारे तु इतरभेदाभाववत्यन्यपरमाणवपि विशेषरूपहेतोस्सत्वाद्व्यभिचारप्रसङ्गः, अतो विशेषेषु जातिर्नाभ्युपेया। विशेषेष्वपि अयं विशेष इतरभिन्नः तादात्म्यसम्बन्धेनैतद्विशेषात्। इत्याद्यनुमानैः सर्वविशेषेषु प्रत्येकमितरभेदस्साधनीयः। एवञ्चस्वतोव्यावर्तकत्वं सम्भवति स्वतोव्यावर्तकत्वञ्च स्ववृत्त्यसाधारणधर्मपुरस्कारेण व्यावर्तकत्वम्, सच असाधारणधर्मः एतद्विशेषत्वादि। नचैवं अयं परमाणुः इतरभिन्नः तादात्म्यसम्बन्धेनैतत्परमाणोः, अयं परमाणु इतरभिन्नः समवायसम्बन्धेनैतद्रूपादित्याद्यनुमानैरेव परमाणुष्वितरभेदसिद्धौ विशेषाङ्गीकरणमनावश्यकमिति वाच्यम्, एतत्परमाण्वेतद्रूपादिहेतुभिरितरभेदसाधने सामान्याश्रयस्य सामान्यरूपेण साध्यसाधकत्वनियमभङ्गप्रसङ्गात् परमाणुत्वरूपत्वादिहेतुभिस्सामान्यरूपैस्साधने च व्यभिचारप्रसङ्गात्। अतः परमाणुष्यितरभेदसाध-

नार्थं विशेषा अङ्गीकर्तव्याः, विशेषेषु च जातिर्नस्वीकार्येति च सिद्धम्।

असम्बन्धः समवायाभावयोर्जातिस्वीकारे बाधकः, असम्बन्धो नाम समवायप्रतियोगित्वसमवायानुयोगित्वान्यतराभावः, समवायाभावयोः कस्यापि पदार्थस्य समवायसम्बन्धेनावर्तमानेत्वेन तयोस्समवायेन कस्यापि पदार्थस्य अनधिकरणत्वेन च निरूक्तान्यतराभावस्सम्भवतीतिसमवायाभावयोर्नजातिस्स्वीकरणीया। एवं गगनत्वादिकं न जाति एकव्यक्तिः वृत्तित्वात्, घटत्वं कलशत्वभिन्नजातित्वाभाववत् कलशत्वसमनियतत्वात्, इत्याद्यनुमानैर्घटत्वादीनां भिन्नजातित्वं न सिद्ध्यति। तत्रव्यक्त्यभेदतुल्यत्वयोस्सत्वात्, एवं भूतत्वशरीरत्वेन्द्रियत्वोद्भूतत्वादीनां क्रमेण मूर्तत्वपृथिवीत्वशुक्लत्वादिना साङ्कर्यात् नैव जातित्वम्, परस्परात्यन्ताभावसमानाधिकरणयोः धर्मयोः एकत्र समावेशः सङ्करः, मूर्तत्वाभाववति गगने भूतत्वं भूतत्वाभाववति मनसिमूर्तत्वं, उभयोस्समावेशः पृथिव्याद्यन्तर्भावेणव वर्तत इति मूर्तत्व साङ्कर्येण भूतत्वस्य न जातित्वम्। पृथिवीत्वाभाववति जलीयशरीरे शरीरत्वम् शरीरत्वाभाववति घटादौ पृथिवीत्वम् उभयोस्समावेशः पार्थिवशरीरान्तर्भावेण वर्तत इति पृथिवीत्वादिना साङ्कर्याच्छरीरत्वस्य न जातित्वम्। पृथिवीत्वाभाववति जलीयेन्द्रिये इन्द्रियत्वम् इन्द्रियत्वाभाववति घटादौ पृथिवीत्वम् उभयोस्समावेशः पार्थिवेन्द्रियान्तर्भावेण वर्तत इति पृथिवीत्वादिना साङ्कर्यादिन्द्रियत्वस्य न जातित्वम्।

शुक्लत्वाभाववत्युद्भूतनीलं उद्भूतत्वं उद्भूतत्वाभाववत्यनुद्भूतशुक्ले शुक्लत्वं, उभयोस्समावेश उद्भूतशुक्लान्तर्भावेण वर्तत इति शुक्लत्वादिना साङ्कर्यादुद्भूतत्वस्य न जातित्वम्। पृथिवीत्वाभाववति जलीयपरमाणौ परमाणुत्वम्, परमाणुत्वाभाववति घटादौ पृथिवीत्वम्, उभयोस्समावेशः पार्थिवपरमाणाविति पृथिवीत्वसाङ्कर्येण परमाणुत्वस्य न जातित्वम्, एवं द्व्यणुकत्वत्र्यणुकत्वयोरपि पृथिवीत्वसाङ्कर्येण न जातित्वम्। शरीरत्वेन्द्रियत्वयोरिवविषयत्वस्यापि पृथिवीत्वादिसाङ्कर्येण न जातित्वम्। नीलपृथिवीत्वाभाववति पीतघटे घटत्वम्, घटत्वाभाववतिनीलपटेनीलपृथिवीत्वं उभयोस्समावेशो नीलघटे वर्तत इति घटत्वादिसाङ्कर्येण नीलपृथिवीत्वस्य न जातित्वम्। घटत्वाभाववति नीलपटे नीलद्रव्यत्वम्, नीलद्रव्यत्वाभाववति पीतघटे घटत्वम्, उभयोस्समावेशो नीलघटे वर्तत इति घटत्वादिसाङ्कर्येणनीलद्रव्यत्वादीनांनजातित्वम्। एवं नित्यत्वानित्यत्वयोरपि पृथिवीत्वादिसाङ्कर्येण नित्यत्वस्य सामान्यादिवृत्तितया अनित्यत्वस्य प्रागभावसाधारण्येन च न तयोर्जातित्वम्। रूपत्वाभाववति जलीयपरमाणुरसादौ नित्यगुणत्वम्, नित्यगुणत्वाभाववति घटीयरूपादौ रूपत्वम्, उभयोस्समावेशो नित्यरूपे वर्तत इति रूपत्वादिसाङ्कर्येण

नित्यगुणत्वस्य न जातित्वम्। एवं नित्यद्रव्यत्वस्यापि पृथिवीत्वादिसाङ्कर्येण न जातित्वम्। रूपत्वादिसाङ्कर्येणानित्यगुणत्वस्य पृथिवीत्वादिसाङ्कर्येणानित्यद्रव्यत्वस्य च न जातित्वम्। शुक्लत्वाभाववति घटनीले घटरूपत्वम्, घटरूपत्वाभाववति पटशुक्लेशुक्लत्वम्, उभयोस्समावेशः घटशुक्लः इति शुक्लत्वादिना साङ्कर्येण घटरूपत्वादेर्नजातित्वम्।

न च पृथिवीत्वादिसाङ्कर्येण शरीरत्वादिनामिव शरीरत्वादिसाङ्कर्येण पृथिवीत्वादीनामपि जातित्वं नस्यादिति वाच्यम्, जातित्वेनाभिमतसङ्करस्यैव जातिवाधकत्वनियमेन जातित्वेनानभिमतशरीरत्वादिसाङ्कर्यस्य पृथिवीत्वादिजातित्ववाधकत्वाभावात्, न च शरीरत्वादिसाङ्कर्यसत्वेन पृथिवीत्वादीनामपि कथं जातित्वेनाभिमतत्वमिति वाच्यम् गन्धसमवायिकारणतावच्छेदकतया पृथिवीत्वस्य जातित्वसिद्धेः शरीरत्वस्य तादृशजातित्व व्यवस्थापकाभावात् न च गुणपदशक्यतावच्छेदकतया गुणत्व जातेरिव, शरीरपदशक्यतायवच्छेदकतया शरीरत्वस्यापि जातित्वं सिद्धयतीति वाच्यम्, शरीरत्वे जातित्वव्यवहाराभावेन तदसिद्धेः, एतादृशान् जातिबाधकान् व्यक्तेरभेदस्तुल्यत्वं सङ्करोऽथानवस्थितिः रूपहानिरसम्बन्धो जातिबाधकसंग्रहः इत्यनेननीलकन्ठविश्वनाथपञ्चाननप्रभृतयः प्रादर्शयन्।

भेदत्वविषयतात्वादिकमखंडोपाधिरितिसिद्धान्तः। गन्धसमवायिकारणता किञ्चिद्धर्मावच्छिन्ना कारणतात्वात् घटनिरूपितदन्डनिष्ठकारणतावदित्यनुमानेन लाघवज्ञानसहकृते न पृथिवीत्वस्य जातित्वसिद्धिः। एवं जन्यस्नेहसमवायिकारणता किञ्चिद्धर्मावच्छिन्ना कारणतात्वादित्यनुमानेन। जन्यस्नेहसमवायिकारणतावच्छेदकतया जन्यजलत्वजातिसिद्धिः तादृशजन्यजलत्वावच्छिन्नसमवायिकारणता किञ्चिद्धर्मावच्छिन्ना कारणतात्वादित्यनुमानेन जलत्वजातिसिद्धिर्बोध्या, सर्वेषुजातित्व साधकानुमानस्थलेषुलाघवज्ञानस्यसहकारित्वंग्राह्यम्। नचानुमानद्वयमंतरा स्नेहसमवायिकारणतावच्छेदकतयैव कुतो न जलत्वजातिसिद्धिरिति वाच्यम्, स्नेहत्वस्यनित्यानित्यस्नेहवृत्तितया कार्यतातिप्रसक्तत्वेन कार्यतावच्छेदकत्वाभावात्, कार्यताया अन्यूनानतिप्रसक्तधर्मस्यैव कार्यतावच्छेदकत्वात्, न च जन्यस्नेह समवायिकारणतावच्छेदकतयैव कुतो न जलत्वजातिसिद्धिरिति वाच्यम्, जलत्वजातेः परमाण्यन्तर्भावेण जन्यस्नेहसमवायिकारणत्वातिप्रसक्तत्वेन तत्कारणतावच्छेदकत्वाभावात्, अपिच जन्यस्नेहसमवायिकारणतावच्छेदकधर्मस्य परमाणुष्वङ्गी कार्यतया नित्यस्य स्वरूपयोग्यत्वे फलावश्यम्भाव इति नियमेन परमाणुष्वपि कदाचिज्जन्यस्नेहोत्पत्तिप्रसङ्गः। अतश्च न स्नेहसमवायिकारणतावच्छेदकतया जलत्वजातिसिद्धिः, किन्तु निरुक्तानुमानद्वयेनैवतत्सिद्धिर्द्रष्टव्या, स्वरूपयोग्यत्वं च

फलजनकतावच्छेदकधर्मवत्वं ज्ञेयम्। घटत्वपटत्ववादीनां जातित्वं प्रत्यक्षसिद्धम्, जातिवाधकाभावे प्रत्यक्षानुमानाभ्यां तत्सिद्धिर्वोध्या।

जन्योष्णस्पर्शसमवायिकारणता किञ्चिद्धर्मावच्छिन्ना कारणतात्वादित्यनुमानेन जन्यतेजोमात्रसाधारणवैजात्यसिद्धिः, तदवच्छिन्नसमवायिकारणता किञ्चिद्धर्मावच्छिन्ना कारणतात्वादित्यनुमानेन तेजस्त्वस्य जातित्वे लाघवमिति लाघवज्ञानसहकृतेन तेजस्त्वस्य जातित्वसिद्धिः। एवं अपाकजजन्यानुष्णाशीतस्पर्शनिष्ठवैजात्यावच्छिन्नसमवायिकारणतावच्छेदकतया जन्यवायुगतवैजात्यसिद्धिः, तदवच्छिन्नसमवायिकारणतावच्छेदकतया वायुत्वजातिस्सिद्धिः। आकाशत्वस्य कालत्वस्य दिक्त्वस्य चैकव्यक्तिमात्रवृत्तित्वात् न जातित्वम्। ज्ञानसुखादिसमवायिकारणतावच्छेदकतया आत्मत्वजातिसिद्धिः, नचास्याजातेरीश्वरेप्यङ्गीकारे नित्यस्य स्वरूपयोग्यत्वे फलावश्यम्भाव इति नियमेनेश्वरे कदाचित्सुखादेरुत्पत्तिप्रसङ्ग इति वाच्यम् तादृशनियमस्यानङ्गीकृतत्वात् ईश्वरेऽदृष्टाभावेन सुखाद्यजननात्। अथवा ईश्वरे सा जातिर्नास्त्येव जीवात्मन्येव साङ्गीक्रियते, ईश्वरेप्यात्मत्वव्यहारस्तु ज्ञानाश्रयत्वविषयक एव, नात्मत्वजातिविषयक इत्यपि केचिद्वदन्ति। सुखाद्युपलब्धिकरणतावच्छेदकतया मनस्त्वजातिसिद्धिर्द्रष्टव्या।

घृतजतुप्रभृतिषु पृथिवीत्वस्य हिमखण्डकरकादौ जलत्वस्य सुवर्णादौ तेजस्त्वस्य च व्यवहाराभावेन न पृथिवीत्वजलत्वतेजस्त्वजातीनां प्रत्यक्षप्रमाणसिद्धत्वम्। वायोर्मनसश्च स्वतः प्रत्यक्षत्वासम्भवेन जीवात्मनोऽहंसुखीत्यादिप्रत्यक्षविषयत्वसम्भवेपि परात्मनः प्रत्यक्षाविषयत्वेन न वायुत्वात्मत्वमनस्त्वजातीनां प्रत्यक्षसिद्धत्वम्, अतोऽनुमानेनैव तेषां सिद्धिरङ्गीकार्या। न च घृतादिकं परित्यज्य परमाण्यवन्तर्भावेण पृथिवीत्वादिजातीनां व्यवहारव्यभिचारः कुतो न प्रदर्शित इति वाच्यम्, तथा सतिरूपत्वादिजातीनामप्यप्रत्यक्षपरमाणुरूपवृत्तित्वात् प्रत्यक्षासिद्धत्वप्रसङ्गात्। अतो योग्यपदार्थन्तर्भावेणैव प्रत्यक्षत्वव्यवहारव्यभिचारे प्रसक्ते अनुमानप्रमाणेन जातिसिद्धिर्वक्तव्या अयोग्यान्तर्भावेण व्यवहारव्यभिचारस्यापि जातेः प्रत्यक्षासिद्धतानियामकत्वेऽदृष्टचरदूरस्थदन्डादावपि दन्डइत्यादिव्यवहाराभावेन दन्डत्वादिजातीनामपि प्रत्यक्षासिद्धत्वप्रसङ्गः, अयोग्यत्वंचात्र प्रत्यक्षकारणसामग्र्यभावप्रयुक्तप्रत्यक्षाविषयत्वं बोध्यम्, अतो दूरस्थदन्डादिषु परमाणुष्वपि प्रत्यक्षकारणीभूतमहत्वचक्षुसंयोगाद्यभावेन तदभावप्रयोज्यप्रत्यक्षाविषयत्वरूपमयोग्यत्वं दूरस्थदन्डादीनां परमाणूनामप्यक्षतम्। यत्र धर्मी स्वत एवाप्रत्यक्षः तद्वृत्तिजातिर्नियतमनुमानेन शब्देन वा सिद्धिर्वक्तव्या अतो जातिबाधकरहितानां बहुष्वनुगतानां प्रत्यक्षलाघवज्ञानसहकृतानुमानादिसिद्धिानामेव धर्माणां जातित्वं वक्तव्यमिति फलितम्।

इदं रूपमिदंरूपमित्याकारकप्रात्यक्षिकप्रतीत्यैव रूपत्वजातिसिद्धिः नच सर्वेष्वपि रूपेषु रूपत्वव्यवहाराभावात् कथं प्रत्यक्षतो रूपत्वजातिसिद्धिरिति वाच्यम्, सर्वत्र रूपशब्दोल्लेखिन्याः प्रतितेरभावेपि वर्णशब्दोल्लेखिन्याः प्रतीतेस्सत्वात् वर्णरूपपदयोः पर्यायत्वात्, अतो रूपत्वजातिसिद्धिः प्रत्यक्षत एव भवति। न च तथापि इदं रूपमिति प्रतीतिवलात्प्रतीयमानं रूपत्वादिकमधिकरणभेदेन भिन्नमनेकमेव भवतीति न तस्य जातित्वमिति वाच्यम्, अनुगतधर्ममन्तराऽनुगतप्रतीतेरसम्भव इति नियमेन इदं रूपमिदंरूपमित्याद्यनुगतप्रतीत्यनुरोधेन सर्वरूपानुगतस्यैकस्य रूपत्वस्यैव जातित्वेन सिद्धेस्सम्भवात्, एवमेव रूपत्वव्याप्यानां शुक्लत्वनीलत्वादीनामपि जातित्वं प्रत्यक्षप्रमाणत एव सिद्ध्यतीति ज्ञेयम्, एवं पृथिवीत्वव्याप्यानां घटत्वपटत्वादीनां जातित्वसिद्धिः प्रत्यक्षत एव ग्राह्य, न च रूपत्वस्य नित्यानित्यरूप वृत्तितया नित्यरूपस्यातीन्द्रियत्वेन तत्र प्रात्यक्षिकरूपत्वव्यवहारस्य दुर्निरूपतया नित्यरूपे कथं रूपत्वजातिसिद्धिरिति वाच्यम्, सर्वेषु योग्येषु तादृशब्यवहारसम्भवे आयोग्ये कुत्रचित्तादृशव्यवहाराभावेपि बाधकाभावात्।

एवमेव रसत्वतद्व्याप्यमधुरत्वादीनां गन्धत्वतद्व्याप्यसुरभित्वादीनां स्पर्शत्वतद्व्याप्योष्णत्वादीनां जातीनां सिद्धिः प्रत्यक्षत एव ग्राह्या। एवमेव संख्यात्वपरिमाणत्वपृथकत्वसंयोगत्वविभागत्वपरत्वत्वापरत्वत्वजातीनां तत्तद्व्याप्यानां च सिद्धिः प्रत्यक्षएवग्राह्या। आद्यपतनासमवायिकारणतावच्छेदकतया गुरुत्वत्वजातिसिद्धिः। इदंद्रवमितिप्रात्यक्षिकप्रतीत्या द्रवत्वत्वजातिसिद्धिः। पिन्डीभावकारणतावच्छेदकतया स्नेहत्वजातिसिद्धिः। अयं ध्वयन्यात्मकश्शब्दः, अयं वर्णात्मकश्शब्द इत्यादि, प्रात्यक्षिकप्रतीत्या शब्दत्वजातिसिद्धिः। जानामि, स्मरामि, अनुभवामि, साक्षात्करोमि, अनुमिनोमि, उपमिनोमि, शाब्दयामी सन्दिहे, निश्चिनोमीत्याद्यनुव्यवसायैः ज्ञानत्वस्मृतित्वानुभवत्वप्रत्यक्षत्वानुमितित्वोपमितित्वशाब्दत्वसंशयत्वनिश्चयत्वप्रभृतीनां जातीनां सिद्धिभवति। अहं सुखी, अहं दुःखी, अहमिच्छामि, अहं द्वेष्मि, अहं करोमीत्यादिमानसप्रत्यक्षैस्सुखत्वदुःखत्वेच्छात्वद्वेषत्वप्रयत्नत्वजातीनां सिद्धिर्भवति। स्वर्गादिसाधनतावच्छेदकतया धर्मत्वजातेः नरकादिसाधनताववच्छेदकतयाऽधर्मत्वजातेः स्मृतिजनकतावच्छेदकतया भावनात्वजातेश्च सिद्धिः। वेगत्वजातिः प्रत्यक्षसिद्धा कटादिनिष्ठैवलक्षण्यापादकतावच्छेदकतया स्थितस्थापकसंस्कारत्वजातिसिद्धिः। अथवा गुणदीधितौ भट्टाचार्योक्तक्रमेण स्थितस्थापकपदशक्यतावच्छेदकतया स्थितिस्थापकसंस्कारत्वजातिसिद्धिर्द्रष्टव्या।

चलतीत्याकारकप्रात्यक्षिकप्रतीत्या कर्मत्वजातिसिद्धिः। सामान्यादिचतुष्टये यथा जातिर्नास्ति तथोपपादितं प्रागेव। निरुक्तानां जातीनामानुगत्यमतीन्द्रियवृत्ति-

ताप्रसक्तजातित्वभङ्गाभावश्च रूपत्वजातिस्थलइवबोध्यम्। सत्ताजातिस्तु सन्नित्याकारकव्यवहारतो न सिद्ध्यति सामान्यादावपितत्प्रतीतेस्सत्वात्, नाप्यनुमानेलिङ्गाभावात्। अतः प्रमाणिकव्यवहारएवसत्ताजातिसिद्धौप्रमाणमवधेयम्। सत्पदशक्यतावच्छेदकतयावासत्ताजातिसिद्धिः क्रियासमवायिकारणतावच्छेदकतयामूर्तत्वजातिसिद्धिः॥

ननु विभुत्वप्रमाघटसंयोगत्वादीनां जातिबाधकसाङ्कर्यादेरप्यभावात्कुतो न जातित्वं न च विभुत्वस्य प्रमाघटसंयोगत्वादेश्च जातित्वग्राहकप्रमाणाभावेन न तेषां जातित्वमिति वाच्यम्, विभुपदशक्यतावच्छेदकतयाविभुत्वस्य प्रभाघटसंयोगपदशक्यतावच्छेदकतयाप्रभाघटसंयोगत्वस्य च गुणपदशक्यतावच्छेदकतयागुणत्वस्येव जातित्वसिद्धौ बाधकाभावादिति वाच्यम्, गुणत्व इव विभुत्वप्रभाघटसंयोगत्वादौ जातित्वव्यवहाराभावात्। निरूपककोटिप्रविष्ठनां कार्यत्वकारणत्वप्रभृतीनां अवच्छेदकतानिरूपकाणां केषांचित्सामान्यादिचतुष्टयवृत्तित्वेन केषांचित्साङ्कर्येण च न जातित्वमित्यवधेयम्। इत्थं च यत्र जातिबाधकाभावः जातित्वेनप्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्धत्वं नित्यत्वमनेकसमवेतत्वं च निर्विवादं परिदृश्यन्ते तस्यैव जातित्वं वक्तव्यमिति परमार्थः। विशेषसिद्धिस्तु विशेषेषु जात्यभावनिरूपणावसरे परमाणुष्वितरभेदसाधनार्थमिति सम्यगुपपादितं प्रागेव। गुणक्रियाविशिष्टबुद्धिः विशेषणविशेष्यसम्बन्धविषया विशिष्टबुद्धित्वात् दन्डीपुरुषइतिविशिष्टबुद्धिवदित्यनुमानेन संयोगादीनां बाधात्समवाय सिद्धिः॥

येनेन्द्रियेण याव्यक्तिर्गृह्यते तेनेन्द्रियेण तन्निष्ठाजातिस्तदभावश्च गृह्यते इति न्याये सामान्यतो व्यक्तिपदग्रहणेन द्रव्यगुणकर्मणांसामान्यतोऽभावपदग्रहणेन प्राक्प्रधवंसात्यन्तान्योन्याभावानां च ग्रहणं भवति तथा च घटस्य त्वक्चक्षुग्राह्यत्वेन घटाभावस्यापि तद्गह्यत्वम्। रूपस्य चक्षुर्ग्राह्यत्वेन रूपाभावस्यापि चक्षुर्ग्राह्यत्वम्। रसस्य रसनेन्द्रियग्राह्यत्वेन रसाभावस्यापि रसनेन्द्रियग्राह्यत्वम्। गन्धस्य घ्राणेन्द्रियग्राह्यत्वेन गन्धाभावस्यापिघ्राणेन्द्रियष्टाह्यत्वम्। शब्दस्य श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यत्वेन शब्दाभावस्यापि श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यत्वम्। सुखदुःखादेमनइन्द्रियग्राह्यत्वेन सुखदुःखाद्यभावस्यापि मनइन्द्रियग्राह्यत्वम्। संसर्गाभावप्रत्यक्षे प्रतियोगिनोयोग्यताऽपेक्षिता, नातो गुरुत्वाभावस्य प्रत्यक्षं सम्भवति प्रतियोगिनोगुरुत्वस्यायोग्यत्वात् योग्यत्वंचात्र प्रत्यक्षविषयत्वं ग्राह्यम्। अन्योन्याभावप्रत्यक्षेऽधिकरणस्प योग्यताऽपेक्षिता। अतः स्तम्भादौ पिशाचभेदप्रत्यक्षस्य नानुपपत्तिः प्रतियोगिनः पिशाचस्यायोग्यत्वेप्यधिकरणीभूतस्य स्तम्भस्य योग्यत्वात्।

द्रव्याधिकरणकाभावप्रत्यक्षे इन्द्रियसंयुक्तविशेषणता सन्निकर्षः। यथा–

घटाभाववद्भूतलमित्यत्र घटाभावे चक्षुरादीन्द्रिय संयुक्तभूतलविशेषणतायास्सत्वात्। द्रव्यसमवेताधिकरणकाभावप्रत्यक्षे इन्द्रियसंयुक्तसमवेतविशेषणता सन्निकर्षः। यथा– घटरूपं घटत्वाभावबदित्यत्र घटरूपनिष्टघटत्वाभावे च चक्षुरिन्द्रिय संयुक्तघटसमवेतरूपविशेषणतायास्सत्वात्। द्रव्यसमवेतसमवेताधिकरणकाभावप्रत्यक्षे इन्द्रियसंयुक्तसमवेतसमवेतविशेषणतासन्निकर्षः। यथा– रूपत्वंनीलत्वाभाववदित्यत्र चक्षुस्संयुक्तघटसमवेतरूपसमवेतरूपत्वविशेषणतायाः रूपत्वनिष्ठनीलत्वाभावे सत्वात्। एवं शब्दाभावः श्रोत्रावच्छिन्नविशेषणतया गृह्यते। कादौ खत्वाभावः श्रोत्रावच्छिन्नसमवेतविशेषणतया गृह्यते। कत्वादौ खत्वाभावः श्रोत्रावच्छिन्नसमवेतसमवेतविशेषणतया गृह्यते। एवं कत्वावच्छिन्नाभावे गत्वाभावः श्रोत्रावच्छिन्नविशेषणविशेषणतया गृह्यते। घटाभावादौ पटाभावः श्चक्षुस्संयुक्तविशेषणविशेषणतया गृह्यते। स्पर्शाभावे घटाभावःत्वक्संयुक्तविशेषणविशेषणतया गृह्यते। रसाभावे घटाभावः रसनेन्द्रियसंयुक्तविशेषणविशेषणतया गृह्यते। गन्धाभावे घटाभावः घ्राणेन्द्रियसंयुक्तविशेषणविशेषणतया गृह्यते। सुखाद्यभावे दुःखाद्यभावो मनस्संयुक्तविशेषणविशेषणतया गृह्यते। एषा रीतिः द्रव्याश्रितयोग्याभावे इतराभावविशेषणकप्रत्यक्षस्थले ग्राह्या। घटरूपाश्रितघटाभावः पटाभाववानिति प्रत्यक्षे तु इन्द्रियसंयुत्तसमवेतविशेषणविशेषणता सन्निकर्षः। घटरूपत्वनिष्ठघटाभावः पटाभाववानिति प्रत्यक्षे इन्द्रिसंयुक्तसमवेतसमवेतविशेषणविशेषणता सन्निकर्षः। एवं द्रव्याद्याश्रितयोग्याभावे अन्योन्याभावादिविशेषणप्रत्यक्षस्थलेष्वपि निरुक्तरीत्या सन्निकर्षाः ग्राह्याः।

एवं भूतले घटाभाव इत्यत्र इन्द्रियसंयुक्तविशेष्यता सन्निकर्षः, एतन्मते प्रथमान्तार्थस्य घटाभावस्यैव विशेष्यतया अङ्गीकार्यत्वात्। घटरूपे घटाभाव इति प्रत्यक्षे इन्द्रियसंयुक्तसमवेतविशेष्यता सन्निकर्षः। घटरूपत्वे घटाभाव इति प्रत्यक्षे इन्द्रियसंयुक्तसमवेतसमवेतविशेष्यता सन्निकर्षः। एवं कादौ खत्वाभाव इति प्रत्यक्षे श्रोत्रावच्छिन्नसमवेतविशेष्यता सन्निकर्षः। कत्वाच्छन्नाभावे गत्वाभाव इति प्रत्यक्षे श्रोत्रावच्छिन्नविशेषणविशेष्यता सन्निकर्षः एवं स्पर्शाभावे घटाभाव इत्यत्र त्वक्संयुक्तविशेषण विशेष्यता। रसाभावे घटाभाव इत्यत्र रसनेन्द्रियसंयुक्तविशेषणविशेष्यता। गन्धाभावे घटाभाव इत्यत्र घ्राणेन्द्रियसंयुक्तविशेषणविशेष्यता। सुखाद्यभावे दुःखाद्यभाव इत्यत्र मनस्संयुक्तविशेषणविशेष्यता च सन्निकर्षः। एवं घटाश्रितपटाभावे घटाभाव इति प्रतयक्षे इन्द्रियसंयुक्तविशेषणविशेष्यता सन्निकर्षः। घटरूपाश्रितपटाभावे घटाभाव इति प्रत्यक्षे इन्द्रियसंयुक्त समवेतविशेषणविशेष्यता सन्निकर्षः। घटरूपत्वाश्रितपटाभावे घटाभाव इति प्रत्यक्षे इन्द्रियसंयुक्तसमवेतसमवेतविशेषणविशेष्यता सन्निकर्षः। एवमेव द्रव्याद्याश्रितयोग्याभावविशेषणकान्योन्याभावादिविशेष्यकप्रत्यक्षस्थलेषुसन्निकर्षाः ग्राह्याः तथा च स्थलभेदेन विशेषणविशेष्यभावं निर्नीय विशेषणविशेष्यभावसन्निर्षप्रभेदो निर्धार्य इत्यलं प्रसक्तानुप्रसक्तविचारेण।

एवकारविचारः

एवकारस्त्रिविधः, विशेष्यसङ्गतः, विशेषणसङ्गतः, क्रिया सङ्गतश्चेति। तत्र विशेष्यसङ्गतस्य तस्य अन्ययोगव्यवच्छेदः, विशेषणसङ्गतस्य तस्य अयोगव्यवच्छेदः, क्रियासङ्गतस्य तस्य अत्यन्तायोगव्यवच्छेदश्चार्थः। आन्ययोगव्यवच्छेदो नाम, अन्यस्मिन् योगव्यवच्छेदः अन्ययोगव्यवच्छेदः, योगस्सम्बन्धः, सचविशेषणस्य बोध्यः व्यवच्छेदोनामाभावः, तथाच अन्यनिष्टः विशेषणसम्बन्धाभाव इति फलितम्, प्रकृतविशेष्यादन्यत्रापि विशेषणसम्भावनायां प्रसक्तायां तन्निवृत्तिज्ञापनं यद्यावश्यकं तदा प्रथमो विशेष्यसङ्गतैवकारः प्रयोज्यः विशेष्यसङ्गतत्वञ्च विशेष्यवाचकपदाव्यवहितोत्तरोच्चरितत्वम्, यथा– पार्थ एव धनुर्धर इत्यत्र पार्थादन्यत्रापि धनुर्धरत्वे सम्भाविते तन्निवृत्यर्थं प्रयुक्तः अयं एवकारः तथाच पार्थो धनुर्धरः पार्थान्यो धनुर्धरत्वाभाववान् इति बोधः अत्र विज्ञेयः। अयोगव्यवच्छेदो नाम, योगस्याभावः अयोगः तस्य व्यवच्छेद इति व्युत्पत्या प्रकृतिविशेष्यनिष्ठविशेषणसम्बन्धाभावाभाव इति फलितम् प्रकृतविशेष्यतावच्छेदकाश्रये कुत्रचित् विशेषणाभावे प्रसक्ते तन्निवृत्तिज्ञापनं यद्यावश्यकं तदा विशेषणसङ्गतैवकारः प्रयोज्यः, यथा– शंखः पान्डुर एवेत्यत्र कस्मिञ्चिच्छंखे पान्डुरत्वाभावे प्रसक्ते तन्निवृत्तिज्ञापनायायमेवकारः। शंखत्वव्यापकपान्डुरत्वाभावाभावप्रतियोगिकसमवायसम्बन्धेन पान्डुरत्वाभावभाववान् शंख इति बोधः। अत्र भवति विशेषणसङ्गतत्वञ्च विशेषणबोधकपदाव्यवहितोत्तरोच्चरितत्वम्। अत्यन्तायोगव्यवच्छेदो नाम्म, अत्यन्तम्अयोगः अन्यन्तायोगः, विशेष्यतावच्छेदकावच्छेदेन विशेषणसम्बन्धाभावः, तस्य व्यवच्छेद इति व्युत्पत्या प्रकृतविशेष्यनिष्टात्यन्तविशेषणसम्बन्धाभावाभाव इति फलितम्। विशेष्यतावच्छेदकधर्मावच्छेदेन विशेषणाभावे प्रसक्ते तन्निवृत्तिज्ञापनाय तृतीयः क्रियासङ्गतैवकारः प्रयोज्यः क्रियासङ्गतत्वञ्च क्रियावाचकपदाव्यवहितोत्तरोच्चरितत्वम्। यथा– नीलमुत्पलं भवत्येवेत्यत्र उत्पलत्वावच्छेदेन नीलत्वाभावे प्रसक्ते तन्निवृत्तिज्ञापनायायमेवकारः, उत्पलं नीलत्वाभावाभवदिति सामानाधिकरण्येन बोधः। चरणमेव पङ्कजमित्यत्र एवकारस्यभेदप्रकारकारोपविषयत्वं अर्थः, तथा च चरणाभेदप्रकारकारोपविशेष्यं पङ्कजं इति बोधः।

एवकारसमभिव्याहृतसप्तविभक्तिस्थलेषु शाब्दबोधप्रकारः इत्थम्, चैत्र-एवमैत्रं ताडयतीत्यत्र चैत्रः मैत्रकर्मकताडनकर्ता चैत्रान्यः मैत्रकर्मकताडनकर्तृत्वा-भाववानिति बोधः। कामीकान्तामेव कामयते इत्यत्र कान्ताविषयकेच्छावान् कान्तान्यविषयकेच्छाभाववांश्च कामीति बोधः। कुठारेणैवच्छिन्नोत्ति वृक्षमि-त्यादौ कुठारकरकत्ववृक्षकर्मकच्छेदनकर्ता कुठारान्यकरणकवृक्षकर्मकच्छेदन-कर्तृत्वाभाववांश्च अयं पुरुष इति बोधः। ब्राह्मणायैव गां ददातीत्यत्र ब्राह्म-णोद्देश्यकगोकर्मकदानकर्ता ब्राह्मणेतरोद्देश्यकगोकर्मकदानकर्तृत्वाभाववांश्चायमिति बोधः। मृत्योरेवविभेतीत्यत्र मृत्युभिन्नजन्यभयाभाववान् मृत्युजन्यभय वांश्चायमिति बोधः। चैत्रस्येवेदं गृहमित्यत्र चैत्रेतरासम्बन्धे चैत्रसम्बन्धीदं गृहमिति बोधः। द्रव्यएव गुण इत्यत्र द्रव्येतरनिरूपितवृत्तित्वाभाववान् द्रव्यनिरूपितवृत्तितावांश्च गुण इति बोधः। एषु सप्तविभक्तिस्थलेषु विद्यमानस्य एवकारस्य अन्ययोगव्यवच्छेदः एवार्थः, अन्वयोग्यवच्छेदबोधकैवकारस्थलेषु सर्वत्रापिभावाभावयोरुभयोरप्यन्वयः अपेक्षितः, अभावमात्रान्वयाङ्गीकारे गगनस्य केनापि सम्बन्धेन कुत्राप्यवृत्तित्वेन घटभिन्ननिरूपितवृत्तित्वाभावस्यापि गगनेऽक्षतत्वेन घटएवगगनमित्याकारक प्रामा-णिकव्यवहारापत्तिः, अतो भावान्वयावश्यकता। भावनान्वयाङ्गीकारे द्रव्यवृत्तित्वस्य सत्तायामक्षतत्वेन द्रव्य एव सत्तेति प्रामाणिकव्यवहारापत्तिः। अतः अभावान्वयः अवश्यमङ्गीकर्तव्यः। मात्रपदस्य एवकारसमानार्थकत्वं कुत्रचित् परिदृश्यते। यथा-मृत्युमात्रात् विभेत्ययं पुरुषः, चक्षुर्मात्रेण गृह्यते रूपम्, कामीकान्तामात्रं कामयते इत्यादौ इत्यलं विस्तरेण।

सर्वंश्रीपरमेश्वरार्पणमस्तु
श्रीमत्तेनालि संस्कृत विद्याशालायां तर्कालङ्कार शास्त्राध्यापकेन कुरूगंट्युपाह्वय
श्रीरामशास्त्रिणाव्युत्पित्सूनां न्यायशास्त्रीयपदार्थस्य सुखावबोधाय
रचितः पारिभाषिकपदार्थ सङ्ग्रहस्समाप्तिमगमत्।

******

पारिभाषिकपदार्थसंग्रहपरिशिष्टे

(अन्यः) 'एवकारविचार'

अन्यत्र क्वचिदुपलब्धोयमेवकारविचारः ।

एवकारस्त्रिविधः— विशेष्यसङ्गतः, विशेषणसङ्गतः; क्रियासङ्गतश्चेति। अत्र विशेष्यसङ्गतैवकारस्य अन्ययोगव्यवच्छेदोऽर्थः, पार्थएव धनुर्धर इत्यादौ विशेषणे धनुर्धरे पार्थान्ययोगव्यवच्छेद बोधात्। धनुर्धरपदस्योत्कृष्टधनुर्धरेलाक्ष-णिकत्वात्। तथैव तात्पर्यात्, पार्थान्ययोगस्तादात्म्यम्। विशेषणसङ्गतैवकारस्यायोग-व्यवच्छेदोर्थः, शङ्खःपाण्डुरएवेत्यादौ विशेष्ये शङ्खेपाण्डुरत्वायोगव्यवच्छेदबोधात्। क्रियासङ्गतैवकारस्यात्यन्तायोगव्यवच्छेदोर्थः, सम्भवाभिप्रायके नीलं सरोजं भव-त्येवेत्यादौ अन्वयतावच्छेदकसरोजत्वसामानाधिकरण्येन नीलभवनकर्तृत्वात्यन्ता-योगव्यवच्छेदबोधात् इति सम्प्रदायः। तन्नेति दीधिकृतः। तथाहि— नात्यन्तायोग-व्यवच्छेदोऽर्थः, सहि आत्यन्तिकस्यायोगस्य व्यवच्छेदः आत्यन्तिको योगव्यवच्छे-दोवा, नाद्यः— आत्यन्तिकत्वस्यान्वयितावच्छेदकव्यापकत्वरूपतया सरोजत्वव्या-पकत्वस्यनीलभवनकर्तृत्वायोगस्य अप्रसिद्धत्वेन तद्व्यवच्छेदासम्भवात्। न द्वितीयः, सरोजनिष्ठनीलभवनकर्तृत्वायोगव्यच्छेदस्याप्रसिद्धत्वात्। अथ अयोगे आत्यन्ति-कत्वव्यवच्छेदः सरोजनिष्ठनीलभवनेकर्तृत्वायोगे सरोजत्वव्यापकत्वस्य द्रव्यत्वादौ प्रसिद्धस्य व्यवच्छेदबोधसम्भवात्, इतिचेन्न, सरोजविशेषणत्वेनोपस्थितस्य सरोज-त्वस्य आत्यन्तिकत्वे अन्वयासम्भवात्। नच सरोजपदं सरोजत्वे लाक्षणिकम्, तथाच नान्यविशेषणत्वेनोपस्थितिरितिवाच्यम्, ईदृशबोधस्य नीलभवनकर्तृ-त्वायोगव्यवच्छेदः किञ्चित्सरोजनिष्ठइत्यत्रैव तात्पर्यात्। तत्सरोजत्वसामानाधि-करण्येन नीलभवनकर्तृत्वायोगव्यवच्छेदस्वीकारेण वस्तु तस्तु अयोगव्यवच्छेदो-ऽपि नार्थः। शङ्खःपाण्डुरएवेत्यादौ पाण्डुरत्वादेः पाण्डुरादिविशेषणत्वेनोपस्थितस्य अयोगेऽन्वयासम्भवेन तद योगाबोधासम्भवात्। नच पाण्डुरपदं पाण्डुरत्वादौ लाक्षणिकमिति वाच्यम्, शङ्खः पाण्डुरत्वमेवेति प्रयोगापत्तेः। पाण्डुरएवेत्यादिवदत्रापि पाण्डुरत्वायोगव्यवच्छेदबोधसम्भवात्। तस्मादन्ययोगव्यवच्छेदमात्रमेवकारार्थः, शङ्खः पाण्डुरएवेत्यादावपि शङ्खेतत्त्वावच्छेदेन पाण्डुरान्ययोगव्यवच्छेदसम्भवात्। नीलं सरोजं भवत्येवेत्यादापि तिङा धर्मिणि लक्षणया नीलभवनकर्तर्ययोगव्यवच्छेदस्य

सरोजत्वसामानाधिकरण्येनवाधकाभावः । ज्ञानमर्थं गृह्णात्येवेत्यादावपि तिङा धर्मिलक्षणया ज्ञानत्वावच्छेदेनार्थग्राहकान्ययोगव्यवच्छेदबोधः । नच सरोजादौ नीलभवनकर्तृत्वायोगव्यवच्छेदबोधेतु धर्मिलक्षणा व्यर्थेति वाच्यम्, एवपदे शक्तिद्वयकल्पना यां गौरवात् । नचैवार्थत्रैविध्यप्रसिद्धिविरोध इति वाच्यम्, तस्या निरुक्तत्वेनानुपादेयत्वात् । नच अन्ययोगव्यवच्छेदस्य क्वचिदन्वयितावच्छेदकावच्छेदेन क्वचित्सामानाधिकरण्येनान्वये किं नियामकमिति वाच्यम्, नियमवाक्यस्य अवच्छेदकावच्छेदेन अन्वय सम्भवपरवाक्यस्य सामानाधिकरण्येन तदन्वये नियामकत्वात् । अत्र एवकारशक्योऽन्ययोगव्यवच्छेदः विलक्षणप्रतियोगितया अन्ययोगविशिष्टव्यवच्छेदरूपो बोध्यः । विलक्षणेत्युपादानात् पार्थान्ययोगगगनोभयत्वावच्छिन्नव्यवच्छेदस्य मनुष्ये सत्वेऽपि पार्थ एव मनुष्यइत्यादेः न प्रसङ्गः । यद्यप्ययं सामान्यतोऽन्ययोगघटितश्शक्यः, तथापि तात्पर्यवशात्पार्थएव धनुर्धर इत्यादौ तादात्म्यरूपयोगघटितो व्यवस्थाप्यते । अत्र समवेतत्वादियोगघटितः, तथा हि, पृथिव्यामेव गन्धइत्यादौ पृथिव्यन्यसमवेतत्वाभाववान् पृथिवीसमवेतत्ववांश्च गन्ध इति बोधः, अन्यथा सप्तम्युपस्थापितसमवेतत्वमनन्वितं स्यात् । पृथिवीपदार्थस्य सप्तम्यर्थैवकारार्थयोरप्यन्वयो व्युत्पत्तिवैचित्र्यात् । एवं चैत्रस्यैवेदं धनं इत्यादौ चैत्रान्यस्वत्वाभाववत् चैत्रस्वत्ववच्च धनमिति बोधः । एवं मैत्रस्यैवायं भ्राता इत्यादौ मैत्रान्यभ्रातृव्यवच्छेदबोधो लक्षणयैव, अन्यभ्रातृत्वादेरन्यसम्बन्धत्वाभावेन तद्व्यवच्देदस्यएवकाराशक्यत्वादित्याद्यूह्यम् । क्वचिदेकदेशान्वयस्वीकारात् अन्ययोगव्यवच्छेदैकदेशे अन्यत्वे पार्थादेरन्वयो निष्कलङ्कः । इत्येवकारविचारस्समाप्तिमगमात् ।

‘व्याप्यवृत्तित्वाव्याप्यवृत्तित्वविचारः’

यस्मिन्नधिकरणे येन सम्बन्धेन यः प्रतियोगी वर्तते तस्मिन्नधिकरणे तत्सम्बन्धा वच्छिन्नतन्निष्ठप्रतियोगिताकसामान्याभावश्च स्व नियामकसम्बन्धेन देशकालरूपावच्छेदकभेदेन यदि विद्येत तौ प्रतियोग्यभावौ आव्याप्यवृत्ती इति ज्ञेयौ । अपितु कालरूपावच्छेदकभेदेन निरुक्तरीत्या समानाधिकरणौ प्रतियोगितद्भावौ कालिकाव्याप्यवृत्ती, देशरूपावच्छेदकभेदेन समानाधिकरणौ प्रतियोगितदभावौ दैशिकाव्याप्यवृत्तीच भवत इति ज्ञेयम्, यथा ‘‘उत्पन्नं द्रव्यं क्षणमगुणं निष्क्रियञ्च तिष्ठ’’तीति न्यायगम्यसामानाधिकरण्यविशेष्टेरूपतदभावौ अन्यौच गुणत्वव्याप्यधर्मावच्छिन्नतदभावौ क्रियातदभावौ अन्यावेवंविधौच कालिकाव्याप्यवृत्ती भवतः ।

अग्रमूलावच्छिन्नौ वृक्षे समानाधिकरणौ कपिसंयोगतदभावौ अन्या वेवंविधौच दैशिकाव्याप्यवृत्ती भवतः । यौच प्रतियोगितदभावौ देशरूपावच्छेदकभेदेन कालरूपावच्छेदकभेदेन च समानाधिकरणौ दैशिकाव्याप्यवृत्ती कालिकाव्याप्यवृत्तीच भवतः । यथा वह्नितदभावौ ‘‘पर्वतो नितम्बे हुताशनी नशिखरेः, इति प्रतित्या दैशिकाव्याप्यवृत्ती ‘‘तदानीं पर्वतो हुताशनी नेदानीमित्यादिप्रतीत्या कालिकाव्याप्यवृत्तीच भवतः । एवं इह पर्वते नितम्बेहुताशनो न शिखरे इत्यादि प्रतीत्यनुरोधेन वह्निनिष्ठौ नितम्बावच्छिन्नपर्वतत्वसामानाधिकरण्यशिखरावच्छिन्नपर्वतत्वसामानाधिकरण्याभावौच आव्याप्यवृत्ती ज्ञेयौ । इह पर्वते नितम्बे हुताशनो न शिखरे, तदानीं पर्वते हुताशनो नेदानीम् इत्यादिप्रतीतिभिः देशनिरूपितवृत्तितायां देशकालावेव अवच्छेदकतया भासते । देशेवृत्तौ कालस्येव काले वृत्तौ देशस्याप्यवच्छेदकत्वानुभवात् ‘‘इदानीं चत्वरे गौर्नास्ति’’ इत्यादिप्रतीत्यनुरोधेन गवाभावे एतत्कालावच्छेदेन चत्वारवृत्तित्वस्येव चत्वारावच्छेदेन एतत्कालवृत्तित्वस्यापि भानस्याङ्गीकृतत्वेन कालनिरूपितवृत्तितावच्छेदकत्वमपि देशे अङ्गीक्रियत इति ज्ञेयम् । स्थितेचैवं स्वसमानाधिकरणात्यन्ताभावप्रतियोगित्वरूपेऽव्याप्यवृत्तिसामान्यलक्षणे स्वनिष्ठाधेयताऽभावीयप्रतियोगिताच एकसम्बन्धावच्छिन्नत्वेन ग्राह्ये, अन्यथा पटत्वादेरप्यव्याप्यवृत्तिताप्रसङ्गः, पटत्वादेः समवायेन स्वाधिकरणवृत्तिसंयोगसम्बन्धावच्छिन्नाभावप्रतियोगित्वात् । अपिच स्वनिष्ठाधेयता अभावन्निष्ठाधेयताच सजाजीयदेशकालान्यतरावच्छिन्नत्वेन ग्राह्ये, अन्यथा रूपादेरपि दैशिकाव्याप्यवृत्तिताप्रसङ्गः, रूपादेः स्वाधिकरणे घटादौ उत्पत्तिकालावच्छेदेन विद्यमानस्य रूपाद्यभावस्य प्रतियोगित्वात् । अव्याप्यवृत्तिप्रभेदस्य निर्णेतुमशक्यत्वाच्च । किञ्च स्वाधिकरणनिरूपिता वृत्तिता स्वप्रतियोगिमत्ताग्रहविरोधिताघटकसम्बन्धावच्छिन्नत्वेन ग्राह्या, अन्यथा घटत्वादेरप्यव्याप्यवृत्तिताप्रसङ्गः, घटत्वादेः स्वाधिकरणे घटादौ कालिकसम्बन्धेन विद्यमानस्य स्वभावस्य प्रतियोगित्वात् । तत्र स्वरूपसम्बन्धावच्छिन्नत्वनिवेशभावरूपकपिसंयोगाभावादेरसङ्ग्राह्यत्वप्रसङ्गः स्वरूपसमवायान्यतरसम्बन्धावच्छिन्नत्वप्रवेशने घटाभावाभावादेरसङ्ग्रहप्रसङ्गः । स्वप्रतियोगिमत्ताग्रहविरोधिताघटकसम्बन्धावच्छिन्नत्वञ्च स्वप्रतियोगितावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नस्वप्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्नप्रकारताशालिबुद्धित्वावच्छिन्नप्रतिबध्यतानिरूपितप्रतिबन्धकतावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नत्वरूपं ग्राह्यम् । अत्रच प्रतिबन्धकनिचयः अव्याप्यवृत्तित्वज्ञानानास्कन्दितः । स्वरूपसमवायादिसम्बन्धेन कपिसंयोगाभावतदभावादिप्रकारको निश्चयो ग्राह्यः, तथाच स्व-

रूपसमवायादिस्तादृश सम्बन्धो भवतीति न दोषावकाशः । अत्र लक्षणानुगत्याभावनिराकरणाय अव्याप्यवृत्तिसामान्यलक्षणस्यानुगमः क्रियते । यथा— वस्तुविशिष्टत्वमव्याप्यवृत्तित्वम् । (वस्तुपदंप्रतियोगिपरं) वस्तुवैशिष्ट्यञ्च स्वतादात्म्यस्वनिष्ठाधेयताविशिष्टप्रतियोगित्वोभयसम्बन्धेन (प्रतियोगितात्र स्वसमानाधिकरणाभावीया ग्राह्या) प्रतियोगितायामाधेयतावैशिष्ट्यञ्च स्वावच्छेदकसम्बन्धावच्छिन्नत्वस्वावच्छेदकधर्मावच्छिन्नत्वस्वाविशिष्टाधेयतावदभावनिरूपितत्वरूपसम्बन्धत्रयेण (एवंच व्यधिकरणसमबन्धावच्छिन्नाभावमादाय घटत्वपटत्वोभयाभावादिकं च आदाय घटत्वादौ नाति प्रसङ्गः) स्ववैशिष्ट्यंचाधेयतायां (अत्र स्वपदं प्रतियोगिनिष्ठाधेयतापरं) आधेयतापद्रं च अभावनिष्ठाधेयतापरम्) स्वावच्छेदकदेशकालान्यतरसजातीयदेशकालान्यतरावच्छिन्नत्व (स्वावच्छेदकधर्मसजातीयधर्मावच्छिन्नत्ववृत्तिमान् धर्मो ग्राह्यः) स्वावच्छेदकधर्मावच्छिन्नाधेयतानिरूपिताधिकरणतावन्निरूपितत्वसम्बन्धद्वयेन, साजात्यञ्च देशत्वकालत्वान्यतरधर्मरूपेण ग्राह्यम्, (अतः उत्पत्तिकालाद्यवच्छिन्नरूपाद्यभावमादाय रूपादेर्नदैशिकाव्याप्यवृत्तिताप्रसङ्गः) पूर्वोक्तसम्बन्धद्वयेन वस्तुविशिष्टान्यत्वं व्याप्यवृत्तित्वम् ।

विद्यार्थिनां बोधसौकर्यार्थं प्रायः प्रतिस्विकाररूपेण द्रव्यादिसप्तपदार्थानादाय दैशिकं कालिकञ्च अव्याप्यवृत्तित्वं यथामति निरूप्यते—दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वंच स्वनिष्ठदेशावच्छिन्नाधेयतानिरूपिताविकरणतावन्निरूपितदेशावच्छिन्नवृत्तितावदभावप्रतियोगित्वम् । कालिकाव्याप्यवृत्तित्वंच स्वनिष्ठकालावच्छिन्नाधेयतानिरूपिताधिकरणतावन्निरूपितकालावच्छिन्नवृत्तितावदभावप्रतियोगित्वम्। (उभयत्र स्वपदं प्रतियोगिपरम्) वृथिव्यप्तेजोवायूनांनित्यानामनित्यानां च संयोगसम्बन्धेन दैशिकाव्याव्यवृत्तित्वं कालिकाव्याप्यवृत्तित्वंच ग्राह्यम्, तत्र "पर्वतो नितम्बे हुताशनी न शिखरे, "तदानीं पर्वतो हुताशनी नेदानी"मित्याद्याः प्रतीतयो नियामकाः । तेषु समवायेनाव्याप्यवृत्तित्वन्तु अवयविनां घटादीनामेव तच्च कालिकमेव अवयेवेषु स्वस्थितिकालावच्छेदेनविद्यमानानां तेषां स्वध्वंसकालावच्छेदेन स्वाभावसमानाधिकरणत्वात् । आकाशकालदिगात्मनां नित्यत्वेन विभुत्वेन च नाव्याप्यवृत्तितायाः प्रसक्तिः । मनस्तु पुरीतति अवच्छेदककालभेदेन शरीरे इन्द्रियादिदेशरूपावच्छेदकभेदेन च स्वाभावसमानाधिकरणत्वेन द्विविधेन तेन समन्वितं भवति अवयवि (जन्य) गतानां रूपादिस्नेहान्तानां गुणानां "उत्पन्नं द्रव्यं क्षणमगुणं निष्क्रियंच तिष्ठती"ति न्यायानुसारेण कालरूपावच्छेदकभेदेन विद्यमानानां स्वाभावानां समानाधिकरणत्वेन कालिकाव्याप्यवृत्तित्वमेव, देशभेदेन एकत्र रूप-

त्वादिसामान्यधर्मावच्छिन्नानां तेषां स्वाभावसामानाधिकरण्यप्रसक्तेरभावेन न दैशिकं तत् । सर्वस्यापि पाकजरूपादिचतुष्टयस्य कालिकाव्याप्यवृत्तित्वमेव । रूपादौ व्याप्यवृत्तिताव्यवहारस्तु दैशिकाव्याप्यवृत्तिताविरहमादायैव । नचैवं नील पीतादिरूपाणां चित्रपटाद्यन्तर्भाविण दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वमपि स्यादिति वाच्यम्, व्याप्यवृत्तिजातीयधर्माणामव्याप्यवृत्तित्वे प्रमाणाभाव इति नियमानुसारेण व्याप्यवृत्तिरूपादिसजाजीयतया तेषां अव्याप्यवृत्तित्वस्य (दैशिकस्य) स्वीकर्तुमशक्यत्वात् । अपेक्षाबुद्धिजन्या द्वित्वादिसङ्ख्या कालिकाव्याप्यवृत्तिः । संयोगविभागयोस्संयोगत्वविभागत्वधर्मावच्छिन्नयोर्नदैशिकाव्याप्यवृत्तित्वम्, परन्तु कपिसंयोगत्वादिविशेषधर्मावच्छिन्नस्यैव दैशिकं तत् । नचैवं नीलपीतादिरूपादेदिव कपिसंयोगादेरपि व्याप्यवृत्ति संयोगत्वावच्छिन्नसजातीयतया न दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वस्वीकरणमुचितमिति वाच्यम्, अग्रे वृक्षः कपिसंयोगी मूले न इत्यादिनिर्विवादप्रतितीनामेव नियामकत्वात्, नीलपीतादिस्थले तादृशनिर्विवादप्रतीतिविरहेण तेषां दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वस्य स्वीकर्तुमशक्यत्वात् । अतः कपिसंयोगादीनां दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वस्येव "तदानीं वृक्षे कपिसंयोगो नेदानी"मित्यादिप्रतीत्या कालिकंच तन्निर्विवादम् । नवीनास्तु संयोगत्वादिसामान्यधर्मावच्छिन्नस्यापि अनित्यतां निमित्तीकृत्य दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वमप्यङ्गीकुर्वते । प्राचीनास्तु यस्य कस्यापि संयोगस्य सर्वदा विद्यमानतया संयोगत्वावच्छिन्नाभावादेस्संयोगाधिकरणे दुर्निरूपतया संयोगत्वाद्यवच्छिन्नस्य दैशिकाव्याप्यवृत्तितां नाङ्गीकुर्वते । शब्दस्तु द्विविधं तत्सम्भवति, शब्दतदभावयोः भेर्यादिदेशतदन्यदेशाद्यवच्छेदकभेदेनैव पूर्वोत्तर कालाद्यवच्छेदकभेदेनापि सामानाधिकरण्यसम्भवात् । बुद्धीच्छाद्वेषप्रयत्नधर्माधर्मसंस्काराणां द्विविधं तत्सम्भवति, तत्तदभावयोः सुषुप्त्यादिकालतदन्यकालावच्छेदेनेव शरीरतदन्यदेशाद्यवच्छेदकभेदेनच आत्मनि समानाधिकरणत्वात् । सुखदुःखयोरप्यव्याप्यवृत्तित्वद्वितीयमपि सम्भवति, जाग्रद्दशायामपि पूर्वोत्तरकालावच्छेदेन करचरणाद्यवच्छेदकभेदेन च आत्मनि समानाधिकरणत्वत् । एवमन्येषां गुणत्वव्याप्यव्याप्यधर्मावच्छिन्नानां व्याप्यवृत्तित्वाऽव्याप्यवृत्तित्वे तत्प्रभेदौच ऊह्यौ । कर्मणस्सर्वस्याप्यनित्यत्वतया दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वे निर्विवादः, शाखामूलाद्यवच्छेदकभेदेन वृक्षादौ तत्तदभावोपलब्धेः दैशिकञ्च तत्सम्भवति । घटादिगतकर्मणस्तु न दैशिकाव्याप्यवृत्तित्वं, तत्र तत्तदभावयोर्देशभेदेन निरूपयितुमशक्यत्वात् । अतो नैकारीतिर्दृश्यतेऽव्याप्यवृत्तित्वतत्प्रभेदनिर्धारणे किन्तु वस्तुस्वभावमनुरुध्य अनुभवबलेन तन्निर्धारणीयम् । सामान्यविशेषसमवायेषु अव्याप्यवृत्तित्वशङ्कैव नास्ति । भेदेपि

न तत्प्रसक्तिः, भेदस्य व्याप्यवृत्तित्वनियमात् । घटादिध्वंसघटादिप्रागभावयोः स्वप्रतियोगिसमवायिदेशे कालभेदेन तत्तदभावसमानाधिकरणतया कालिकं तत्सम्भवति। अत्यन्ताभावस्य तु स्थलभेदेन कालिकं दैशिकञ्चाव्याप्यवृत्तित्वं सम्भवतीति ज्ञेयम्, यथा कपिसंयोगाभावादेः द्विविधं तत्सम्भवति क्वचन एकमेव, यथा रूपाभावादौ अव्याप्यवृत्त्यधिकरणतातु नाव्याप्यवृत्तिः । ज्ञानविषयत्वतदभावौ ज्ञानतद्विरहकालावच्छेदेन परस्परसमानाधिकरणतया कालिकाव्याप्यवृत्ती एव भवतः । कार्यत्वकारणत्वप्रतियोगित्वादिकं व्याप्यवृत्त्येव । एवमन्यत्राप्यूह्यम् ।

'ज्ञानप्रभेदनिरूपणम्'

विद्यार्थिनां बोधसौलभ्याय एकत्रैव बहूनां ज्ञानानां स्वरूपाणि प्रदर्श्यन्ते। विशिष्टज्ञानम्, विशिष्टवैशिष्ट्यावगाहिज्ञानम्, विशेष्यैविशेषणमितिरीत्या अवगाहिज्ञानं, समूहालम्बनज्ञानं, समुच्चरूज्ञानं एकत्र द्वयमितिरीत्या पदार्थावगाहिज्ञानम्, संशयः, (विकल्पज्ञानं) सम्भावना, उपेक्षात्मकनिश्चयः, उपेक्षानात्मकनिश्चयः, अपेक्षाबुद्धिः, प्रत्यभिज्ञा, अनुभवः, निश्चयः सर्वांशे प्रमात्मकज्ञानम्, इत्यादयो ज्ञानप्रभेदाः ।

क्रमेणोदाहरणानि प्रदर्श्यन्ते— किञ्चित्प्रकारकं ज्ञानं विशिष्टज्ञानम्, यथा— घटत्वप्रकारकं (घटत्वनिष्ठप्रकारतानिरूपितघटनिष्ठविशेष्यताशालि) अयं घट इति ज्ञानं तत्, विशिष्टबुद्धिंप्रति विशेषणज्ञानं कारणम्, तथाच घटत्वविषयकनिर्विकल्पकं ज्ञानं अयं घट इति विशिष्टबुद्धौ कारणामिति ज्ञेयम्, किञ्चित्प्रकारविशिष्ट वस्तुप्रकारकं ज्ञानं विशिष्टवैशिष्ट्यावगाहिज्ञानंभवति । यथाघटत्वरूप, प्रकारविशिष्टघटप्रकारकं घटवद्भूतलमित्यादि ज्ञानं तत्; घटत्वनिष्ठप्रकारतानिरूपिता या घटनिष्ठा विशेष्या तदवच्छिन्ना या घटनिष्ठा प्रकारता तन्निरूपिता या भूतलनिष्ठा विशेष्यता तन्निरूपकं इदं विशिष्टवैशिष्ट्यावगाहिज्ञानं भवति । अन्तराभासमानपदार्थनिष्ठप्रकारताविशेष्यतायोः जगदीशेन अभेदस्यङ्गीकृतत्वेऽपि गदाधरेण अभेदनिरासपुरस्सरं तयोरवच्छेद्यावच्छेदकभावस्य सिद्धान्तितत्वेन अत्र घटनिष्ठविशेष्यताप्रकारतयोरवच्छेद्यावच्छेदकभावएव, नाभेदः— तयोरभेदस्वीकारे रूपवदण्डवत्पुरुषवान् देशः इति ज्ञानंप्रति पुरुषाभाववान् दण्ड इति ज्ञानस्य प्रतिबन्धत्वापत्तिः, इत्यभेदमतंगदाधरेण दूषितं सङ्गत्यनुमितिग्रन्थे, प्रतिबध्यज्ञानस्य पुरुषनिष्ठप्रकारतानिरूपितदण्डनिष्ठविशेष्यताशालिज्ञानत्वरूपतत्प्रतिबध्यतावच्छेदकरूपाक्रान्तत्वात्, पुरुषनिष्ठप्रकारताविशेष्यतयोः दण्डनिष्ठप्रकारतानिष्ठप्रकारताविशेष्य-

तयोश्च ऐक्यात् । विशिष्टवैशिष्ट्यावगाहबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति विशेषणतावच्छेदकप्रकारकं ज्ञानं कारणं भवति विशेषणे यद्विशेषणं तद्विशेषणतावच्छेदकम्, अत्र तादृशं ज्ञानं घटत्वप्रकारकं घटविशेष्यकं अयं घट इति ज्ञानं भवति । यस्मिन् ज्ञाने यद्यद्विशेष्यं भवति तस्मिन्तस्मिन् प्रत्येकं एकैकं विशेषणमेव भासते, न क्वापि विशेष्ये विशिष्टं प्रकारीभवति तद्ज्ञानंविशेष्ये विशेषणमितिरीत्यापदार्थावगाहिज्ञानमित्युच्यते, तत्र प्रत्येकविशेषणज्ञानान्येव कारणीभवन्ति, नतु विशेषणतावच्छेदक प्रकारकं ज्ञानं कारणं भवति, तत्स्वरूपन्तु घटवद्भूतलवान्देश इति अत्र घटो भूतले भूतलं देश एव प्रकारीभवति, नतु घटविशिष्टभूतलस्य देशे प्रकारत्वं सम्भवति, तथाच तद् ज्ञानं घटनिष्ठप्रकारतानिरूपितभूतलनिष्ठविशेष्यताशालिभूतलनिष्ठप्रकारतानिरूपितदेशनिष्ठविशेष्यताशालिच भवति, नतु घटनिष्ठप्रकारतानिरूपिता या भूतलनिष्ठा विशेष्यता तदवच्छेद्यभूतलनिष्ठप्रकारतानिरूपिता या देशनिष्ठाविशेष्यता तच्छालि भवतीति ज्ञेयम्, नतु विशिष्टवैशिष्ट्यावगाहिज्ञानइव तद् ज्ञानीयानां सर्वासां प्रकारतानां तत्समानाधिकरणविशेष्यताभिस्समं अवच्छेद्यावच्छेदकभावो वर्तते, तथाच विशेष्ये विशेषणमिति ज्ञाने अन्तराभासमानपदार्थनिष्ठविशेष्यताप्रकारत्वयो रवच्छेद्यावच्छेदकभावो नस्तीति विशिष्टवैशिष्ट्यावगाहिज्ञानतो भेदमाहुः केचित्, संसर्गांशे विशिष्टप्रतियोगिकत्वभानाभानाभ्यां भेदः अनयोरित्यन्ये (विशेष्ये विशेषणमिति ज्ञाने संसर्गांशे विशिष्टप्रतियोगिकत्वं न भासते इति ज्ञेयम्) नानामुख्यविशेष्यकज्ञानं समूहालम्बनज्ञानमित्युच्यते, या पर्वतोवह्निमान्ह्रदोजलवान् इतिज्ञानं इदन्तु वह्निनिष्टप्रकारतानिरूपितपर्वतनिष्टमुख्यविशेष्यताशालि जलनिष्टप्रकारतानिरूपितह्रदनिष्टमुख्यविशेष्यताशालिच भवति, एकस्मिन् वस्तुनि उभयप्रकारकं ज्ञानं समुच्चयात्मकं ज्ञानमित्युच्यते, अत्र विशेष्यस्यैकत्वेपि तस्मिन् विशेष्यताद्वयमङ्गीक्रियते, तथाच पर्वतो वह्निमान् धूमवांश्चेति समुच्चयज्ञानं वह्निनिष्टप्रकारतानिरूपितपर्वतनिष्टविशेष्यताकं धूमनिष्टप्रकारतानिरूपितपर्वतनिष्ट (पूर्वविशेष्यताभिन्न) विशेष्यताकञ्च भवति, समूहालम्बने विशेष्यताद्वयं व्यधिकरणं, अत्रतु समानाधिकरणं तदिति समूहालम्बनतो भेदः, संशयेतु एकैव मुख्यविशेष्यता, अत्र तद्द्वयं संशये भावाभावयोः प्रकारत्वं, अत्रत्वन्येषामपि प्रकारत्वं सम्भवतीति संशयादस्य महान् भेदो वर्तते । पर्वतो ह्रदश्च वाच्यत्वानिति ज्ञानमपि समुच्चयएवान्तर्भवति, अत्रापि पूर्ववत्प्रकारताद्वयं विशेष्यताद्वयञ्च वर्त्तते । पूर्वसमुच्चये एकस्मिन् द्वयोः प्रकारत्वं, अत्रतु द्वयोरेकस्य प्रकारत्वमितीयानेव भेदः । नच तर्हि पर्वतो ह्रदश्च वाच्यत्ववानिति

समुच्चयज्ञानस्यापि नानामुख्यविशेष्यकत्वात्समूहालम्बनत्वापत्तिरितिवाच्यम्, नानामुख्यविशेष्यकत्वस्येव नानाप्रकारकत्वस्यापि समूहालम्बनलक्षणत्वेन विवक्षणीयत्वात्, नच तथापि पर्वतो ह्रदच घटवद्भूतलसमानकालीनवाच्यत्ववान् इति समुच्येऽतिप्रसङ्गो दुर्वार:, प्रकारांशमादाय नानाप्रकारकत्वस्यापि सत्त्वादिति वाच्यम्, विभिन्नधर्मावच्छिन्ननानामुख्यविशेष्यतानिरूपित विभिन्नधर्मावच्छिन्नं नानामुख्यप्रकारताकत्वस्य तल्लक्षणत्वेन विवक्षणीयत्वात्, विशेष्यतायां प्रकारतायांच विभिन्नधर्मावच्छिन्नत्वनिवेशात् पूर्वसमुच्चद्वयेपि नातिव्याप्तिः । अस्यानुगमस्तु मुख्यविशेष्यताविशिष्टत्वं समूहालम्बनस्य लक्षणम्, वैशिष्ट्यञ्च स्व (स्वावच्छेदकधर्मावच्छिन्नविशेष्यता) निरूपितप्रकारताकत्वस्वानवच्छेदकधर्मावच्छिन्नमुख्यविशेष्यतानिरूपितस्वनिरूपितप्रकारतानवच्छेदकधर्मावच्छिन्न प्रकारकत्वोभयसम्बन्धेनेति । अथवा पर्वतो ह्रदश्च वाच्यत्वानिति ज्ञाने एकप्रकारतानिरूपितविशेष्यताद्वयं स्वीकृत्य समुच्चयज्ञानत्वमस्वीकृत्यविलक्षणज्ञानरूपत्वाङ्गीकारेऽपि न क्षतिः।

अथ एकत्र द्वयमितिरीत्या पदार्थावगाहिज्ञानं विचार्यते । इदं ज्ञानं समुच्चयज्ञानाद्भिद्यतेवा नवेति विचारणीयम्, एकविशेष्यतानिरूपितप्रकारताद्वयमत्र स्वीकृतंचेत् विशेष्यताद्वयनिरूपकात् समुच्यज्ञानाद्भिद्यत इदमित्यपि वक्तुं शक्यते, नच तर्हि संशयाद्भेदो दुर्निरूप इति वाच्यम्, संशयस्य भावाभावप्रकारकत्वेन अस्यच अन्यविषयकत्वेनच स्वीकारे अनुपपत्तिविरहात् । तथाच घटपटवद्भूतलमिति ज्ञानं एकत्र द्वयमितिरीत्या पदार्थावगाहिज्ञानमिति विज्ञेयम् । एकस्मिन् विरुद्धभावाभावप्रकारकज्ञानंहि संशय, विरुद्धत्वविशेषणात् वृक्षः कपिसंयोगी कपिसंयोगाभाववांश्चेति ज्ञाने तल्लक्षणस्य नातिव्याप्तिः । नचैवमपि वह्निमद्ह्रदो वह्न्यभाववानिति नियताहार्ये अतिव्याप्तिदुर्वारा, तस्य वह्निवह्न्यभावप्रकारकत्वादिति वाच्यम्; तल्लक्षणे प्रकारताद्वये धर्मितावच्छेदकत्वा (समानाधिकरणत्वस्य) नात्मकत्वस्य निवेशनीयत्वात् । संशयस्वरूपन्तु अयं स्थाणुर्वा नवा पर्वतो वह्निमान्नवेत्यादि । संशयसामग्रीतु साधारणधर्मवद्धर्मिज्ञानं असाधारणधर्मधर्मिज्ञानं (विप्रतिपत्तिवाक्यजन्यकोटिद्वयोपस्थितिश्च पर्वतो वह्निमान्नवेति संशयस्थले वह्निसहचरितवह्न्यभावसहचरितजलवान् पर्वतः इति साधारणधर्मवद्धर्मिज्ञानं वह्निविरुद्धवह्न्यभावविरुद्धधर्मवान् पर्वत इत्यसाधारणधर्मवद्धर्मिज्ञानं पर्वतो वह्निमान् पर्वतो वह्न्यभाववानिति विप्रतिपत्तिवाक्यजन्यवह्निवह्न्यभावरूपकोटिद्वयोपस्थितिश्च सामग्रीभवति, एवमन्यत्राप्यूह्यम् । विरुद्धार्थबोधकवाक्यद्वयं विप्रतिपत्तिरिति ग्राह्यम् । एकैककार्निर्वर्त्यकार्यनिर्वाहकतुल्यबलपदार्थद्वयविषयकं यथाश्रुते विकल्पात्मकं ज्ञानमिति

ज्ञेयम् । तथाच एकप्रकारतानिरूपितविशेष्यताद्वयशालिज्ञानं तदिति ज्ञेयम् । पर्वतो ह्रदश्च वाच्यत्ववानिति समुच्चये प्रकारताद्वयस्वीकरणात्ततो भेदस्पष्ट एव; रामो लक्ष्मणो वा हनिष्यति शतृमिति ज्ञानं विकल्प इति ज्ञेयम् । पर्वतो ह्रदश्च वाच्यत्ववानिति ज्ञाने (वस्तुतस्तु नैका प्रकारताऽङ्गीकार्या) प्येकैव प्रकारता यद्यभ्युपेयते तर्हि विकल्पे विशेष्ययोरन्योन्यतौल्यभानमपि तात्पर्यवशादङ्गीकृत्य ज्ञानयोरनयोभेदोऽवगन्तव्यः । यद्यपदार्थस्य शाब्दबोधे भानाङ्गीकारेण विकल्पे तौल्यभानं न सम्भवतीत्युच्येत तर्हि विकल्पज्ञानान्तरं विशेष्ययोस्तौल्यविषयकं मानसं ज्ञानमुत्पद्यत इति स्वीकारेण द्वयोर्भेदो ग्राह्यः । विकल्पो निश्चयरूपएव । विकल्पभिन्नज्ञानस्थले न तौल्यभानमिति तयोस्समानविषयकत्वेपि नातिप्रसङ्गावकाशः । उत्कटैकतरकोटिकस्संशयएव सम्भावनेत्युच्यते, साच दूरे वर्तमानं पुरुषं पश्यत उत्पन्ना अयं देवदत्तः स्यादिति ज्ञानम् । (देवदत्तःस्यादित्यादिशब्दाः संभावनाया अभिलापका नतु वाचका इति ज्ञेयम्)

परन्तु संशये कोटिद्वयस्यसमानत्वम् । सम्भावनायास्तु एकस्याः कोटेरुत्कटत्वमितीयानेव भेदः । उत्कटत्वंच विषयताविशेषः, बहुषु पदार्थेषु दृष्टेष्वन्यथाऽनुभूतेषु वा तेषु केषांचिदेव पदार्थानां स्मरणं जायते, नानुभूतानां सर्वेषां, तत्स्म रणानुत्पत्तितदुत्पत्त्योर्निर्वाहाय उपेक्षात्मकतदनात्मकनिश्चयद्वयमङ्गीकार्यम्, अतः भावनायां स्मरणेच साक्षात्परम्परया वा उपेक्षानात्मकनिश्चयकारणं भवतीति वक्तव्यम्, यत्रच स्मरणं नजायते तत्र उपेक्षानात्मकनिश्चयरूपकारणविरहेणैवेति निर्णयः कार्यः, द्वित्वत्रित्वादिकारणीभूता अनेकेषु पदार्थेष्वयमेकः अयमेक-इत्याद्यपेक्षाबुद्धिः जायते । इयन्तु क्षणत्रयं तिष्ठति । अन्या बुद्धयः क्षणद्वयमेव तिष्ठन्ति । शब्दबुद्ध्योः (शब्दबुद्धिधकर्मणां द्वित्रिक्षणावस्थायित्वम्) क्षणद्वयमात्रावस्थायित्वाङ्गीकारात्, भावनातु स्मरणपर्यन्तं तिष्ठति (प्रथमस्मृतिमुत्पाद्य समनन्तरस्मृतिप्रयोजिकां भावनामन्यामुत्पाद्य स्वयं नश्यतीत्येके, चरमस्मृतिपर्यन्तमेकैव प्रथमोत्पन्ना भावना तिष्ठतीत्यपरे) इच्छातु विषयसिद्ध्यनन्तरं नश्यति, अन्येषां गुणानां अनुभवानुसारेण कालव्यवस्था कार्या ।

सोयं देवदत्त इत्यादिज्ञानं प्रत्यभिज्ञात्मकं ज्ञानम्, अत्र तत्तांशभाने संस्कारः इदंत्वांशभानेसन्निकर्षश्चकारण भवति, इदमनुभवएवान्तर्भवति, न स्मृतौ, स्मृतेस्संस्कारमात्रजन्यत्वात, प्रत्यभिज्ञायाश्च अतथात्वात् अथ सोयं देवदत्त इत्यत्रान्वयबोधप्रकारः प्रदर्श्यते, तत्पदेन तद्देशतत्कालवृत्तित्वोपलक्षितः इदंपदेन एतद्देशैतत्कालवृत्तित्वविशिष्टश्चोपस्थाप्यते, अन्यथा तदिदं पदयोरुभयोरपि तद्देश-

कालादिवृत्तित्वविशिष्टार्थकत्वस्वीकारे विशेषणभेदाद्विशिष्टयोर्भेदस्याङ्गीकर्तव्यतया तादृशविशिष्ठयोरभेदो बाधितः स्यादिति वाक्यस्यास्य प्रामाण्यं दुर्निरूपं स्यात्, अपितु प्रत्यभिज्ञाकाले देवदत्ते इदं पदार्थाभेदस्याबाधितत्वेन तद्देशतत्काल-वृत्तित्ववैशिष्ट्यस्यैवबाधितत्वेन तत्पदस्थैव तद्देशकालवृत्तित्वोपलक्षितार्थकत्व-स्वीकारस्समुचितः, तथाच एतद्देशैतत्कालवृत्तित्वविशिष्टो देवदत्तः तद्देशतत्का-लवृत्तित्वोपलक्षितदेवदत्ताभिन्नइति बोधस्सम्भवतीति वक्तव्यम् ।

ननु तत्त्वमसीत्यादौ अद्वैतिनां मत इव जहदजहल्लक्षणया विशेषणपरि-त्यागेन अबाधिततदिदंपदलक्ष्यार्थाभेदबोधस्यसम्भवे । तच्छब्दमात्रस्य तादृशवृत्ति-त्वोपलक्षितार्थकत्वस्वीकारः किमर्थं इतिचेन्न, नैयायिकैः जहदलहल्लक्षणाया अनङ्गीकृतत्वात्, अद्वैतिमतेऽङ्गीकृताया जहदजहल्लक्षणायाः शक्यतावच्छेदक-परित्यागेन व्यक्तिमात्रबोधप्रयोजकरूपत्वेनाङ्गीकृततया तत्त्वमसीत्यादौ तन्मते विविधा बोधप्रकारा अङ्गीक्रियन्ते, तथाहि— तत्त्वंपदशक्यतावच्छेदकसर्वज्ञत्व किञ्चिद्ज्ञत्वरूपधर्मद्वयपरित्यागेनतस्याखण्डार्थत्वाङ्गीकारात्'चिदि'ति बोधः केश्चि-दङ्गीकृतः, तत्त्वंपदशक्यतावच्छेदकधर्मयोरेकस्यैव हानमङ्गीकृत्य सर्वज्ञत्ववि-शिष्टचैतन्यं चैतन्याभिन्नमिति कैश्चित् किञ्चिज्ञत्वविशिष्ट चैतन्यं चैतन्यभिन्नमिति कैश्चिच्च बोधोङ्गीकृतः । चैतन्यापरपर्यायब्रह्माकाराखण्डवृत्तेराविर्भावः कैश्चिदभ्युपगतः । तथाच किञ्चिद्ज्ञत्वेन भासमानस्य जीवापरपर्यायस्य चैतन्यस्य सर्वज्ञेन ब्रह्मणा साकमभेदोऽद्वैतिभिरभ्युपेयते, तदनुरूपार्थ (कल्पना) निर्णयप्रक्रिया सा जहदजह-ल्लक्षणाङ्गीकारेण पूर्वनिर्दिष्टदिशानिरर्थबाधं निर्व्यूढा। तथाच तल्लक्षणायाः सर्वज्ञ-त्वकिंचिज्ञत्वोपलक्षितचैतन्यबोधः फलमिति पर्यवस्यति नच तर्हि तत्त्वमसीत्यादौ द्वैतिनां मत इव सोयं देवदत्तइत्यत्रापि तत्पदस्य तत्सदृशार्थकत्वस्वीकारेण अबाधिताभेदान्वयबोधसम्भवे तादृशवृत्तित्वोपलक्षितार्थविषयकबोधस्वीकारो व्यर्थ इति वाच्यम्, द्वैतिमते जीवेश्वरयोर्भेदस्याङ्गीकृततया तैस्तथाविधबोधस्वीकारेपि नक्षतिः, सोऽयं देवदत्तइत्यादौ तदिदंपदार्थयोर्व्यक्त्योर्भेदाभावेन तादृशबोध-स्याङ्गीकर्तुमशक्यत्वात् । नच शक्त्या प्रवृत्तिनिमित्तरहितार्थस्योपस्थितिः न क्वाप्य-नुभूयत इति वाच्यम्, तर्हि तत्पदस्य तादृशवृत्तित्वोपलक्षितदेवदत्ते शक्तेः स्वी-कारणीयत्वात्, देवदत्तत्वरूपस्यैव प्रवृत्तिनिमित्तस्य (शक्यतावच्छेदकस्य) अत्रापि सम्भवेन अनुपपत्तिविरहात् । सेयं दीपज्वालेत्यादौ ज्वालयोरन्योन्यभिन्नतया नैया-यिकैः तत्सदृशार्थकत्वस्वीकारेपि क्षत्यभावः । सोयं देवदत्त इत्यादौ व्यक्तिभेदाभावेन न सदृशार्थाभेदबोधस्सम्भवति । नच अद्वैतिभिरिव नैयायिकैरपि जहदजहल्ल-

क्षणाङ्गीकारेणैव सोयं देवदत्त इत्यादौ निर्बाधमर्थस्य सूपपादत्वे तादृशवृत्ति-त्वोपलक्षितदेवदत्तार्थकत्वस्वीकारः न समुचित इति वाच्यम्, पदार्थगौरवमसहमानैः नैयायिकैः गौण्या व्यञ्जनायाश्च वृत्त्यन्तरत्वस्येव जहदजहल्लक्षणाया अपि लक्षणान्तरत्वस्थानङ्गीकृतत्वात् । अद्वैतिनांमते सोयं देवदत्तइत्यादौ तत्त्वमसी-त्यादाविव जहदजहल्लक्षणामूकोव्यक्तिमात्रबोध एवाङ्गीक्रियते । नैयायिकैस्तु तत्त्व-मसीत्यादौ अग्निर्माणवक इत्यादाविव सदृशाभेदबोधएवाभ्युपेयते, एतन्मते जीवेश्वरयो र्वास्तवभेदस्याङ्गीकृतत्वात् । वस्तुतस्तु, सोयं देवदत्त इत्यादौ तदिदं-पदार्थयोरभेदान्वयानुपपत्तावपि घटोऽनित्य इत्यादौ विशेषणघटत्वादावनित्यत्वा-नुपपत्तौ योग्यतावशेन घटादावनित्यत्वान्वयस्येव तत्रापि योग्यतावशेन तदिदं-पदान्यतरार्थस्य तदन्यतरोपस्थाप्यविष्येणसाकमन्वयस्वीकारे नक्षतिरित्यवगन्तव्यम् । अथवा प्रत्याभिज्ञाकाले इदंपदार्थे विशिष्टदेवदत्ते तत्पदार्थदेशकालवैशिष्ट्यस्यैव अनुपपन्नतया योग्यतावशेन तत्पदोपस्थाप्यविशेष्येणैव इदंपदार्थान्वयस्समुचितः । प्रत्यभिज्ञायास्संस्कारसन्निकर्षोभयजन्यत्वेन प्रत्यक्षरूपतया प्रत्यभिज्ञास्थले बोध-विचारोऽनावश्यकएव, यदि सोयं देवदत्तइत्यादिवाक्यादन्योच्चारितावच्छाब्द-धीरनुभवसिद्धा तत्र पूर्वनिर्दिष्टदिशा बोधप्रकारो ग्राह्यः । सोयं देवदत्तइत्यादिशब्दाः प्रत्यभिज्ञाभिलापकाएवेति ग्राह्यम् । मतान्तरे लक्षितलक्षणापि काचिदभ्युपेयते, द्विरेफपदस्य मधुकरे लक्षितलक्षणा, साच शक्यस्य रेफद्वयस्य स्वघटित(भ्रमरपद) वाच्यत्वरूपपरम्परासम्बन्धरूपैव । तथाच शक्यघटितपदवाच्यत्वरूपा सा लक्षणेति बोध्यम्। केचित्तु सिंहो माणमक इत्यादावपि तल्लक्षणामङ्गीकुर्वन्तः तत्स्थल-साधारण्येन स्वशक्यस्य परम्परासम्बन्धरूपालक्षितलक्षणेति वदन्ति ।

अनुभवो द्विविधः यथार्थोऽयथार्थश्चेति; अतः अनुभवरूपाणां प्रत्यक्षानुमि-तिशाब्ददीनामपि यथार्थत्वायथार्थत्वभेदेन द्वैविध्यं ग्राह्यम् । अतः प्रमात्मकप्रत्यक्षे लौकिकसन्निकर्षः भ्रमात्मकप्रत्यक्षे पित्तकामलादिदोषश्च कारणमिति ज्ञेयम् । प्रमात्मकानुमितिस्तु प्रमात्मकपरामर्शात् भ्रमात्मकपरामर्शाच्च जायते यथा वह्नि-व्याप्यधूमवान्पर्वत इति प्रमात्मकपरामर्शात्पर्वतो वह्निमानिति प्रमात्मकानुमिति-रुत्पद्यते, धूमव्याप्यवह्निमान्पर्वतइति भ्रमात्मकपरामर्शादपि पर्वतो धूमवानिति प्रमात्मकानुमितिरुत्पद्यते । भ्रमात्मकानुमितिस्तु भूमात्मकपरामर्शादेव जायेते । ह्रदो वह्निमान् ह्रदो धूमवानित्याद्यनुमितीनां व्याप्त्यंशे पक्षधर्मत्वांशे अंशद्वये वा भूमात्मकैरेव परामर्शैरुत्पद्यमानत्वात् । प्रमात्मकशाब्दबोधस्तु शक्तिप्रमातः शक्तिभूतश्च जायते, पर्वतो वह्निमानिति वाक्यस्थले शक्तिप्रमातः वह्निमदभिन्नः पर्वत इति

प्रमात्मकबोधो भवति। ह्रदो वह्निमानिति वाक्यस्थलेपि ह्रदपदस्य पर्वते शक्तिरिति शक्तिभूमात् वह्निमदभिन्नः पर्वत इति प्रमात्मकबोधो भवति, शक्तिभूमाच्छक्तिप्रमातोऽपि भूमात्मकबोधो भवति। स्मृतिभिन्नं सर्वं ज्ञानमनुभवएव। संशयभिन्नं सर्वं ज्ञानं निश्चयएव। स्मृतेरपि निश्चयएवान्तर्भावः सर्वांशे प्रमात्मकं ज्ञानं पर्वतो वह्निमानित्यादिरूपः। पर्वतो वह्निमान् ह्रदो वह्निमानित्यादि समूहालम्बनज्ञानत्व न सर्वांशे प्रमात्वं सम्भवति, ह्रदे वह्न्यंशे भ्रमत्वात्। सर्वांशे प्रमात्वं नाम यथाश्रुते स्वव्यधिकरणप्रकारावच्छिन्नाया या स्वात्मिका विशेष्यतातत्तदनिरूपकत्वम्, स्वपदं विशेष्यतापरम्, स्वव्यधिकरणप्रकारावच्छिन्नत्वञ्च स्वव्यधिकरणनिष्ठप्रकारतानिरूपितत्वम्, तथाच पूर्वोपदर्शितसमूहालम्बनज्ञाने स्वपदेन ह्रदनिष्ठविशेष्यतायाः परिग्रहणे स्वव्यधिकरणीभूतवह्निनिष्ठप्रकारतानिरूपितविशेष्यतानिरूपकत्वमेववर्तत इति न तस्य सर्वांशे प्रमात्वम्। अत्र स्वव्यधिकरणत्वं न स्वानधिकरणवृत्तितारूपम्, तथात्वे घटो द्रव्यमित्यादिज्ञाने तादृश प्रमात्वाभावप्रसङ्गः, स्वपदेन घटनिष्ठविशेष्यतायाः परिग्रहणे तदनधिकरणपटादिवृत्तिद्रव्यत्वनिष्ठप्रकारतानिरूपितविशेष्यतानिरूपकत्वस्यैव तत्र सत्त्वात्। अतः स्वव्यधिकरणत्वं स्वाधिकरणवृत्तित्वाभावरूपं विवक्षणीयम्, तादृशव्यधिकरणत्वं द्रव्यत्वे न सम्भवतीति नातिप्रसङ्गः। या येति वीप्सानुपादाने ह्रदो वह्निमानित्यादिभ्रमेऽतिव्याप्तिः, स्वव्यधिकरणप्रकारावच्छिन्नज्ञानान्तरीयविशेष्यत्वानिरूपकत्वस्य तत्र सत्त्वात्, वीप्सोपादाने ह्रदनिष्ठाया इदंज्ञाननिरूपितायां अपि विशेष्यतायाः परिग्राह्यतया तदनिरूपकत्वाभावान्नातिप्रसङ्गः। अस्यायमनुगमः, विशेष्यताविशिष्टान्यत्वं सर्वांशे प्रमात्वम्। वैशिष्ट्यञ्च स्वविशिष्टविशेष्यतानिरूपकत्वसम्बन्धेन स्वपदं विशेष्यतापरम्। स्ववैशिष्ट्यञ्च विशेषतायां स्वतादात्म्यस्वव्यधिकरणनिष्ठप्रकारतानिरूपितत्वोभवसम्बन्धेन इति। द्रव्यत्वादि ना घटाद्यवगाहि इदं द्रव्यमिति ज्ञानं जातित्वादिना ह्रदत्वाद्यवगाहि वह्न्यभाववद्ध्रदादिविषयकं जातिमान् वह्न्यभाववानित्यादिज्ञानञ्च सामान्यरूपेण विशेषावगाहिज्ञानमित्युच्यते। इदं ज्ञानं प्रमा भवति। स्थाणुत्वादिना विशेष्यताव्यधिकरणधर्मेण पुरुषाद्यवगाहि 'अयं पुरुषः' इति ज्ञानं भ्रमएव। विशेषरूपेण सामान्यावगाहिज्ञानं नास्ति।

'अन्वयबोधविचारः'

अथेदानीं विचार्यते क्वनु अभेदसम्बन्धेन बोधः क्वचा भेदसम्बन्धेनेति। नामार्थयोरभेदसम्बन्धेनान्वयः अन्यत्रतु भेदसम्बन्धेन। भेदसम्बन्धोनाम अभेदाति-

रिक्तः स्वरूपादिसम्बन्धः। अभेदस्तु तादात्म्यसम्बन्धएव। प्रथममभेदसम्बन्धेनान्वयवन्ति स्थलानि कानिचिदुदाह्रियन्ते। यथा नीलोघटः इत्यसमासस्थले नीलघटइति समासस्थलेच (शक्यार्थबोधनस्थले) नीलाभिन्ने घट इति बोधः (अभेदसम्बन्धेन नीलविशिष्टो घट इति बोधः) गच्छन् चैत्र इत्यादिकृदन्तस्थले वर्तमानकालिकगमनानुकूलकृतिमदभिन्नः चैत्र इति बोधः। एवं गतवान् गमिष्यन् चैत्रः गन्तव्ये। ग्रामइत्यादि कृदन्तनामस्थलेषु अभेदसंसर्गका बोधा ज्ञेयाः। एवं चैत्रो धनवान् गुणी मतिमान् तेजस्वी जटिलः नैयायिकः मीमांसकः वस्तुग्राहकः इन्द्रियग्राह्य इत्यादि तद्धितान्तनामस्थलेषु महाबलः कृत कृत्य इत्यादिसमासनामस्थलेषुच तत्तत्पदार्थयोरभेदसंसर्गका बोधा भवन्ति। एवं राजपुरुष इत्यादितत्पुरुषस्थले राजसम्बन्ध्यभिन्नः पुरुष इति बोधः (इदं लक्षणास्थलीयाऽभेदबोधस्थलोदाहरणम्) राजपदस्य राजसम्बन्धिनि लक्षणा स्वीकार्या, तत्पुरुषे पूर्वपदे लक्षणाया उत्तरपदार्थप्रधानतया (उत्तरपदार्थमुख्यविशेष्यतया) अन्वयबोधस्य स्वीकृतत्वेन तादृशान्वयबोधसिद्धिः। तत्पुरुषे पूर्वपदस्य लक्षणा उत्तरपदार्थप्रधानतयाऽन्वयबोध इति नियमस्तु प्राथकत्वाभिप्रायः, पूर्वकायः उत्तरकायः, अर्थपिप्पलीत्यादौ व्यभिचारात् कर्मधारयस्थलेषु क्वचिन्नलक्षणा कुत्रचिल्लक्षणा क्वचित्पूर्वपदे कुत्रचिदुत्तरपदेच लक्षणाङ्गीकार्या, यथा नीलोत्पलमित्यादौ न लक्षणा पुरुषव्याघ्र इत्यादौ उत्तरपदस्य व्याघ्रसदृशे लक्षणा, तमालवृक्ष इत्यादौ पूर्वपदस्य तमालनामके लक्षणा, पुरुषव्याघ्र इत्यादौ पूर्वपदार्थप्रधानतया नीलोत्पलं तमालवृक्ष इत्यादावुत्तरपदार्थप्रधानतया च अन्वयबोधसम्भवेन कर्मधारयस्थले न उत्तरपदार्थप्रधानतयैवान्वयबोध इति नियमोस्ति। रतिसुन्दरीत्यादौ रतिपदलक्षयस्य रतिनिरूपितसादृश्यप्रयोजकस्य सुन्दरीपदार्थैकदेशे सौन्दर्येन्वयः। ननु पदार्थः पदार्थेनान्वेति नत्वेकदेशेनेति नियमविरोधेन एकदेशान्वयो न युक्तः इतिचेन्न, चैत्रस्य गुरुकुलमित्यादौ चैत्रनिरूपितत्वस्यपदार्थैकदेशे गुरुत्वेऽन्वयस्वीकारेण एकदेशान्वयस्यापि स्वीकृतत्वात्। नच तादृशसाकांक्षास्थले एकदेशान्वयस्वीकारेपि रतिसुन्दरीत्यादिनिराकाङ्क्षास्थले एकदेशान्वयोऽयुक्तः (साकाङ्क्षास्थलएव एकदेशान्वयः स्वीक्रियते न निराकाङ्क्षास्थलइत्यभिप्रायः) इति वाच्यम्, तर्हि रतिपदस्य सुन्दरीपदस्यवा रतिनिरूपितसादृश्यप्रयोजकसौन्दर्यविशिष्टे लक्षणायाः अन्यस्य तादृशार्थे तात्पर्यग्राहकत्वस्यच स्वीकारेण दोषाभावात्। तथाच पदार्थः पदार्थेनान्वेति न त्वेकदेशेनेति नियमस्यायमर्थः, उभयत्र पदार्थपदेन पदस्य शक्योलक्ष्योर्थोवा प्रतिपाद्यते, पदार्थेनेत्यस्य पदोपस्थापितमुख्यविशेष्येणेत्यभिप्रायः, एकदेशेनेत्यस्य

पदोपस्थापितविशेषणेनेत्याशयः। नियमस्यास्य प्रवृत्तिः समासस्थलेऽसमासस्थलेच ग्राह्या। अत एव ममीरायां नद्यां घोषइत्यसमासस्थले चित्रगुरित्यादिसमासस्थले मुक्तावल्यां कृतरय विचारस्य साममञ्जस्यमुपपद्यते। अन्यथा समासासमासस्थलेषु शक्यलक्ष्यस्थलेषुच नास्य नियमस्य विचारार्हता स्यात्। नच रामभक्त इत्यादौ भक्तिरूपैकदेशे रामस्यान्वयसम्भवेन एकदेशान्वयो दुष्परिहार इति वाच्यम्, अत्रापि भक्त पदस्यैव रामभक्तिविशिष्टे लक्षणायाः रामपदस्य तादृशार्थे तात्पर्यग्राहकत्वस्यच स्वीकारे क्षत्यभावात्। अथवा भक्तपदस्य साकाङ्क्षत्वेन एकदेशान्वयस्वीकारेपि क्षतिविरहात्। अथवा भक्तेः भजधात्वर्थत्वेन तस्याः प्रकृतिप्रत्यसमुदायात्मकेन वाक्यरूपेण भक्तपदेनाप्रतिपाद्यत्वेन एकदेशान्वयप्रसक्तेरेवाभावात्। पदसमुदायात्मके समासे वाक्ये शक्ते शक्यसम्बन्धरूपलक्षणाया वा अनङ्गीकारात्। अन्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिः; सर्वत्र बहुव्रीहावुत्तरपदस्यान्यपदार्थे लक्षणा, पूर्वपदं तात्पर्यग्राहकम्, कृतप्रणाम इत्यादौ कृतिविषयप्रणामविशिष्टे प्रणामकर्तरिवा प्रणामपदस्य लक्षणाङ्गीकार्या, अन्यस्य तात्पर्यग्राहकत्वम्, नात एकदेशान्वयप्रसङ्गः। अपुत्र इत्यादौ अविद्यमानपुत्रविशिष्ठत्वस्य पितरि असम्भवेन पुत्रपदस्य पुत्राभाववति लक्षणा। अपुत्र इति तत्पुरुषस्थले पुत्रभिन्न इत्येव बोधः। त्रिलोकीत्यत्र लोकत्रयसमुदायत्वावच्छिन्नबोधः। लोकत्रयमित्यत्र तत्पुरुषस्थले न समुदायत्वभानम्, किन्तु लोकाभिन्नं त्रयमित्येव बोधः। ननु तत्पुरुषे लक्षणाया अङ्गीकार्यतया लोकत्रयमित्यत्र कस्य पदस्य कस्मिन् लक्षणाङ्गीक्रियते, विनापि लक्षणां पूर्वपदार्थलोकस्य अभेदसम्बन्धेन त्रित्वावाच्छिन्नेऽन्वयसम्भवादितिचेन्न, तत्पुरुषे लक्षणानियमस्य पूर्वपदे लक्षणानियमस्यच अनियतत्वात्, भूतलमित्यादा लक्षणां विनापि भुवा अभिन्नंतलमित्येव बोधात्। एवमव्ययीभावस्थलेपि नास्ति पूर्वोत्तरपदयोरेकत्रैव लक्षणाङ्गीकारनियमः, उपकुम्भमित्यादौ उत्तरपदस्य कुम्भसमीपे शाकप्रतीत्यादौ पूर्वपदस्यैव शाकलेशे लक्षणाया अङ्गीकृतत्वात्। अयमव्ययीभावः न पूर्वपदार्थप्रधान एव, उपकुम्भमित्यादौ पूर्वपदार्थप्राधान्येऽपि शाकप्रतीत्यादावुत्तरपदार्थप्राधान्येन बोधोदयात्। लक्षणात्वपरिहार्याऽत्र गुणी धनवान् मतिमानित्यादिषु न लक्षणाया आवश्यकता, प्रकृतिप्रत्ययैरेवाभिमतार्थबोधोदयात्।

ननु नामार्थयोरभेदसम्बन्धेनान्वयस्वीकारे निपातस्यापि नामतया घटो न पटः अत्र घटो नेत्यादौ नञर्थीभूतभेदात्यन्ताभावादौ नामार्थस्य घटादेः कथं प्रतियोगितानिरूपकत्वसम्बन्धेनान्वय इति चेन्न, नामार्थयोर्निपातातिरिक्तत्वस्य

विशेषणीयत्वात्। नच तथापि चन्द्र इव मुखमित्यादौ इवाद्यव्ययस्यापि नामतया चन्द्रस्य इवार्थीभूतसादृश्ये निरूपितत्वरूपभेदसम्बन्धेन तस्य च मुखे स्वरूपात्मकभेदसम्बन्धेनच कथमन्वय इति वाच्यम्, नामार्थयोख्यातिरिक्तत्वस्यापि निवेशनीयत्वात्। नच निपाताव्ययानामपि कथं नामत्वमिति वाच्यम्, महाभाष्यकाराभिमतस्य सुबन्तत्व (सुव्योग्यता) रूपनामत्वस्य तत्राप्यङ्गीकृतत्वात्। (तत्रापि सुप उत्पद्य लुप्यन्तीति तेषामभिप्रायः) नच तर्हि नीलं घट इत्यादौ अभेदबोधप्रसङ्ग इतिवाच्यम्, समानविभक्तिकनामार्थयोरेवाभेदान्वयस्याङ्गीकारात्, नच तर्हि नीलघट इति समासस्थले अभेदबोधानुपपत्तिरिति वाच्यम्, विशेषणविशेष्यभावपरे समासस्थले विशेषणपदोत्तरं विशेष्यपदसमानविभक्तिप्रत्ययानामुत्पत्तिलोपयोरङ्गीकृतत्वेन उत्पत्तिमात्रेणैव समानविभक्तिकत्वस्याक्षत्वात्। नच तर्हि धान्येन धनवान् राहोश्शिर इत्यादौ अभेदबोधो नस्यात्, तत्र समानविभक्तिकनामार्थत्वविरहादिति वाच्यम्, नियमस्यास्य तादृशनामार्थयोर्भेदसम्बन्धेनान्वयविरहमात्रबोधकत्वेन तादृशनामार्थयोरेवाभेदसमबन्धेनान्वयः नान्यत्रेत्यत्र तात्पर्यविरहेण च दोषाभावात्। नच अन्यत्रापि अभेदबोधाङ्गीकारे निपातादिस्थलेप्यभेदबोधप्रसङ्ग इति वाच्यम्, तादृशाकाङ्क्षाया अभेदबोधप्रयोजकत्वात्। नच तर्हि धान्येन धनवान् राहोश्शिर इत्यादौ कथमभेदबोधसम्भव इति वाच्यम्, अनुभवानुरोधेनात्रत्याकाङ्क्षाया अभेधबोधप्रयोजकत्वस्याङ्गीकृतत्वात्। नच नामार्थयोरिति नियमस्थनामत्वाय लिङ्गवत्त्वरूपत्वेन विवक्षणनैव अलिङ्गानां निपाताव्ययानां वारणसम्भवे निपाताव्ययातिरिक्तत्वस्य नामविशेषणत्वमफलमेवेति वाच्यम्, लिङ्गविशिष्टत्वरूपनामत्वस्य भाष्यकारानभिमतत्वेन तादृशनामत्वस्य निवेशयितुमशक्यत्वात्, (अथवा, अव्यञ्जनां लिङ्गविशिष्टत्वस्यापि लिङ्गविशिष्टत्वरूपत्वेन परिष्कारेपि उपयोगविरहात्।

अत्र नामार्थपदेन शक्तिलक्षणान्यतरवृत्त्युपस्थाप्यः अर्थो ग्राह्यः; नातो महाबलो रामइत्यादिलक्षणास्थलेषु (बहुव्रीह्यादिस्थलेषु) अभेदान्वयबोधानुपपत्तिः।

अथ विद्यार्थिनां बोधसौकर्याय भेदसम्बन्धेन अन्वयबोधस्थलानि कानिचित् दिङ्मात्रमुदाहृयन्ते राज्ञः पुरुष इत्यादिषु प्रकृतिप्रत्ययार्थान्वयस्थलेषु षष्ठ्यर्थीभूतसम्बन्वित्वादौ राज्ञो निरूपितत्वसम्बन्धेन तस्य पुरुषे स्वरूपसम्बन्धेनच अन्वयः। एवं चन्द्र इव मुखमित्यत्र इवार्थे सादृश्ये चन्द्रस्य निरूपितत्वसम्बन्धे न तस्यच मुखे स्वरूपादिसम्बन्धेन च अन्वयः। एवं घटं जानातीत्यत्र द्वितीयार्थविषयतारूपकर्मत्वे प्रकृत्यर्थस्याधेयत्वसम्बन्धेन कर्मताया धात्वर्थे निरूपकत्वसम्बन्धेन धात्वर्थज्ञानस्याख्यातार्थे आश्रयत्वे निरूपितत्वसम्बन्धेन आख्यातार्थस्य

चैत्रादौ स्वरूपसम्बन्धेन चान्वयः। एवं घटो न पटः दृष्ट्वागतः द्रष्टुं यातीत्यादीन्यनेकस्थलानि, भेदसंसर्गकान्वयबाधे प्रयोजकानि सन्ति। तथाच परस्परं प्रकृतिविभक्तिप्रत्ययार्थयोः विभक्तिप्रत्ययधात्वर्थयोः धात्वाख्यातार्थयोः आख्यातार्थमुख्यविशेष्ययोः निपातार्थमुख्यविशेष्ययोः क्त्वातुमुन्नादिप्रत्ययार्थधात्वर्थयोः इतराव्ययार्थधात्वर्थमुख्यविशेष्याणाञ्च भेदसम्बन्धेनान्वयो ग्राह्यः। इत्थमनुभवानुरोधेन अन्यान्यपि भेदसम्बन्धेन अभेदसम्बन्धेनच अन्वयबोधस्थलानि ग्राह्याणि।

प्रत्ययानां प्रकृत्यर्थान्वितस्वार्थबोधकत्वमिति नियमः, अतो राज्ञः पुरुष इत्यत्र षष्ठीविभक्तिप्रत्ययः प्रकृत्यर्थराजान्वितसम्बन्धिताबोधको भवति, तथाच राजसम्बन्धितावान् पुरुष इति बोधः एवमन्यत्रापि ग्राह्यम्। नन्वेवंसति नीलो घट इत्यादौ प्रकृत्यर्थस्य नीलत्वविशिष्टस्य नीलपदोत्तरवर्ति सुप्रत्ययार्थेनान्वयं विनैव विशेष्ये घटादावन्वयसम्भवेन नियमोऽयं व्यभिचरतीतिचेन्न, नीलपदोत्तरवर्त्तिविभक्तिप्रत्ययस्याप्यभेदार्थकत्वेन नीलाभिन्नो घट इति बोधसम्भवेन व्यभिचारविरहात्। नच तर्हि राज्ञः पुरुष इत्यत्र षष्ठ्यर्थसम्बन्धित्वस्येव अत्रापि नीलाभेदस्य स्वरूपसम्बन्धेन प्रकारविधया भानसम्भवेन अत्र सर्वानुभूतस्य अभेदसंसर्गकबोधस्य अपलापप्रसङ्ग इति वाच्यम्, प्रत्ययानां प्रकृत्यर्थान्वितस्वार्थबोधकत्वमिति नियमस्य विशेषणवाचकपदोत्तरवर्त्तिविभक्तीतरस्थलेषु प्रवृत्त्यङ्गीकारेण अनुपपत्त्यभावात्। नच तर्हि विशेषणवाचकपदोत्तरवर्तिविभक्तेर्निरर्थकत्वप्रसङ्ग इति वाच्यम्, इष्टापत्तेः। नच तर्हि विशेषणवाचकपदोत्तरवर्त्तिविभक्तेः निरुपयोग इति वाच्यम्, "विभक्तिः पुनरेकास्याद्विशेषणविशेष्ययो"रिति वचनानुसारेण साधुत्वार्थकत्वेन विशेषणवाचकपदोत्तरवार्त्तिविभक्तेरुपयोगसम्भवात्। अतएव नीलोघटः नीलं घटं नीलेन घटेनेत्याद्यसमासस्थलेषु अभेदसंसर्गकबोधोपपत्तिः।

'शास्त्रेष्वभिप्रायभेदाः'

न्यायाद्वैतवेदान्तमतयोः विद्यमानो भेदः सङ्ग्रहेण निरूप्यते।

न्यायमते— परमात्मापरनाम्नि ईश्वरे ज्ञानेच्छाकृतिसुखाद्यधिकरणत्वं सत्ताधिकरणत्वञ्च अङ्गीक्रियते, जीवात्मनां नानात्वं तेषु परस्परभेदः जीवानां ईश्वरोद्भेदश्च सत्यः अङ्गीक्रियते।

वेदान्तमते— परमात्मापरनामधेयस्य परब्रह्मणः सच्चिदानन्दरूपत्वं (सत्ताज्ञानानन्दरूपत्वं) अङ्गीक्रियते, अन्तःकरणरूपोपाधिभेदादेव जीवात्मनां परस्परभेदः, परब्रह्मणोपि भेदः अङ्गीक्रियते।

न्यायमते— वेदस्य वाक्यसमूहत्वादिहेतुभिः "तस्मात्तेपानात्त्रयो वेदा अजायन्त" इत्यादिश्रुतिभिश्च सादित्वम्। सादित्वेन शब्दबुद्ध्योः द्विक्षणावस्थायित्वनियमेनच सान्तत्वञ्चाभ्युपेयते।

वेदान्तमते— अस्य महतीभूतस्य निश्वसितमेतदित्यादिश्रुतिभिः वेदस्य आविर्भावतिरोभाववेव (ईश्वरात् सृष्टिकाजन्यत्वं प्रलयकालनश्यत्वञ्च) अभ्युपेयेते। नोत्पत्तिविनाशौ क्षणभेदेन।

न्यायमते— पृथिव्यप्तेजोवायुपरमाणूनां आकाशादिपञ्चकस्य केषांचित् गुणानां सामान्यविशेषसमवायात्यन्तान्योन्याभावादीनां बहूनां नित्यत्वमङ्गीकृतम्।

वेदान्तमते— न्यायमते नित्यत्वेन उपदर्शितानां तेषामापेक्षिकं नित्यत्वमङ्गीक्रियते। न निरपेक्षं तत्।

न्यायमते— घटादिसकलप्रपञ्चे आश्रयभेदेन सादित्वानादित्यसान्तत्वानन्तत्वादिविरुद्धधर्मेषु विद्यमानेष्वपि सत्यत्वं (वर्तमानत्वादिरूपं) पुनरेकरूपमेव पारमार्थिकं परमात्मसाधारणम्।

वेदान्तमते— घटादिप्रपञ्चे ब्रह्मभिन्ने व्यावहारिकं सत्यत्वमेव, ब्रह्मण्येकस्मिन्नेव पारमार्थिकसत्यत्वाङ्गीकारात्, मतेऽस्मिन् ब्रह्मभिन्नप्रपञ्चस्य सच्चेन्न बाध्येत ब्रह्मवत् असच्चेन्न प्रतीयेत शशविषाणवत्। अतो बाधितत्वात् प्रतीयमानत्वाच्च सदसद्विलक्षणत्वरूपं मिथ्यात्वमेवाङ्गीक्रियते।

न्यायमते— शुक्ताविदं रजतमिति ज्ञानस्थले शुक्त्यभिन्ने इदंत्वावच्छिन्ने रजतत्वं प्रकारतया भासते, नतु शुक्तौ रजतमन्यादृशमुत्पद्यत इत्यङ्गीक्रियते।

वेदान्तमते— तस्मिन् स्थले प्रतिभासमानकाले शुक्तौ प्रातिभासिकं रजतमन्यादृशमुत्पद्यत इत्यङ्गीक्रियते, एतन्मते पदार्थस्य त्रैविध्यमङ्गीकृतम्, पारमार्थिकं, प्रातिभासिकं, व्यावहारिकंचेति, आद्यं ब्रह्म द्वितीयं घटादिप्रपञ्चजातं ततीयं शुक्तिरूप्यादि।

न्यायमते— द्रव्यादयस्सप्तपदार्था अङ्गीक्रियन्ते।

वेदान्तमते— द्रव्यमेकएव पदार्थः गुणकर्मसामान्यादयः स्वाश्रयेण द्रव्येण न भिद्यन्ते' समवायविशेषाः न स्वीक्रियन्ते।

न्यायमते— तादात्म्यं अभेदापरपर्यायं घटकलशयोः नीलघटयोः इत्यादिस्थलेष्वङ्गीक्रियते।

वेदान्तमते— भेदसहिष्णुरभेदएव तादात्म्यतया अङ्गीक्रियते, तच्च मृद्घटयोः सुवर्णघटकयोश्च इत्यादावङ्गीक्रियते।

न्यायमते— उपादानं समवायकारणापरपर्यायं एकविधमेव, तच्च घटपटादिकारणीभूतकपालतन्त्वादिकं भवति।

वेदान्तमते— परिणाम्युपादानं विवर्तोपादानंचेति द्विविधं तत्, आद्यं जगत्कारणीभूता माया, द्वितीयं जगत्कारणं ब्रह्म।

न्यायमते— लक्षणं द्विविधं व्यावहारिकं व्यावर्तकंचेति, आद्यं पृथिव्यादीनां पृथिवीत्वादिकं, द्वितीयं पृथिव्यादीनां गन्धादिकम्।

वेदान्तमते— लक्षणं द्विविधं तटस्थलक्षणं स्वरूपलक्षणंचेति, आद्ये ब्रह्मणः जगत्कारणत्वादिकं, द्वितीयं सच्चिदानन्दादिकं, न्यायमते ज्ञानशब्देन उच्यमानं यत् तदेतन्मते अन्तःकरणवृत्तीरिति व्यवह्रियते, अन्यञ्च ब्रह्मभिन्नं धर्मिरूपज्ञानञ्च एकमस्ति।

न्यायमते— आत्यन्तिकदुःखध्वंसो मोक्षः सच उपासनादिभिः लभ्य इत्यङ्गीक्रियते।

वेदान्तमते— जीवस्य ब्रह्मस्वरूपताप्राप्तिरेव मोक्षः; सच ब्रह्मापरोक्षज्ञानलभ्यः इत्यङ्गीक्रियते।

न्यायमते— परमाणुभिः पृथिव्यप्तजोवायूनां महतामुत्पत्तिः।

वेदान्तमते— आत्मन आकाशस्सम्भूतः, आकाशाद्वायुः, वायोरग्निः अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथिवी इति उत्पत्तिक्रमः अङ्गीक्रियते।

न्यायमते— अज्ञानं न भावरूपं किन्तु ज्ञानाभावएव, ब्रह्माऽज्ञानमित्यादौ ब्रह्मविषयकं यत् ज्ञानं तदभावः बोध्यते।

वेदान्तमते— अज्ञानमिति कश्चन भावपदार्थः, ब्रह्माऽज्ञानमित्यादौ ब्रह्मविषयकं अज्ञानमेव बोध्यते, परन्तु अत्र अज्ञाने ब्रह्मविषयकत्वसम्भवेऽपि नैयायिकमते ज्ञाने प्रकारता, विशेष्यता, संसर्गतारूपविषयतानिरूपकत्वमिव वेदांतिमते तादृशत्रितयात्मकविषयता निरूपकत्वं नाङ्गीक्रियते, किन्तु तत्तद्विषयनिष्ठविषयतानिरूपकत्वमात्रमेवाङ्गीक्रियते। एतन्मते कर्णशष्कुल्यवच्छिन्ननभसः श्रावत्वमिव अन्तःकरणावच्छिन्नचैतन्यस्य (अन्तःकरणप्रतिबिम्बितचैतन्यस्य) जीवत्वव्यवहारः। केचन मायायां चैतन्यप्रतिबिम्ब ईश्वरः। अविद्यायां चैतन्यप्रतिबिम्बः

जीवः इति वदन्ति। केचित्तु अविद्यायां चित्प्रतिबिम्ब ईश्वरः अन्तःकरणे चित्प्रतिबिम्बः जीव इति वदन्ति अन्येतु, अविद्यायां चैतन्यस्य प्रतिफलने प्रतिबिम्बो जीवः बिम्बभूतः ईश्वरः इति वदन्ति। अपरेतु, अन्तःकरणावच्छिन्नो जीवः अविद्यावच्छिन्नः ईश्वर इति वदन्ति। तथाच अवच्छेदकभेदेनैव जीवात्मनां ईश्वरस्य भेदः न स्वतः। न्यायमते तु स्वतएव भेदः।

न्यायमते— त्वक्चक्षुश्श्रोत्रजिह्वाघ्राणमनोभेदेन षड्विधमिन्द्रियम्।

वेदान्तमते— मोनोविहाय त्वक्चक्षुश्श्रोत्रजिह्वाघ्राणभेदेन पञ्चबिधं इन्द्रियम्।

न्यायमते— प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः चत्वारि प्रमाणानि।

वेदान्तमते— प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दार्थापत्त्नुपलब्धय षट्प्रमाणानि।

न्यायमते— ज्ञानं बुद्धिरिति समानार्थके पदे।

वेदान्तमते— अन्तःकरणवृत्तिरेव ज्ञानमिति निश्चयात्मकमन्तःकरणमेव बुद्धिरिति व्यवह्रियते।

न्यायमते— मनः चित्तमिति तुल्यार्थके पदे।

वेदान्तमते— संशयात्मकमन्तःकरणं मन इति, स्मरणात्मकमन्तःकरणं चित्तमिति व्यवह्रियते।

न्यायमते— एतन्मते जीवेश्वरयोः भेदस्य अङ्गीकृततया तत्त्वमसीत्यादौ "सिंहो माणवक" इत्यत्रेव त्वंपदार्थे तत्पदार्थसदृशाभेदबोधः अङ्गीक्रियते।

वेदान्तमते— तत्त्वमसीत्यादौ (किञ्चिद्ज्ञत्वादौ) किचिद्ज्ञत्वविशिष्टचैतन्यरूपत्वंपदार्थे सर्वज्ञत्वविशिष्टचैतन्यरूपतत्पदार्थाभेदस्य बाधितत्वेपि जहदजहल्लक्षणया सर्वज्ञत्वकिंचिद्ज्ञात्वादिविशेषणपरित्यागे न विशेष्यमात्रविषयकनिर्विकल्पकबोधः (वस्तुतस्तु, 'तत्त्वमसीत्यादौ ब्रह्माकाराखण्डवृत्तिरेवा)ङ्गीक्रियते कार्याविर्भावविषये तत्तन्मतीयाभिप्रायभेदबोधकः श्लोकोयं प्रदर्श्यते।

"आरम्भवादः कणभक्षपक्षः सङ्घातवादस्तु भदंतपक्षः।
सांख्यादिपक्षः परिणामवादः वेदांतिपक्षस्तु विवर्तवादः॥ इति॥

बालानां विज्ञेयानि सूत्रस्य भाष्यस्य अधिकरणस्य व्याख्यानस्य च लक्षणानि क्रमेण प्रदर्श्यन्ते।

अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम्।
अस्तोभमनवद्यंच सूत्रं सूत्रविदो विदुः॥

सूत्रस्थं पदमादाय वाक्यैस्सूत्रानुकारिभिः ।
स्वपदानि च वर्ण्यंते भाष्यं भाष्यविदो विदुः ॥
विषयो विशयश्चैव पूर्वपक्षस्तथोत्तरम् ।
(संङ्गतिश्चेति पञ्चाङ्गं शास्त्रेऽधिकरणं विदुः) ॥
प्रयोजनञ्च पंचैतत् प्राञ्चौबिकरणं विदुः,
पदच्छेदः पदार्थोक्तिः विग्रहो वाक्ययोजना,
आक्षेपस्य समाधानं व्याख्यानं पञ्चलक्षणम् ॥

* एतानि षड्दर्शनानीत्युच्यन्ते—

पाणिनेः जैमिनेश्चैव व्यासस्य कपिलस्य च ।
कणादस्याक्षपादस्य दर्शनानि षडेवहि ॥

कणादेन भावः अभावश्चेति प्रथमं पदार्थस्य द्वैविध्येन विभागः कृतः । समनन्तरं भावस्य द्रव्यगुकर्मसामान्यविशेषसमवायभेदेन षड्विध्येन विभागः कृतः । अक्षपादेनतु प्रमाणप्रमेयेत्यादिना दीपिकोत्तरीत्या पदार्थस्य षोडशाविधत्वेन विभागः कृतः । अन्नम्भट्टेनतु तन्मतद्वयं मनसि निधाय द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेष-समवायाभावास्सप्तपदार्था इति विभागः कृतः । मीमांसकैः अभावः अधिकरणात्म-कत्वेनाङ्गीकृतः । इति दिङ्मात्रमुदाहतम् ।

प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दार्थापत्त्यनुपलब्धयः पदार्थग्राहकप्रमाणानि।

शक्तिग्रहं व्याकरणोपमानकोशाप्तवाक्याद्ययवहारतश्च ।
वाक्यस्य शेषात् विवृते वदन्ति सान्निध्यतस्सिद्धपदस्य वृद्धाः । इत्या-दिश्लोकोक्तानि पदशक्तिग्राहकानि ।

संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्यं विरोधिता, इत्यादिना मदीयदीपिकाटीकायां सोदाहरणं प्रदर्शितानि, संयोगादीनि शक्तौ तात्पर्यग्राहकानि । मीमांसायां श्रुतिलिङ्ग-वाक्यप्रकरणस्थानसमाख्यारूपाणि कर्माङ्गत्वग्राहकानि षट्प्रमाणानि, एषु पूर्वपूर्वत्य प्राबल्यं उत्तरोत्तरस्थ दौर्बल्यम्, श्रुत्य-र्धपाठस्थानमुख्यप्रवृत्तिक्रमाख्यानि कर्मक्रम-बोधकानि षड्ग्राह्याणि, एष्वपि पूर्वपूर्वस्य प्राबल्यम् । तत्प्रख्य तद्व्यपदेश योग वाक्यभेदाख्यानि चत्वारि नामधेयनिमित्तानि ।

उपक्रमोपसंहारौ अभ्यासोऽपूर्वताफलम् ।
अर्थवादोपपत्तीच लिङ्गं तात्पर्यनिर्णये ॥

इति श्लोकोक्तान्युपक्रमादीनि ग्रन्थतात्पर्यग्राहकाणि ।

इतःपरं धर्मशास्त्रीयो विचारस्संग्रहेण क्रियते । धर्मशास्त्रेश्रुतिस्मृतिसदाचाराणां त्रयाणां धर्मग्राहकप्रमाणत्वं सर्वसंमतामनुनातु—

वेदोखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीलेच तद्विदाम् ।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च ॥

इत्यादिना शीलात्मतुष्टिभ्यां साकं पञ्चप्रमाणाण्यङ्गीकृतानि तत्र श्रुतिर्वेदः प्रसिद्धः । स्मृतिः धर्मशास्त्रेतिहासपुराणादीनि । वेदार्थविदां सम्भावनीयताहेतुरात्म-गुणसम्पद्रूपं सच्छीलमपि प्रमाणम्, यथा, युधिष्टिरस्य यक्षरूधारिधर्मात् एको-दरभीमाद्यनादरेण भिन्नोदरनकुलजीवितवरणादिरूपम् । वेदार्थविदामाचारोनाम शौचा चमनादिरूपः । तादृशानां परमधार्मिकाणां मनस्तुष्टिश्च प्रमाणम् । सैवात्मतुष्टि-रित्युच्यते, यथा धर्मत्वेन संशयिते प्रमाणान्तरागोचरेऽर्थे परमधार्मिकस्य अयमेव धर्मो भविष्यतीति या मनस्तुष्टिः (अन्तःकरणप्रवृत्तिः) सा आत्मतुष्टिः, वैकल्पिकेषु पदार्थेषु यस्मिन् गृह्यमाणे आत्मनः प्रीतिः सैवात्मतुष्टिरिति भावः । अस्मिन्नर्थे कालिदासम्—

"सतांहि सन्देहपदेषु वस्तुषु, प्रमाणमन्तःकरण प्रवृत्तयः" ॥ इति वचन-मुपस्थाप्यते ॥

सिद्धेचैवं श्रुतिस्मृत्यादीनां प्रामाण्ये पूर्वपूर्वस्य प्राबल्यं उत्तरोत्तरस्य दौर्बल्यञ्च वेदितव्यम् ।

तत्र वचनानि मनुः— "श्रुतिद्वैधन्तु यत्र स्यात्तत्र धर्मावुभौ स्मृतौ ॥
गौतमः— "तुल्यबलविरोधे विकल्पः"
लोकाक्षिः— 'श्रुतिस्मृतिविरोधेतु श्रुतिरेव गरीयसी,
चतुर्विंशतिमते— 'स्मृतेर्वेदविरोधेतु परित्यागो यथा भवेत् ।
तथैव लौकिकं वाक्यं स्मृतिबाधात्परित्यजेत्,
लोकाक्षिः— श्रुतिस्मृतिविहितो धर्मः, तदलाभे शिष्टाचारः प्रमाणम्,
— 'श्रुतिस्मृतिपुराणेषु विरुद्धेषु परस्परम् ।
पूर्वं पूर्वं बलीयस्यादिति न्यायविदो बिदुः,
व्यासः— तस्माद्विरोधे धर्मस्य विचार्य गुरुलाघवम् ।
यतो भूयस्ततो विद्वान् कुर्याद्धर्मविनिर्णयम् ॥

शिष्टलक्षणं बोधायनः— 'शिष्टाः खलु विगतमत्सराः निरहंकाराः
कुभीधान्या अलोलुपाः दम्भदर्पलोभमोहक्रोधविवर्जिता इति,

धर्मलक्षणम्— 'चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः,

विश्वामित्रः— यमार्याः क्रियमाणन्तु शंसन्त्यागमवेदिनः; ।
सधर्मोयं विगर्हन्ते तमधर्मं प्रचक्षते,

व्यासः— सत्यं दमः तपश्शौचं सन्तोषो ह्रीः क्षमार्जवम् ।
ज्ञानं शमो दया ध्यानं एष धर्मस्सनातनः ।।

सदाचारलक्षणम्— सदाचारवतां पुंसां जितौ लोकावुभावपि ।
साधवः क्षीणदोषाः स्युः सच्चब्दिः साधुवाचकः
तेषामाचरणं यत्तु सदाचारस्सउच्यते ।
(इति विष्णुपुराणे)
यस्मिन् देशे य आचारः पारम्पर्यक्रमागतः ।
श्रुतिस्मृत्यविरोधेन सदाचारस्सउच्यते ।।
(इति संस्कारमंजर्याम्)
सदाचारेण देवत्वं ऋषित्वञ्च तथैवच ।
प्राप्नुवन्ति कुयोनित्यं मनुष्यास्तीद्विपर्यये ।।

वशिष्ठः— आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः ।
यद्यप्यधीतास्सह षड्भिरङ्गैः ।।
येनास्य पितरो याताः येन याताः पितामहाः ।
तेन यातात्सतां मार्गः, तेन गच्छन्नदुष्यति ।।
यत्र श्रुत्यादयो न सन्ति तत्र परिषद्वचनं प्रमाणमित्याह ।।

मनुः— अनाम्नातेषु धर्मेषु कथं स्यादितिचेद्भवेत् ।
यं शिष्टा ब्राह्मणा ब्रूयुः स धर्मः स्यादशङ्कित ।।

गौतम— अनाम्नाते दशावरैश्शिष्टैरूहवद्भिः प्रशस्तं कार्यमिति ।
यतैः प्रशस्तमित्युक्त तत्कार्यमिति तदर्थः ।।

याज्ञवल्क्यः— चत्वारो वेदधर्मज्ञाः परिषत्त्रैविद्यमेव वा ।
सा ब्रूते यं स धर्मः स्यात् एको वाध्यात्मवित्तमः ।।

त्रैविध्यमित्यनेन ऋगादिवेदत्रयज्ञाः धर्मज्ञाश्च त्रयोवा परिषदित्यभिप्रायः।

अस्मिन्नर्थे श्रुतिः— ये तत्र ब्राह्मणास्सम्मर्शिनः, युक्ता आयुक्ताः, आलूक्षा
धर्मकामास्स्युः, यथा ते तत्र वर्तेरन्, तथा तत्र
वर्तेधाः इति ।

तच्च श्रुत्यादिवत्प्रमाणमित्याह यमः—
वेदाः प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणं वेदार्थयुक्तं वचनं प्रमाणम्,
यस्य प्रमाणं न भवेत्प्रमाणं कस्तस्य कुर्याद्वचनं प्रमाणं।। इति ।।

पराशरः— त्रैविद्यो हैतुकस्तर्की ह्यङ्गविद्धर्मापारगः ।
त्रयश्चाश्रमिण पूर्वे परिषदेषा दशावरा ।
अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम्।
सहस्त्रशरसमेतानां परिषत्त्वं न विद्यते ।
यां यां वेदविदो ब्रूयुः त्रयोप्येनस्सु निष्कृतिम् ।
सा तेषां पावनाय स्यात् पवित्रं विदूषां हि वाक् ।

एतदत्यल्पपापविषयकम् । पातकेतु शतं परिषत् । सहस्त्रं महदादिषु ।
उपपातकेतु पञ्चाशत् । स्वल्पे स्वल्पं तथा भवेत् ।

बोधायन— बहुद्वारस्य धर्मस्य सूक्ष्मा दुरनुगा गतिः ।
तस्मादवाच्यो ह्येकेन बहुज्ञेनापि संशये ।।
(इदं महापापप्रायश्चित्तनिर्णये ग्राह्यम्)

याज्ञवल्क्य— अज्ञेभ्यो ग्रन्थिनः श्रेष्ठाः ग्रन्थिभ्यो धारिणो वराः ।
धारिभ्यो ज्ञानिनः श्रेष्ठाः ज्ञानिभ्यो व्यवसायिनः ।।
एकोपि वेदविद्धर्मं यं विपश्येद्विचरणः ।
स एव परमो धर्मो नाज्ञानामुदितोदितैः।।

बोधायनोपि— धर्मशास्त्ररथारूढाः वेदखड्गधरा द्विजाः ।
क्रौडार्थमपि यं ब्रूयुः सधर्मः परमो मतः ।।

प्रचेताः— अमीमांसा बहिश्शास्त्राः येचान्ये वेदवर्जिताः ।
यत्ते ब्रूयुः न तत्कुर्यात् वेदाद्धर्मो विधीयते ।।

धर्मविप्रतिपत्तौ सुमन्तुः— यत्र शास्त्रगतिर्भिन्ना सर्वकर्मसु भारत ।
उदितेऽनुदितेचैव होमभेदो यथा भवेत् ।

तस्मात्कुलक्रमायातमाचारंत्वाचरेद्बुधः ।
स गरीयान्महाबाहो धर्मशास्त्रोदितादपि ॥ इति ।

धर्मज्ञसमयोपि प्रमाणमित्याह आपस्तम्बः— धर्मज्ञसमयः प्रमाणं वेदाश्चेति। यः स्वकुलपरम्परायात आधारः स सम्प्रदाय इत्युच्यते सम्प्रदायस्यापि धर्मशास्त्राविरुद्धत्वे सन्मार्गवृत्तित्वेच प्रामाण्यं वेदितव्यम् ।

इत्येवंविधान्यत्यावश्यकानि प्रमाणवचनान्यालम्बनीकृत्य पर्यवसन्नमावेदयामि यथामति। तथाहि— श्रुतिस्मृतिसदाचाराणां त्रयाणां सम्मतो धर्मः निर्विशंकमनुष्ठेयतां भजते, यथा यागादिः आचारविरुद्धोऽपि श्रुतिस्मृत्यनुमतश्चेन्निर्विशङ्कमनुष्ठेय एव, प्रबलप्रमाणमूलकत्वेन प्रत्यवायशङ्काविरहात्। क्वचिद्देशे निन्द्यमानोपि क्वचन देशे अभिनन्द्यमानोपि "मातुल्य सुतामूढ्वा मातृगोत्रां तथैव च। समानप्रवरांचैव स्पृष्ट्वा चान्द्रायणं चरे" दित्यादिस्मृत्या गर्ह्यमाणोपि मातुलसुतापरिणयः "तृप्तां जहुर्मातुलस्येव योषाभागस्ते पैतृष्वसेयी वपामिव" इति श्रुत्यनुमतत्वादनुष्ठेय एवेति बहूनामभिप्रायः, तथाच स्मृत्याचारविरुद्धोपि धर्मः श्रुत्यनुमतश्चेदनुष्ठेय एवेति भावः। श्रुतिस्मृत्युभयविरुद्धः श्रुतिविरुद्धः स्मृतिविरुद्धोवा आचारः न प्रमाणम्। श्रुतिविरुद्धा स्मृतिरपि न प्रमाणमेव। अतः श्रुतिस्मृत्याचारेषु पूर्वपूर्वस्य प्राबल्यं उत्तरोत्तरस्य दौर्बल्यञ्च वेदितव्यम्। अतः स्मृतिविरुद्धोपि श्रुतिसम्मतआचारः प्रमाणमेव। श्रुतिविरुद्धश्चेत् स्मृत्यनुमतोपि नाचारः प्रमाणमिति वेदितव्यम्। एषु पूर्वपूर्वस्य प्राबल्येन आचारानुरूपायाः स्मृतेः स्मृत्यनुरूपायाः श्रुतेर्वाऽनुपलम्भे स्मृत्याद्युत्तरोत्तरेण श्रुतिपर्यन्तं पूर्वपूर्वकल्पनाद्वारैव स्मृत्याचारयोः प्रामाण्यम्, अवेदमूलकस्य प्रामाण्यविरहात्, तथाच आचारेण स्मृतिमनुमाय स्मृत्यातु तादृशी श्रुतिरनुमेयेति सिद्धम्। एवमेव श्रुतिलिङ्गवाक्यप्रकरणस्थानसमाख्यारूपकर्माङ्गत्वग्राहकप्रमाणेष्वपि उत्तरोत्तरस्य श्रुतिपर्यन्तं पूर्वपूर्वसर्वकल्पनाद्वारैव प्रामाण्यम् (नहि केवलश्रुतिः कल्पनीया उत्तरोत्तरेण) अश्रुतिमूलकस्य प्रामाण्यविरहात्। एषु षट्स्वपि पूर्वपूर्वस्यैव प्राबल्यं उत्तरोत्तस्य दौर्बल्यमेव तथाच तुल्यबलविरोधे विकल्पस्य व्यवस्थापितत्वेन तुल्यबलयोः (अर्थवादभिन्नयोः) श्रुत्योः द्वयोरेव विरोधेवा तादृशयोः स्मृत्योरेव वा विरोधे विकल्पो ग्राह्यः, तथाच श्रुत्योरेव विरोधे श्रुतिविहितस्य धर्मद्वयस्यापि परिग्राह्यतया एकेन तद्द्वयस्यानुष्ठातुमशक्यतया (क्वचिच्छक्यत्वप्युभयानुष्ठानस्य अनुचिततयाच) यथा कल्पसूत्रं व्यवस्थितविकल्पेन एक एव धर्मोनऽनुष्ठेयः। स्मृत्योर्विरोधेतु देशाचाराद्व्यवस्थया बहुशिष्टसम्मत्या स्वमनःप्रवृत्त्यनुरोधेनवा विकल्पो

निर्वाह्यः, तथाच स्वदेशाचारबहुशिष्टसम्मत्योरपरिज्ञाने सङ्कटेषु एकस्मिन् पक्षे निरोभनिवेशेन ऊहवता विदुषा स्वान्तःकरणप्रवृत्तिः प्रमाणीकार्या। श्रुतिविरोधे उदाहरणन्तु "उदिते जुहोति अनुदिते जुहोति "उदितानुदिते जुहोतीत्यादिकं बोध्यम्। श्रुतिस्मृत्योर्विरोधेतु श्रुतिरेव गरीयसीति सुप्रसिद्धोह्ययं विषयः। किन्तु बहूनां श्रुतीनां स्मृतीनांवा विरुद्धार्थद्वयविषयकत्वे अवगते तदा अर्थवादभिन्नश्रुतिस्मृतिभूयस्त्वं (श्रुतिस्मृत्यादिनिष्ठाधिकसंख्यां) लाघवञ्चानुसृत्य धर्मनिर्णयः कार्यः। यदि श्रुतिस्मृत्याचारैरनवगते कस्मिंश्चिन्नूत्ने विषये संशयः स्यात् तदा तद्विषयानुसारेण प्रवर्त्यमानायां सभायां बहुपण्डिताभिप्रायमनुसृत्य धर्मनिर्णयेन स संशयोऽपनेयः। यदि स्वके देशे नगरे जनपदेवा नूतनधर्मे संशये तद्देशस्थानां तन्नगरस्थानां तज्जनपदस्थानाञ्च पक्षपातरहितानां धर्मज्ञानां विदुषां बहूनां सम्मतिमनुरुध्य धर्मनिर्णय कार्यः। यदि तत्र न बहूनां धर्मज्ञानां समावेशावकाशः तदा स्वकुलीनस्यान्यस्यवा तदा तत्रोपलब्धस्यात्मविदो वेदार्थविदः कर्मठस्य वा तदन्यतमस्य एकस्यैव सकाशात् अथवा स्वकुलीनस्य धर्मविदः अथवा स्वकुलवृद्धस्य स्वेन पक्षपातराहित्येन मन्यमानस्य यूनोवा अन्तिकस्थस्य विदुषस्सकाशात् अविदुषा पुरुषेण धर्मनिर्णयस्सम्पाद्यः। विदुषातु तदा आत्मतुष्ट्या धर्मोनिर्णयः। अविद्वत्प्राये ग्रामे स्थितेन अविदुषातु तादृशनूतनविषये संशयं तदा समुपस्थितस्य कस्यचन वृद्धस्य बहुमानपात्रस्यमुखादपनीय तद्धर्मकृत्यं निर्वर्त्य समनन्तरं विशेषविदो मुखात्सविषयो निर्धार्यः। कदाचिद्धर्मनिर्णये परमधार्मिकस्य शीलमपि प्रमाणीकार्यम्। शीलनाम यस्य कस्यापि धार्मिकस्य यदा कदापि सम्भूत प्रवर्तना (अनुष्ठानं) आचारोनाम तत्कुलपरम्परायातोनुष्ठानप्रकारः सम्प्रदायापरपर्यायः इति शीलाचारयोर्भेदोऽवगन्तव्यः। ननु शीलस्य कथं प्रामाण्यम्, तथात्वे 'कतक (कथित) भरद्वाजौ व्यत्यस्य भार्ये जग्मतुः 'वशिष्ठश्चण्डालीमक्षमालीम् प्रजापतिःश्च स्वां दुहितरं 'परशुरामेण पितृवचनानुसारिणा मातृश्शिरश्छिन्नं इन्द्रचन्द्रावहल्यातारे जग्मतुः इत्यादिवाक्यबोधितदुश्शीलानामपि प्रामाण्यप्रसङ्गादितिचेन्न, तपस्विनां महात्मनां शीलानि निदर्शिनीकृत्य तत्साम्येन दुर्बलैरतापसैर्मानवैः तादृशशीलस्य परिग्रहीतुमशक्यत्वात्। तत्रार्थे मन्वादिवचनान्युदाह्रियन्ते—

धर्मव्यतिक्रमो दृष्टः महतां साहसं तथा ।
तदन्वीक्ष्या प्रयुञ्जानः सीदत्यवरजोऽपरः ॥

तेजोमयानि पूर्वेषां शरीरोणीन्द्रियाणिच ।
दोषैस्तेनोपलिप्यन्ते पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥

श्रुतिश्च— तद्यथैषीकातूलमग्नौ प्रोतं प्रदूष्येत एवंहास्य सर्वे पाप्मानः प्रदूष्यन्ते इति ।

बोधायन— अनुष्ठितञ्च यद्देवैः मुनिर्भियदनुष्ठितम् ।
नानुष्ठेयं मनुष्यैस्तदुक्तं कर्म समाचरेत् ॥

इत्याद्यनेकवचैनः देवमुन्माद्यनुष्ठानसाम्येन लोकविरुद्धस्य प्रत्यवायकरस्य मनुष्याद्यनुष्ठानस्य सर्वात्मना निषिद्धत्वात् । नन्वात्मविदां महात्मनां तेषां तादृशविरुद्धकर्मानुष्ठानेन पुण्यपापानुदयेन क्षतिविरहेपि श्रेष्ठैन्तैराचरिते कर्मणि प्रायेण सामान्यस्य प्रवृत्त्यवश्यम्भावेन तादृशैरनुग्राह्यस्य लोकसंग्रहस्य भङ्गस्य दुष्परिहारतया कुतस्तैस्तथानुष्ठितमितिचेन्न, प्रबलतमस्य प्रारब्धकर्मणो दुर्निवारतया तद्वशेन तैस्तथानुष्ठितत्वात् । ननु किमिदं प्रारब्धं कर्म भोगात् निवारयितुं शक्यते नवा, नाद्यः पक्षः प्रारब्धंभोगतो नश्येदित्याबालवृद्धं विदितचरस्य शास्त्रीयबचनस्य विरोधात् । न द्वितीयः प्रारब्धस्य प्रारब्धकर्मणा प्रवर्त्यमानस्य व्याध्यादेर्वा निवारणार्थे 'पूर्वजन्मकृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते । तच्छान्तिरौषधैर्दानैः जपहोमार्चनादिभिः। इत्यादिना निर्दिष्टानामौषधादीनां लोकेतत्प्रवृत्तेश्च वैयर्थ्यात्, तस्य भोगंविना अप्रतीकार्यत्वश्रवणात् । इतिचेन्न, प्रारब्धस्य सर्वात्मना प्रतीकार्यत्वविरहेपि तद्गतस्य दार्ढ्यापरपर्यायस्य प्राबल्यस्य जपादिभिः प्रतीकार्यत्वात् । अन्यथा आयुर्वेदादिनां नैरर्थक्यप्रसङ्गात् । 'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी...उद्योगः खलु कर्तव्य इत्यादिनां पौरुषावश्यकताबोधकानां लोकशास्त्रसम्मतानामुक्तीनां जाग्रतीनामपि प्रारब्धकर्मतुल्यं 'प्रारब्धं भोगतो नश्ये' दिति वचनमेकमवलम्ब्य वैदिके लौकिकेच कर्मणि उदासीनानां केषांचिदभिप्रायाः समालोचनाविधुरा धर्मविघटका अनर्थकरा जीवयात्रापरिपन्थिनश्चेत्यवगन्तव्यम् । नच तर्हि (प्रारब्धप्राबल्यस्य प्रतीकार्यत्वे) केनवा प्रकारेण प्राबल्यस्य तस्योपशान्तिरिति वाच्यम्, इह शरीरे स्वल्पभोगजननेन स्वप्नादिभोगजननेन वा तत्प्राबल्यस्य जपादिभि परिक्षणिताया अङ्गीकृतत्वात् । (अभिप्रायोऽयं माधवाचार्येण सूचितः पराशरस्मृतिव्याख्यायां नच तर्हि मुनिभिः तपोमहिम्ना तत्प्राबल्यस्य निवारयितुं शक्यतया कुतस्तादृशं लोकगर्हितं कृतं कर्मेति वाच्यम् । फलान्यथाभावादर्शनेन तत्प्रारब्धप्राबल्यस्य तपोमहिम्नाप्यप्रतीकार्यत्वस्य स्वीकार्यत्वात् । तथाच तत्प्राबल्यं क्वचित्पर्याप्त-

जपादिकारणसामग्रीतो नश्यति क्वचिन्नश्यतीत्यपि फलानुरोधादङ्गीकार्यम् । जपादीनां पर्याप्तताच तत्तद्रोगानुसारेण शान्तिविधायकतत्तच्छास्त्रानुसारेणावगन्तव्या । नच सर्वदा जपादिभिः व्याधिनाशाङ्गीकारे व्याधिफलस्य मरणस्य प्रसक्तिरेव नस्यादिति वाच्यम्, अकालमरणप्रयोजकानां व्याधीनां निवृत्तावेव जपादीनां कारणत्वाङ्गीकारात्, कालमरणस्यतु जन्यमात्रस्यालंहयत्वात् । अथवा व्याधिनि-वृत्तावेव जपादीनां कारणत्वस्याभिहितत्वात् मरणप्रतिबन्धे तेषां कारणताया अनभिहितत्वाच्च नानुपपत्तिः ।

ननु कालानुगुण्येन धर्मशास्त्रस्य परिवर्तनकरणे कः प्रत्यवाय इतिचेन्न, सर्वज्ञानां मुनीनामेव तादृशाधिकारस्य धर्मशास्त्रे व्यवस्थापितत्वेन अन्येषां तदधिकारस्य निषिद्धत्वात् । तथाच धर्मनिर्णये श्रुतेरनुपलम्भे स्मृतिः द्वयोस्तयोरनुपलम्भे सम्प्रदायापरनाम सदाचारः तेषां त्रयाणामनुपलम्भे परमधार्मिकस्य शीलं तेषां चतुर्णामनुपलम्भे वैकल्पिके नूतने शास्त्रागोचरे वा विषये आत्मतुष्टिश्च प्रमाणीकार्या धर्मविदेति सिद्धम् । अतः श्रुतिस्मृत्यादिनिरतैः सदाचारसम्पन्नैः सुशीलैः; सन्तुष्टात्मभिः सत्यदानदयाशौचादितत्परैः भगवद्भक्तैः द्विजन्मभिः सर्वैभवितव्यमिति धर्मशास्त्रस्य तात्पर्यमिति वेदितव्यम् ।

स्मृत्यन्तरस्य मनुस्मृत्यादिविरोधे मनुस्मृतिरेव प्रबला "मन्वर्थविपरीतातु या स्मृतिस्सा न शक्यते इति स्मृतेः "यद्वै किञ्च मनुरबदत्तद्भेषजमिति श्रुतेश्च । नन्वेवं "कृतेतु मानवा धर्माः त्रेतायां गौतमाः स्मृताः द्वापरे शङ्खलिखिताः, कलौ पाराशरा, स्मृताः, इति वचनबलेन मानववचनापेक्षया कलौ पाराशरवचनस्य प्राबल्यस्य अवगम्यमानतया कथं मानववचनस्य प्राबल्यसिद्धिः । "कलौ पाराशरा स्मृताः" इति विशेषवचनानुसारेण पाराशरवचनस्यैव प्राबल्यस्य समुचितत्वादिति चेन्न, इष्टापत्तेः (पराशरवचनप्राबल्यस्येष्टत्वादित्यर्थः) नन्विदमसङ्गतम्, स्मृत्यपेक्षया श्रुतेः प्राबल्यस्य सर्वसम्मतत्वेन "कलौ पाराशरा इति स्मृत्यपेक्षया "यद्वै किञ्चेति श्रुतेः" प्राबल्येन प्रबलश्रुत्युक्तमानववचनापेक्षया पाराशरवचस्य प्राबल्यं दुर्निरूपमिति चेन्न, पाराशरमहिम्नोपि श्रुत्यभिमतत्वात् । नच कथं तस्य श्रुत्यभिमतत्वमिति वाच्यम्, पराशरपुत्रत्वहेतुना वेदव्यासमहिमप्रशंसनद्वारा पराशरस्तुतिपरया "सहोवाच व्यासः पाराशर्य' इति श्रुत्या वाजसनेयशाखायां वंशब्राह्मणे वेदसम्प्रदायप्रवर्तकगुरुशिष्यपरम्पराप्रतिपादिकया 'निर्घृतकौशिकाद्धृतकौशिकः, पाराशर्यायणात् पाराशर्यायणः, पाराशर्यात्पाराशर्यः" इति श्रुत्याच तन्महिम्नो मन्वादिमहिमसाम्येन प्रतिपादितत्वात् । नच मनुपराशरयोः तन्महिम्नोश्च साम्येन

वेदप्रतिपादितत्वेपि "यद्वै किञ्चमनुरवदत्" इति प्रत्यक्षश्रुत्या मानत्ववचनप्रामाण्यस्येव पाराशरवचनप्रामाण्यस्य प्रत्यक्षश्रुत्या अनभिहिततया मनुवचनसाम्येन पाराशरवचनस्य प्रामाण्यं दुर्ग्रहमेवेति वाच्यम्, पाराशरवचनप्रमाण्यप्रतिपादकप्रत्यक्षश्रुतिविरहेपि श्रुतिप्रतिपादितपाराशरगुरुत्वस्य तद्वचनप्रामाण्यान्यथानुपपत्त्या वंशब्राह्मणीयश्रुतेः प्रत्यक्षश्रुतितुल्यताया अव्याहतत्वेन कलौ पाराशराः स्मृता इति विशेषवचनबलेन च मनुस्मृत्यपेक्षया पराशरस्मृतेरेव कलौ प्रबलत्वात् । ननु स्मृत्यन्तरीयविशेषवचनबलेन पराशरस्मृतेः मनुस्मृत्यपेक्षया प्राबल्यनिरूपणमुचितं स्यात् कलौ पाराशरा इति तदीयवचनानुसारेण तदीयवचनस्यैव प्राबल्यनिर्णयोऽनुचित इति चेन्न । द्वेषरागिषु तदीयवचनानुसारेण तदीयवचनस्य प्रामाण्यनिरूपणस्यानुचितत्वेपि अद्वेषरागेष्वविकत्थनेषु तदीयवचनानुसारेणापि तद्वचनस्य प्रामाण्यस्वीकारे क्षत्यभावात्। किञ्च माधवाचार्येण (विद्यारण्यस्वामिना) "यद्वै किञ्चमनुरिति श्रुतेरर्थमनुवचनप्राशस्त्यपरार्थवादत्वस्य शङ्कितत्वेन वंशब्राह्मणे अर्थवादत्वशङ्काविरहेणच मनुवचनापेक्षया पाराशरवचनस्य कलौ प्राबल्ये क्षत्यभावात् । किञ्च "कलौ पाराशराः स्मृताः, इति वचनस्य धर्मसङ्कोचपरतयामनुवचनापेक्षया प्राबल्यविरोधौ नस्त इतिबहूनामभिप्रायः । प्रायेण स्मृतिकाराणां याज्ञवल्क्यादीनां श्रुतिप्रतिपादिततया साम्येन तदीयानां सर्वासां स्मृतीनां प्रामाण्यं निर्विवादमेवेत्यवगन्तव्यम् ।

किमिदं धर्मशास्त्रं (स्मृतिपुराणेतिहासादि) गुरुमुखादध्येतव्यं आहोस्वित् स्वपाण्डितीमहिम्ना साधनीयमिति शङ्कायां स्वपाण्डित्ये न साधने कुत्रचित्कदाचिद्धर्मे प्रमादः सम्भवेदित्याशयाना मुनयः वेदवद्धर्मशास्त्रमपि गुरुमुखादध्यसनीयमित्याहुः । तत्र व्यासहारीतौ ।

धर्मशास्त्रं सदा पाठ्यं ब्राह्मणैश्शुद्धमानसैः ।
वेदवत्पठितव्यञ्च श्रोतव्यंच दियानिशम् । इति ।

ननु वेदस्य गुरुमुखात्पठनीयत्वे सिद्धे किल तद्वद्धर्मशास्त्रस्यापि गुरुमुखाधीनपाठ सिद्ध्यति तदेव न सम्भवतीतिचेन्न, 'स्वाध्यायोऽध्येतव्य इति श्रुतेरेव गुरुमुखाद्वेदाध्ययनस्य कर्तव्यतायां प्रमाणत्वात् । नच तच्छ्रुतेरपि कथं तादृशार्थबोधकत्वमिति वाच्यम्, तच्छ्रुतेः मीमांसकैः अध्ययनेन स्वाध्यायं भावयेत् (सम्पादयेत्) इत्यर्थस्य निर्णीतत्वात् । तत्र अध्ययनंच गुरुमुखोच्चारणानूच्चारणं (गुरुमुखोच्चारणाधीनोच्चारणं) इति सर्वसम्प्रतिपन्नंहि अस्मिन्नर्थे 'वेदस्याध्ययनं सर्वं गुर्वध्ययनपूर्वकं वेदाध्ययनसामान्यात् अधुनाऽध्ययनंयथेति वचनञ्च प्रमाणम् ।

तथाच गुरुमन्तरा बुद्धिमतापि पुस्तकादिसाहाय्येन वेदो न सम्पाद्य इति सिद्ध्यति । अन्यथा अपरिहार्यः स्यात् प्रत्यवायः । नन्वनेन विधिवाक्येन किं वेदैकदेशस्याध्ययनं सिद्ध्यति आहोस्वित् कृत्स्नस्य वेदस्याध्ययनमितिचेन्न । "असति बाधके उद्देश्यविधेयभावस्थले उद्देश्यतावच्छेदकव्यापकत्वं विधेयांशे भासतइति नियमानुसारेण अध्ययनरूपे विधेये उद्देश्यतावच्छेकस्वाध्यायत्वव्यापकत्वस्याङ्गीकार्यतया कृत्स्नवेदस्याध्ययनं सम्पादनीयमिति सिद्ध्यति । नच तर्हि किमर्थोयमर्थवादानां निरर्थानामध्ययनायास इति वाच्यम्, तेषामपि स्तुतिनिन्दान्यतरबोधनद्वारा विधेयप्राशस्त्यबोधकतया विधिवाक्यैकवाक्यतापन्नत्वेन निरर्थत्वाभावेन तदध्ययनस्याप्यपरिहार्यत्वात् । किञ्च प्रभुसम्मितायाः "स्वाध्यायोऽध्येतव्य इति विधायकश्रुतेरेव कृत्स्नवेदस्याध्ययनस्य कर्तव्यतायां नियामकत्वाच्च । सङ्कोचे प्रमाणाभावात् । श्रुतिविहितमर्थं कोवाऽन्यथयितुं शक्नोति? एवञ्च सर्वो वेदः गुरुमुखादेव संसाधनायः नान्ययत्नेन सम्पाद्य इति पर्यवस्यति ।

आर्याः ! पाठकमहाशयाः ! क्षम्यतामयमपराधः यत् न्यायशास्त्रे प्रसक्तानुप्रसक्त्या धर्मशास्त्रीयोऽपि विचारस्संग्रहेणादृशः । अपिच सर्वेषां शास्त्राणां मोक्षे तदौपयिके कर्मानुष्ठानादौ किलोपयोगः; धर्मशास्त्रपरिज्ञानमन्तरा नहि कर्मानुष्ठातुं शक्यम् । तद्धि परिज्ञानं श्रुत्यादीनां प्राबल्यदौर्बल्यपरिज्ञानमन्तरेण दुष्प्रापमिति प्रसङ्गेन विषय एतावान् विचारितः । अतो नानौचित्यं सम्भावयन्तु निरसूयाः कृपालवो गुणगृघ्नव इति शिवम् ।

अन्याच काचन विज्ञप्तिः—

प्रकृत्या सप्रमादा हि मानुषाणां मतिः, तत्रापि श्रुयते "प्रमादो धीमतामपि" इति लोकोक्तिरपि स्थिते चैवं किमु— वक्तव्यमविशेषविदो मादृशस्य सामान्यस्यासहायस्य विद्वच्चरणपरमाणोः सप्रमादा स्यान्मनीषेति "मन्दः कवियशः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्, इति कालिदासीयं वचनं मय्यन्वर्थमिति विज्ञानतापि भगवत्सङ्कल्पप्रेरितेन मया यथामति प्रणीते ग्रन्थे विद्यमानान्यज्ञानविलसितानि प्रसादं स्वयं परिशोध्य गुणानत्रत्यान् मनसि कृत्य कृतार्थयन्तु मां निरसूयास्सहृदयास्सदयास्सुधिय इति सांजलिबन्धमभ्यर्थये भूयो भूय इति शम् ॥

श्रीमत्त्रिलिङ्ग (श्रीमदान्ध्र) देशविराजमानगुण्टूरुमण्डलान्तर्वर्ति कृष्णातटिनीसमीपवर्ति वेमूरुग्रामवास्तव्येन न्यायवेदान्ततन्त्रसमुपलब्धनिरवधिकप्रज्ञाविशेषवेमूर्युपनामकरामब्रह्मसुधन्द्रिगुरुवरपदपङ्कजसेवासमधिगतविज्ञानेन कुरुगण्ट्युपनामकसूर्यनारायणशर्मद्वि

तीयतनयेन कन्नमाम्बागर्भसम्भूतेन वेङ्कटरामशास्त्रिणः कनि
ष्ठसोदरेण नरसिंहावधानिनो ज्येष्ठसोदरेण श्रीसुब्बलक्ष्मी
राज्यलक्ष्मी कनकदुर्गा शारदानामकपुत्रीचतुष्टयसमन्वितेन
श्रीवेङ्कटेश्वरशास्त्रिणस्ताप्तेन श्रीसुब्बलक्ष्मीपरिग्रहेण तर्क
संग्रहसर्वस्व दीपिकासर्वस्व पञ्चलक्षणीसर्वस्व-
कारेण यजुश्शारवाध्यायिना हरितसगोत्रेण-
कुरुगण्टिश्रीरामशास्त्रिणाप्रणीतस्य
भगवदर्पितस्य पारिभाषिकपदार्थ
संग्रहस्य समाप्तिमंगमत् ॥
सर्वं श्रीहरि हर गणपति दक्षिणामूर्ति
देवतार्पणमस्तु ॥

हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

कादम्बरी–आदितः शुकनासोपदेशान्तो भागः – डॉ० नर्मदेश्वर त्रिपाठी	१७०.००
अभिज्ञानशाकुन्तलम्–संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित– डॉ० धुरन्धर पाण्डेय	१३०.००
सनत्सुजातीयदर्शनम्–संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित– डॉ० धुरन्धर पाण्डेय	४०.००
तर्कसंग्रहसर्वस्वम् – कुरंगटि श्रीरामशास्त्री	१५०.००
पारिभाषिक-पदार्थ-संग्रह – कुरगंटि श्रीरामशास्त्री	१००.००
मीमांसा-तत्त्व-विवेक – श्रीश्यामसुन्दर शर्मा	१५०.००
श्रीरामचरितमहाकाव्यम् - डॉ छोटेलाल त्रिपाठी	४००.००
छन्दोलंकारसुधा - डॉ० प्रद्युम्न द्विवेदी	३५.००
पंचलक्षणीसर्वस्वम् – डॉ० विजय शर्मा	१५.००
उदयनकथाश्रित संस्कृत रूपक समीक्षात्मक अध्ययन – डॉ० उषा वर्मा	४००.००
तर्कसंग्रह–'दीपिका' न्यायबोधिनी, सिद्धान्तचन्द्रोदय, पदकृत्य, प्रतिबिम्ब, लघुबोधिनी, निरुक्ति, वाक्यवृत्ति, विरलासमन्वितः, ज्योत्स्नाख्याहिन्दीव्याख्या संवलितश्च – श्रीनिवास शर्मा	२५०.००
पाणिनिव्याकरणे मूर्धन्यादेशविधानविमर्शः – अखिलेश शुक्ला	३००.००
प्रौढ़मनोरमा–अजन्तपुलिङ्गादि से स्त्रीप्रयन्त भागः-संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित – पं० द्वारिकाप्रसाद द्विवेदी (द्वितीय भाग)	३००.००
काव्यप्रकाश–संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित – डॉ० त्रिलोकीनाथ द्विवेदी	(यंत्रस्थ)
मार्कण्डेय महापुराणम् –भाषा टीका सहित	(यंत्रस्थ)
गरुड़ महापुराणम् –भाषा टीका सहित	(यंत्रस्थ)
महानिर्वाण तंत्र–संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित – अजयकुमार उत्तम	(यंत्रस्थ)
महापुराण-समकथा-कोश – डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी	(यंत्रस्थ)
अलंकार-शास्त्र में रस सिद्धान्त का विकास – देवनारायण शर्मा	(यंत्रस्थ)
वैयाकरणभूषणसार –संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित–आचार्य देवदत्तशर्मोपाध्याय	(यंत्रस्थ)
नीतिशतक –संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित – डॉ० प्रद्युम्न द्विवेदी	(यंत्रस्थ)
क्यों – डॉ० धुरन्धर पाण्डेय	(यंत्रस्थ)

BHARATIYA VIDYA SANSTHAN

भारतीय विद्या संस्थान

प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

सी. 27/59, जगतगंज, वाराणसी-221002 (उ०प्र०)

पारिभाषिक पदार्थ-संग्रहः * मूल्य-१००/-